ब्राह्मणम्

तेतिरीय

# Colophon

This document was typeset using XaMTEX, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several MTEX macros designed by H. L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

### **Acknowledgements**

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http: //sanskritdocuments.org/ and https: //sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

#### FOR PERSONAL USE ONLY

NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

| अनुऋमणिका          |   |   |    |          |    | _  | _  |             |   |  |  |   | i   |
|--------------------|---|---|----|----------|----|----|----|-------------|---|--|--|---|-----|
|                    |   | 3 | न् | <b>₹</b> | )Ţ | ŦÌ | णे | <del></del> | Τ |  |  |   |     |
| अष्टकम् १          |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 1   |
| प्रथमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 1   |
| द्वितीयः प्रश्नः . |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 22  |
| तृतीयः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 36  |
| चतुर्थः प्रश्नः .  |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 53  |
| पञ्चमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 72  |
| षष्ठमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 89  |
| सप्तमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 109 |
| अष्टमः प्रश्नः .   | • |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  | • | 127 |
| अष्टकम् २          |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 138 |
| प्रथमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 138 |
| द्वितीयः प्रश्नः . |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 154 |
| तृतीयः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 173 |
| चतुर्थः प्रश्नः .  |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 188 |
| पञ्चमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 210 |
| षष्ठमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 223 |
| सप्तमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   | 250 |
| अष्टमः प्रश्नः .   |   |   |    |          |    |    | •  |             |   |  |  |   | 268 |
|                    |   |   |    |          |    |    |    |             |   |  |  |   |     |

| अनुक्रमणिका                       | ii  |
|-----------------------------------|-----|
| अष्टकम् ३                         | 291 |
| प्रथमः प्रश्नः                    | 291 |
| द्वितीयः प्रश्नः                  | 310 |
| तृतीयः प्रश्नः                    | 333 |
| चतुर्थः प्रश्नः                   | 354 |
| पञ्चमः प्रश्नः                    | 359 |
| षष्टमः प्रश्नः                    | 368 |
| सप्तमः प्रश्नः                    | 381 |
| अष्टमः प्रश्नः                    | 416 |
| नवमः प्रश्नः                      | 443 |
| 30 O                              |     |
| तैत्तिरीय आरण्यकम्                | 468 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः      | 468 |
| द्वितीयः प्रश्नः                  | 502 |
| तृतीयः प्रश्नः                    | 517 |
| चतुर्थः प्रश्नः                   | 531 |
| पञ्चमः प्रश्नः                    | 556 |
| षष्टः प्रश्नः ृ                   | 586 |
| सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली ्    | 600 |
| अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली | 606 |
| नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली          | 611 |
|                                   |     |

| अनुऋमणिका                       | iii            |  |  |  |  |  |  |  |
|---------------------------------|----------------|--|--|--|--|--|--|--|
| दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् | 615            |  |  |  |  |  |  |  |
| -0.0                            |                |  |  |  |  |  |  |  |
| कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम् |                |  |  |  |  |  |  |  |
| प्रथमः प्रश्नः                  | <b>651</b> 651 |  |  |  |  |  |  |  |
| द्वितीयः प्रश्नः                | 664            |  |  |  |  |  |  |  |
| तृतीयः प्रश्नः                  | 679            |  |  |  |  |  |  |  |
| <b>2</b>                        | 0,2            |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |
|                                 |                |  |  |  |  |  |  |  |

# ॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षुत्र र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। एष्ट्रिष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्ठ्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्ठ्र सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। पृष्ठ्र सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोंऽस् जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोविषा।
स्तुतोऽसि जनंधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः
प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोविषा। सञ्जग्मानौ दिव
आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे
जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥

व्यान र सन्धंत्ं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्धंत्ं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र र सन्धंत्ं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्धंत्ं तन्में जिन्वतम्। वाच् र सन्धंत्ं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ् आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञाये धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं य्ज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं युज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थूश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञायं

धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कल्पयंतं दैवीर्विशः। कल्पयंतं मानुषीः॥४॥

इष्मूर्जम्स्मास् धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यर्जमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुत्तौ शण्डामर्को सहामुनां। शुक्रस्यं समिदंसि। मन्थिनः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्राय सुतमा जुंहोमि॥५॥ न्युन्त्वपुनः सर्थन् त मे जिन्वतं प्रणं युज्ञायं धत्तं मार्नुषोत्विद्धं च। (ब्रह्मं क्षुत्रं तदिष्मूर्जः पृथं पृष्टं प्रजां तां पृष्ट्नान्थ्सर्थन्ं तत्र्णणमेपानं व्यानं त वक्षः श्रोतं मनुस्तद्वाचं ताम्। इपादिपश्चेक् वाचं

कृत्तिंकास्वग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमेवेनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुख्ं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो खलुं॥६॥

तां में पश्-थ्सन्धंत्तं तान्में प्राणादित्रितंये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥\_\_\_\_\_

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वात्रोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋध्नोत्येव। सर्वात्रोहाँत्रोहति। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिथ्सन्त॥७॥

पुनर्वस्वोरादंधत। ततो वै तान् वामं वसूपावर्तत। यः पुराऽभद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनर्वेनं वामं वसूपावर्तते। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकामा मे प्रजाः स्युरिति। स पूर्वयोः फल्गुन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥
अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमित् तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयेत भगी

तेषामनाहितोऽग्निरासीत्। अथैभ्यो वामं वस्वपाँकामत्। ते

ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामितिं। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगंस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तंरे फल्गुंनी। भृग्येव भंवति। कालुकुञ्जा वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वता पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्ता एषा में चित्रा नामेति। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयो-ऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थस्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्येव भ्रातृंव्यान्। ओजो बर्लमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो वै ब्रौह्मणस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥ यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो योनिमन्तमेवेनं प्रजातमार्धत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भवति। शरिद् वैश्य आदंधीत। शरिद्वे वैश्यंस्यर्तुः॥१२॥

स्व पृवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्नंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। पृषा वै जंघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित पृव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। पृषा वै प्रथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यदुत्तिरे फल्गुंनी। मुख्त पृव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमंत। अथादंधीत। सैवास्यर्ष्टिः॥१३॥ खल्वांधिथ्यन्त फल्गुंन्योगुप्निमादंधीतासम्भवतामृत्ना वेश्वंस्युर्त्कर्ते फल्गुंनी पदं॥———[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। पृतद्वा अग्नेवैंश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्थे। ऊषां निवंपति। पृष्टिवां पृषा प्रजनंनम्। यदूषाः॥१४॥

पुष्ट्यांमेव प्रजनेनेऽग्निमाधंत्ते। अथो संज्ञानं एव। संज्ञान् र् ह्यंतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौ सह यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासींत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥ यदस्या युज्ञियमासीँत्। तदमुष्यांमदधात्। तददश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषाँन्त्रिवपंन्नदो ध्यायेत्। द्यावांपृथिव्योरेव युज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्थे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य पृवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाकष्टीयत। ताभ्यः सूदमुपुप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सल्लिमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिम्द इं स्यादितिं। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँच्छित्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपूर्णेऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥

तत्पृंथिवये पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमतिं। तद्भूम्यै भूमित्वम्।

इत्यांहः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्याँश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्धे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा

यस्यं पर्णमयः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावं रुन्धे। देवा

वै ब्रह्मंत्रवदन्तं। तत्पूर्ण उपाश्यणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। प्रजापंतिरुग्निमंसृजत।

उंदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्धे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं

पर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्॥२३॥

तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ता शर्कराभिरद्द १ हत्। शं वै

नों ऽभूदितिं। तच्छर्कराणा । शर्कर्त्वम्। यद्वंराहविंहत । सम्भारो

भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्धारमग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

वर्रणस्य पत्नय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत्

अर्थो शुन्त्वार्य। सरेता अग्निराधेय इत्यांहुः। आपो

सों ऽबिभेत्र मां धक्ष्यतीतिं। त श्रम्यां ऽशमयत्॥ २४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छुंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छुंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहृंदयोऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिंहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहृंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊपां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्यदप्रथयद्भर्यं बीभथ्सत् इत्यांह् रुन्थे पर्णत्वमंशमयदच्छिन्दुः स्रीणिं च॥[३]

द्वादशस्ं विकामेष्विग्निमा देधीत। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनमवरुद्धा धेत्ते। यद्वांदशस्ं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इतिं। परिमितं चैवापरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे स्त्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तथ्स्त्यम्। यश्चक्षुंर्निमितेऽग्निमांधृत्ते। स्त्य एवैन्मा धंत्ते। तस्मादाहिंताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहिंतः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आ्रयेयाः पुशर्वः। ऐन्द्रमहेः। नक्तं गार्हेपत्यमा देधाति। पृशूनेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्ँ। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अर्धोदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसुजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मानवी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽश्वंणोत्। असुरा अग्निमादंघत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंघत। अथु गार्हंपत्यम्। अथौन्वाहार्यपचंनम्। साऽब्रंबीत्। प्रतीच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीति॥२९॥

यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽशृंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तैंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथु गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनी-यम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वैंथ्स्यन्तु इतिं। यस्यैवमृग्निरांधीयतैं। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ ह्योके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्रून्प्राजनयत्। अथाँन्वाहार्य-पर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथांऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकम्भ्यंजयत्॥३२॥ यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश् भिंमिंथु नैर्जायते। प्रत्यस्मिं ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं ज्यति। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृष्ट्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृष्ट्यते। वसीयान्भवति॥ ३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां
ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वरुंणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति
राज्ञंः। इन्द्रस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य।
मनोंस्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां
देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमृग्निराधीयते।
न देवतांभ्य आवृंध्यते। वसीयान्भवति॥३४॥
ध्याय्वि व राष्ट्रिक्षावं रूथे भविष्यनीत्यंक्षीज्ञान्ष्यसंऽज्वयुवसीयान्थवि ववं व॥——[४]

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आधाति। भूर्भुवः सुविरित्याह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमाधत्ते। ऋधात्येव। अथो स्त्यप्रांशूरेव भवित। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। सुवृरित्यांह। सुवृर्ग एव लोके प्रतिं तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंवैनंं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधंत्ते। सर्वैः पुश्रभिराहवृनीयम्॥३६॥ सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सृत्यः सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा देधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वंऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

एष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽर्श्वः। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्प्रजापंतिरनूदेंति। वृज्री वा एषः। यदर्श्वः। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुन्रा वंर्तयति॥३९॥

जुनिष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्याहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्मूत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। विभक्तिरेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैंत्। प्राणान् विच्छिंन्द्यात्। अधौऽधः शिरो

हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रं हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरग्निमं-सृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौंहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यश्रेधा-ऽग्निरांधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूंहति। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुनरा वर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पृषः। यदश्वंः। पृष रुद्रः॥४२॥

यद्ग्निः। यदश्वंस्य प्रदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृशूनिपंदध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यन्नाकृमयेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पार्श्वत आर्क्रमयेत्। यथाऽऽहिंतस्याग्नेरङ्गारा अभ्यववर्तरन्। अवरुद्धा अस्य पृशवो भवन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजंमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्रये पर्वमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्रये शुचंये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥ ४४॥ पुनाह्वनीयं धतेऽश्वलं वर्तयि कुरुत् इति रुद्रो दंधाति यद्ग्रये एकं वा——[६]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधता इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जे्ष्यन्तीतिं। तद्ग्रिर्नोथ्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अपसु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तेंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नये पावकार्यः। आपो वा अग्निः पावकः। यदेवापस्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तें ऽग्नये श्चंये। असौ वा आंदित्यों ऽग्निः श्चिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावां रुन्यत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानिं निर्वपंत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौँऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालुमनु निर्वपेत्। आदित्यं चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ताभ्यामेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्धे। आदित्यो भवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्थे। घृते भंवति। युज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्नंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा एतानि हुवी १ षि। एष रुद्रः। यदुग्निः॥५०॥

यथ्सद्य पृतानिं ह्वी १ षिं निर्वपेंत्। रुद्रायं पृश्वनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यन्नानुं निर्वपेत्। अनं वरुद्धा अस्य पृशवंः स्यः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवथ्सरप्रंतिमा वै द्वादंश् रात्रयः। संवथ्सरेणेवासमें रुद्र शंमियत्वा। पृश्वनवं रुन्धे। यदेकं मेक मेतानिं हवी १ षिं निर्वपेत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेंत्। तादक्तत्। न प्रजनंन-मुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्मैं लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरन् प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवैषाऽभिकांन्तिः। र्थ्चकं प्रवंतयति। मृनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मिति। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धै। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं एवावं रुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। वह्निवां अनुङ्गान्। वहिंरध्वर्युः॥५४॥ मिथुनस्यावंरुद्धै। वासों ददाति। सुर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वां एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांद्शभ्यों ददाति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। सुंवथ्सर एव प्रति तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

विह्नेनेव विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति।

अादित्ये तृतीयम्पस्वासीत्ततेनावांरुन्यत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवीरपिं निवीपेँह्यत्यवंरोहिति ददात्यप्यर्युर्देयुमेकं च॥—————[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्ग्निः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। छुर्दिस्तोकाय् तनयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यमृग्निः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय् तनयाय पितुं पंच। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यमृग्निः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तुनुवौं। विरार्ट्व स्वरार्ट्व। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये ते अग्ने शिवे तुनुवौं। सुम्राङ्गांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विशतां ते मां जिन्वताम्। यास्ते अग्ने शिवास्तुनुवैः। ताभिस्त्वाऽऽदेधे। यास्ते अग्ने घोरास्तुनुवैः। ताभिर्मुं गेच्छ॥५८॥ वर्ष्यदे जिन्नतां तुनुवसीणि व॥—————[७]

ड्मे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजंमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्या-वर्तयति। तथा न शोचयन्ति यजंमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगायत उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैनं प्रति-ष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिवै वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यमुद्धंरते। बृहद्भिगायत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरिग्निमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्। श्येतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतत्वम्। यद्वारवन्तीयंमिभे गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्येतेनं श्येती कुंरुते। घृमः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैनमुत्तरो युज्ञो नमिति। रुद्रो वा पृषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यर्जमानस्य पुशून् हि॰सितोः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवदित्यांह। पृशुभिर्वेन् सिम्प्रियं करोति। पृश्नामहिर्साये। छुर्दिस्तोकाय तनयाय युच्छेत्यांह। आ-मेवेतामा शांस्ते। वातः प्राण इत्यन्वाहार्युपचंनम्॥६२॥

पचेत्यांह। अन्नेमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं

सप्राणमेवैनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं

विद्वानित्यांह। विभंक्तिरेवैनंयोः सा। अथो नानांवीयिवेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पद् इत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। अर्कश्चश्चिरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥ अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्। आन्शे व्यानश्च इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गित्मप्रतिष्ठितमा

दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमित्रयः। अवींङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधत्ते। विराद्घं स्वराद्घं यास्तें अग्ने शिवास्तन् वस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तन् वंः। ताभिरेवेन् समर्धयति। यास्तें अग्ने घोरास्तन् वस्ताभिरमुं गृच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवेनं पर्राभावयति॥६४॥
लोकीऽस्वतिमाधनेऽन्वाहार्यपर्वनं देवानामत्रमेनं प्रतिष्ठितमाधने पर्वं चा————[८]

शुमीगुर्भाद्ग्निं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्य्नियां तुनूः। तामेवास्मैं जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यां देवेभ्यां ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्जात्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें धाता चौर्यमा चौजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्निन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं स्मिधो-ऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतोऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सिम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्वा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवेनं धाम्ना समर्ध-यति। अथो तेजंसा। गायुत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायुत्रछंन्दा वै ब्राँह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त॰ संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सर॰ हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंन॰ संवथ्सरे नोपनमैत्। समिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं एव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मा॰समंश्वीयात्। न स्नियमुपंयात्॥७१॥

यन्मार्समंश्जीयात्। यथ्बियंमुपेयात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनंमुग्निरुपंनमेत्। श्व आधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौंऽस्मै प्रजां प्शून्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता रात्रिमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टपेत्। यथर्ष्भायं वाशिता न्यांविच्छायति। ताद्दगेव तत्। अपोद्ह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित। संवथ्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजनयित। अनांहितस्तस्याग्नि-रित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इति। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवैनंमवरुध्याधंत्ते। यदि संवथ्सरे-ऽनाद्ध्यात्। द्वादुश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरप्रंतिमा वै द्वादंश् रात्रंयः। संवथ्सरमेवास्याऽऽहिंता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिंता पुवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपच्दितिते रेतौऽधत्तः सम्मिता घृतवंतीभि्रादंधाति राज्ञन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययम्-स्त्वायेयाद्गच्छिति मन्थित् रात्रयश्चत्वारि च॥————[ $\gamma$ ]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंकामत्। तत्प्रजा-पंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदं-क्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पृशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेति। सा पंश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्रिय मत्रं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथों पुङ्किमेव। पुङ्किर्वा एषा ब्रांह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यदुग्निराधीयतें। तस्मादेतावंन्तो-

ऽग्नय् आधीयन्ते। पाङ्कं वा इदः सर्वम्ं। पाङ्कंनेव पाङ्कः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शः स्यं पृश्नमें गोपायेत्यांह॥ ७८॥

पृश्नेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवैतेनेन्द्रिय स्पृणोति। अहे बुध्रिय मत्रं मे गोपायेत्यांह। मत्रंमेवेतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंने उन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नीर्याज्ञयंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदाहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन् सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्सभायां विजयंन्ते। तेन् सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्नर् हरंन्ति। तेन् सौं-ऽस्याभीष्टः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। ताद्दगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भागयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामृग्निमादंधीत। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठित्माधंत्ते। ऋष्नोत्येनेन॥८०॥

एषा पृश्नमें गोपायेति प्रविष्टा पृश्नमें गोपायेत्यांह् जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥———[१०] ब्रह्म सन्धंसुं कृतिंकासुर्व्धन्ति द्वादशसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्रिनोंद्धर्मः शिरं इमे वै शंमीगुर्भात्युजा-

पंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धेत्तं तौ दिव्यावर्थो शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारो भृत्वा जर्गतीभिरशीतिः॥८०॥ ब्रह्म सन्धेत्तमृष्ठोत्येनेन॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

# ॥तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्भन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिशश्चतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वानुरस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौर्यज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृंथिवीमचंरः। गुहाकारमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वृम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यवंधिरा भवामः। प्रजापितसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपहत्ये सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्निमष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभंरामि। यस्यं रूपं विभ्रदिमामविन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सरि्रस्य मध्ये। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्धारम्स्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपेश्यथ्सरिरस्य मध्यै। उर्वीमपेश्यञ्जगेतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्याऽऽयतंनाद्धि जातम्। पर्णं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद्द १हञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भुत्रीम्। ता नंः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १ हिरंण्यम्। अन्धः सम्भूतममृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंत्रुत्तरतो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदंश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवृथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनंस्पते शृतवंल्रशो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषेण सिम्षा मंदेम। गायुत्रिया ह्रियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधिं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्च्सम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

शुमी १ शान्त्यै हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छंज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तमियत्वा। एतत्ते तदंशनेः सम्भरामि। सात्मां अग्ने सहृंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृंता बृहृत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिंताः। तिस्रस्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजांत्यै। अश्वत्थाद्धंव्यवाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तुनूं युज्ञिया् सम्भंरामि। शान्तयोनि शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियुतवे। यो अश्वत्थः शमीगुर्भः। आरुरोहु त्वे सर्चा। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

युज्ञियैंः केतुभिः सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसें क्वये मेध्याय। वचों वन्दारुं वृष्भाय वृष्णें। यतों भ्यमभंयं तन्नों अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं द्वस्यत॥९॥

#### ॥ घृत-सूक्तम्॥

घृतैर्बोधयुतातिंथिम्। आऽस्मिन् हृव्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने हृविष्मेतीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। समक्तुभिरज्यते विश्ववांरः॥१०॥

शोचिष्केशो घृतनिर्णिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्य्ज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः समिद्धो घृतमस्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितो वहन्ति। घृतं पिबन्थ्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अग्ने ह्विषो जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंकिरे हव्यवाहम्। उरुज्ञयंसं घृतयोनिमाहृंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोद्यन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहृंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्ञयार्ष्सि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋं अते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंणांमुदं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवृतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदेने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्वंशिर्ममं। ऋतेनाँग्र आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाँम्। दर्शमहं पूर्णमांसं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरंतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं दंदे। तथ्मत्यं यद्वीरं विभृथः। वीरं जनयिष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजीनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनियुष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां प्रशुभिंब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृंताथ्सत्यमुपैमि। मानुषाद्देव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिंन्धानः। उभौ लोको संनेमहम्। उभयौंर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवेदो भुवंनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यज्जनिष्यते॥१५॥ अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्। शुमीगुर्भाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदादिदं युमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्क्षत्रिमं पितरों लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरींषमसि। संज्ञानंमसि काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुनुवंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तुनुवोः ममं॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्नयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नंताः। यैंऽग्नयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्यै मंहिम्ना॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनन्नमृत्ं मर्त्यासः। अस्त्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्नुवंः समीचीः। पुमार्थसं जातम्भि सर्श्तमन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेणु मह्यम्। दीर्घायुत्वायं शतशारदाय। शतर शरद्ध आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वै पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव् योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककृञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्याय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहन्नरातीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्नारं अप् बाधंमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जंम्स्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरि्ह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायाऽऽयुषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टियां ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमाण एहिं। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रृश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व मृहा १ असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्तुनुवे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृष्ट्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्ः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्त्वायं जीवसें। जातां जीनिष्यमाणां च। अमृतें सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अर्थर्व पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृंणु। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहें बुध्निय मन्नें मे गोपाय। यमृषंयस्नेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूर्षेषि। सा हि श्रीरुमृतां सुताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। ममृंज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं स्तो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पश्चधा-ऽग्नीन्व्यंकामत्। विरादथ्सृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोंहद्रोहिणी। योनिंरग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युपयन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्यो इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव सप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

पुशवो वा उक्थानि। पुश्नूनामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकंया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवुर्गो वै लोको ज्योतिः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर्र् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवतर षष्ठे। तद्रं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्माः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्माः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यर्जमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भंवति। बृहद्वै सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यंन्ति। त्रयस्त्रिष्ट्शि नाम् सामं। मार्ध्यं दिने पवमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्नि १ शुद्धै देवताः। देवतां पृवावं रुन्धते। ये वा इतः परांश्च १ संवथ्सरम् प्यन्ति। न हैन् ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् येऽमुतो-ऽर्वाश्चम् प्यन्ति। ते हैन १ स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतो-ऽर्वाश्चम् प्यन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्यो विराइंहान्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥———[२]
सन्तिर्तिर्वा एते ग्रहाँः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिवाकीर्त्यम्। यथा शालाये पक्षंसी। एवर संवथ्सरस्य पक्षंसी।

यदेतेन गृह्येरन्। विषूंची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्रश्सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयुः। यदेते गृह्यन्तै। यथा शालायै पक्षंसी मध्यमं वर्शम्भि संमायच्छंति॥३३॥

पुवर संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविर्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं पृतदहंः पृश्ररालंभ्यते। सौर्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं पृवैष बलिर्ह्हियते। स्रोतदहंरितग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्ष्वण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षञ्चेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्माध्सप्त शीर्षन्त्राणाः। इन्द्री वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ श्लोकान्भ्यंजयत्। तस्यासौ लोकोऽनीभिजित आसीत्। तं विश्वकर्मा भूत्वाऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। प्रवा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृह्णते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्णते। विश्वौन्येवान्येन् कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामन्येन् प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धाथ्संवथ्सरस्यान्योन्यो गृह्णते। तावुभौ सह महाव्रते गृह्णते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अक्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुष्ट्ये॥३६॥ सुम्।पक्षंत्रतिश्राह्णां गृह्णते स्वथ्सरस्यान्यौन्यो गृह्णेते पश्च व॥———[३]

पुक्रिवेर्श पृष भविति। पृतेन वै देवा एंकिविर्शेनं। आदित्यमित उत्तमर सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकिविर्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं पुरस्तांत्। स वा एष विराज्यंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उभयतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्त्रेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

एवाऽऽलंभन्ते॥४०॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादा-दंबिभयुः। तं छन्दोभिरदृ १ धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचोऽवपादादंबिभयुः। तं पश्चभी रृश्मिभि्रु दंवयन्। तस्मादेकवि १ शेऽहन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रृश्मयो वै

दिवाकीर्त्यानि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥ महादिवाकीर्त्युष्ट् होतुंः पृष्ठम्। विकुर्णं ब्रह्मसामम्। भासौं-ऽग्निष्टोमः। अथैतानि पराणि। परै्वे देवा आंदित्यर सुंवुर्गं

ऽग्निष्टोमः। अथैतानि पराणि। परैवै देवा आदित्यः सुवर्गे लोकमपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां परत्वम्। पारयन्त्येन् पराणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आदित्यः सुवर्गं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्यैनः स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥

-वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावांपृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयतनाद्देवता अवं रुन्थे।

देवानामर्यातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते

आदित्यामिवं वृशामालंभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टः शमयन्ति। वर्रुणेन् दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष ब्लिर्ह्हियते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अज्येत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्थते। यदेते गृव्याः पृशवं आलुभ्यन्तै। उभयेषां पश्नामवंरुद्धे॥४२॥

यदतिरिक्तामेकाद्शिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्द्वौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिरिच्यंते। न कनीय आर्युः कुर्वते॥४३॥ त पृवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभुनोऽर्वरुखे सुप्त चं॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तों ऽशयत्। तं देवा भूताना १ रस्ं तेजंः सम्भृत्यं। तेनैंनमभिषज्यन्। महानंववृतींतिं। तन्मंहाब्रतस्यं महाब्रतत्वम्। मृहद्भृतमितिं। तन्मंहाब्रतस्यं महाब्रत्वम्। मृह्तो ब्रतमितिं। तन्मंहाब्रतस्यं महाब्रत्त्वम्। पृश्चवि १ स्तोमों भवति॥४४॥

चतुर्वि शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिँन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पञ्चवि र्शमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमिश्तितं धिनोतिं। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धीयते। अथ यद्वा इदमंन्तृतः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्तृतः क्रियते प्रजननायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्सदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पश्चदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। सप्तदृशौंऽन्यः। तस्माद्वया इंस्यन्यत्रमूर्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रत्तो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पृश्चविर्श आत्मा भैवति। तस्मौन्मध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विर्शं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्ह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यौत्मनौऽऽत्मृन्वी। स्होत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिर्षपन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गानि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि दतो नुखान्। परिमार्दः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नंमुदुम्बरः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। यस्यं तल्पुसद्यमनंभिजित्र्ड् स्यात्। स देवाना्र्ड् साम्यंक्षे। तल्पुसद्यंमुभिजंयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गांयेत्। तल्पुसद्यमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्पुसद्यंम्भिजिंतु इस्यात्। स देवाना इसाम्यंक्षे। तल्पुसद्यं मा पराजेषीति तल्पमारुह्योद्गायेत्। न तल्पुसद्यं परांजयते। ष्रेङ्के शर्रसति। महो वै ष्रेङ्कः। महंस पुवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समंजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकृतं व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमेंऽराथ्सुरिमे सुंभूतमंकृत्तित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुंभूतमंकृत्तित्यंन्यत्रः। यदेवेषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवेषां दुष्कृतं याऽराद्धः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविंन्दन्ते॥५०॥

भ्वति भ्वति क्रियते पुरुषो जयत्यजयञ्जयद्भयत्येकं च॥\_\_\_\_\_[६]
उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकविश्श एषोऽप्रतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥

उद्धन्यमान १ शोचिष्केशोऽग्ने सुपर्नानतिग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥

उद्धन्यमान १ संविन्दन्ते॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयम्प्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेज्स्विनींस्तुनः सन्त्यंदधतः। इदम् नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीति। तेनाृग्नीषोमावपान्नामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तैंऽग्निमन्वंविन्दन्नृतुष्थमंत्रम्। तस्य विभक्तीभिस्तेजस्विनींस्तन्र्रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्रन्। तस्यं यथाऽभि्जायं तनूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनराधेये कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनराधेये कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनौग्नेयं वा एतत्क्रियते। यथ्समिध्स्तनूनपांतिम्डो बर्हिर्यंजिति। उभावौग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनौज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावौग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पवंमानायोत्तंरः स्यात्। यत्पवंमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनांऽऽग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेंज्स्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धे। तेनोपा १ श्र प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुंनराधेयः। यथोपा १ श्र नष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहग्व तत्। उ्चैः स्विष्ट्कृतम्थ्यंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्यमिति। ताहग्व तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवताम्पैतीत्यांहुः। सैनमिश्वरा प्रदह् इति। तत्तथा नोपैति। प्रयाजान्याजेष्वेव विभिक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पेत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान् रवंत्प्रजनं नवत्तर्मु पैतीति। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनांग्नेयं वा एतित्क्रियत् इति। नेति ब्रूयात्। अग्निं प्रंथमं विभक्तीनां यजित। अग्निम्तुंत्तमं पंत्नीसंयाजानांम्। तेनां ऽऽग्नेयम्। तेन् समृंद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अकुन्भुत्वेव तद्वंवत् सम्भृतसम्भार् इत्यांहुरिच्छति पत्नीसंयाजा नवं च॥———[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। यौऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्ँ। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाजपेयंमपश्यन्। ते। अन्यौऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहमनेनं यजा इतिं। तैंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेतिं॥८॥

तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पति्रुदंजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तमिन्द्रौंऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येति। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छुथ्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मे ज्यैष्ट्यांय॥९॥

य पुवं विद्वान् वांज्येयेन् यजंते। गच्छंति स्वारांज्यम्। अग्र रं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा पुष ब्रांह्मणस्यं चैव रांज्न्यंस्य च युज्ञः। तं वा पृतं वांज्येय इत्याहुः। वाजाप्यो वा पृषः। वाज्र इं ह्यंतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांज्येयः। यो वै सोमं वाज्येयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भविति। आऽस्यं वाजी जायते। अन्नं वै वाजपेर्यः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यान्नादो जायते। ब्रह्म वै वाजपेर्यः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जायते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवर्तीं वाचं वदति। प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांजपेयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांजपेयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उञ्जितीः प्रायंच्छत्।

ह्यंस्य वाचोऽवंरुद्धाः॥१४॥

ता वा पुता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यृज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मणृश्चान्नंस्य च शमंलुमपाँघ्नन्। यद्बह्मणः शमंलुमासीँत्। सा गाथां नाराशुङ्ख्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा स्रौ॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्। यत्प्रंतिगृह्णीयात्।

शमंलुं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्नौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽपसु यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माँद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा

ध्रावामेति ज्येष्ट्यांय वेदं बृह्या जायते वाज्येयः स्राऽऽत्विंजीन एकं चा——[२] देवा वै यद्न्यैर्ग्रहैं र्युज्ञस्य नावारं न्यत। तदंतिग्राह्येरितगृह्या-वारं न्यत। तदंतिग्राह्यांणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहें र्यज्ञस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं रुन्थे। पश्चं

गृह्यन्ते। पाङ्को यज्ञः। यावानेव यज्ञः। तमास्वाऽवं रुन्धे॥१५॥

सर्व पुन्द्रा भंवन्ति। पुक्षेव यजंमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। पुक्षेव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यथ्सोमः॥१६॥ पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुरां। पुर्मेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर- मृन्नाद्यमवं रुन्थे। सोमृग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा एतत्तेजः। यथ्सोर्मः। ब्रह्मण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुराँ॥१७॥

अर्न्नस्यैव शमंलेन शमंलं यजंमानादपंहन्ति। सोम्ग्रहा श्रं सुराग्रहा श्रं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुराँ। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहैः स्पृणोति। जाया संराग्रहैः। तस्माद्वाजपेययाज्यंमृष्मिं श्लोके स्त्रिय सम्भवति। वाजपेयाभिजित इं ह्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपेरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षरं सोमग्रहान्थ्सांदयति। पृश्चाद्क्षरं सुराग्रहान्। पापवस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नर् सुरा। सोमग्रहार्श्व सुराग्रहार्श्व व्यतिषजिति। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

स्म्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रृं वै भुद्रम्। अन्ना-द्येनैवेन् स् सर्स्जिति। अन्नस्य वा पुतच्छमंलम्। यथ्सुराँ। पाप्मेव खलु वे शर्मलम्। पाप्मना वा पनमेतच्छमंलेन व्यतिषजित। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजित। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवेन् श्रमंलेन् व्यावर्तयति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्वंबित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहैः। यावंदेव स्त्यम्। तेनं स्यते। वाज्मुद्धाः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशु सप्स्म् सृजिति। हिर्ण्यपात्रं मधीः पूर्णं दंदाति। मुध्व्योऽसानीति। एक्धा ब्रह्मण् उपं हरित। एक्धेव यजमान् आयुस्तेजो दधाति॥२१॥ आवाऽवं क्ये सोमः शमंलं यथस्य इंस्थेनं व्यतिपजित व्यवंतिषति स्जित व्यति वा—[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोड्शी नातिंगुत्रः। अथ् कस्माँद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त् इति। पृशुभिरिति ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारुस्वत्याऽतिंगुत्रम्॥२२॥

मा्रुत्या बृह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पृशुभिरेवावं रुन्धे। आत्मानंमेव स्पृणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वाचंमितरात्रेणं। प्रजां बृह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोकर षोंड्शिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाकरं रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृशुनां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाचरं सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयति मारुत्या वृशयां। सुप्तदेश प्राजापुत्यान्पुशूनालंभते। सुप्तुदुशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यैं। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एवमिंव हि प्रजा-पंतिः समृद्धै। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजति। मुरुतों यज्ञमंजिघार-सन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्थ्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमयित्वा॥२५॥

पुतैः प्रचंरति। युज्ञस्याघाताय। पुक्धा वपा जुंहोति। पुक्देवत्यां हि। पुते। अथों पुक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। नेवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरति। पुतत्पुंरोडाशा होते। अथों पश्नामेव छिद्रमपिंदधाति। सारुस्वत्योत्तमया प्रचंरति। वाग्वे सरंस्वती। तस्मात्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्रहि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मान्मनुष्याः सर्वां वाचें वदन्ति॥२६॥ अतिरायमन्तिः शमिवत्योत्तम्या प्रचंरति पद चं॥———[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। स्वितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्ये। वाचस्पतिर्वाचम्द्य स्वदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥ इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवयम्। यच्चास्यामधि। तदेवावं रुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभिषिच्यते। अपस्वंन्तर्मृतं-मफ्सु भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयति। अपसु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्नववंप्रवते। यदफ्सु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापस् प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्थे। बहु वा अश्वी-ऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्पस् पंल्पूलयंति। मेध्यानेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुर्वा त्वेत्याह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योज्ञित्यै। यज्ञुंषा युनक्ति व्यावृंत्त्यै॥२९॥

देवस्याहर संवितुः प्रंसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषमित्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मुञ्जंयति। देवस्याहर संवितुः प्रंसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्टं नाकर्र रोहति। चात्वांले रथचुक्रं निर्मितर रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तुमाः सुंवुर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजमानः सुवुर्गं लोकमेति। आवैष्टयति। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना सामं गायते। अत्रं वै वाजंः। अत्रं मेवावं रुन्धे। वाचो वर्ष्मं देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वन्स्पतीन्प्राविंशत्। सेषा वाग्वन्स्पतिषु वदति। या दुन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचोऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाप्नंन्ति। पुरमा वा एषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथों वाच एव वर्ष्म् यजमानोऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजमजयिदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रः। यो यजंते। यजमान एव वाजमुत्रंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्शः स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अर्वाऽसि सप्तिरसि वाज्यंसीत्याह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। पृताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत् काष्ठां गच्छ्तेत्याह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राश्चों धावन्ति। प्राङिंव हि सुंवर्गो लोकः। चतुसृभिरन् मन्नयते। चत्वारि छन्दा रेसि। छन्दोभिरेवैनान्थसुवर्गं लोकं गमयति॥३५॥

प्र वा पुतैंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च् आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथिविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्धे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्सृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिकीयावं रुन्थे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्थेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पति्रुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवाराणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पुतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवं रुन्धे। सप्तदंशशरावो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्ये। क्षीरे भवति। रुचंमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा पृष देवतंया॥३८॥

यो वांजपेयेंन् यजेते। बार्ह्स्पत्य एष चरुः। अश्वांन्थ्सरिष्यतः सस्रुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वार्जं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्थे। अजीजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुंश्रति। यमेव ते वाजं लोकिमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥

अभिजंयति वा एषा वार्यीयन्तेऽस्मे युनिक गमयति य आजि धार्वन्ति भवति देवतंयाऽष्टो चं॥[६]
तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। पवित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्॥

वाजं वा एषोऽवंरुरुथ्सते। यो वांज्पेयेंन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यद्दंर्भमयं परिधापयंति॥४०॥ वाज्स्यावंरुख्ये। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पत्निया एवैष

वाज्स्यावरुद्धाः जायः एाह् सुवा राह्यवत्याहः। पात्रया एवष यज्ञस्यान्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूपरश्चतुंरिश्रभवति। गौधूमं चृषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

पुविमवि हि प्रजापंतिः समृद्धौ। अथौ अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपः। सूर्वदेवृत्यं वासः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथौ आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्यौ। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्सरमेवास्मा उपदधाति। सुवर्गस्य लोकस्य समध्ये। दशिमः कल्पै रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी। प्राणानेव यंथास्थानं कंल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥ यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुवर्गं लोकमेति।

सुवर्देवा ४ अंगुन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अंभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नेति॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मयाँ प्रजेत्यांह। आमेवेतामा शाँस्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्येनैवेन् समर्धयन्ति। ऊपैंप्रन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवेनंमन्नाद्येन् समर्धयन्ति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥

पुरस्ताब्धि प्रंतीचीन्मन्नंमुद्यतें। शीर्षतो घ्रंन्ति। शीर्षतो ह्यन्नंमुद्यतें। दिग्भ्यो घ्रंन्ति। दिग्भ्य पुवास्मां अन्नाद्यमवंरुन्थते। ईश्वरो वा पुष पराङ्मद्रद्यः। यो यूप्र रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वै हिरंण्यम्। अमृतं सुवर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं वै हिरंण्यम्। अमृतः सुवृगो लोकः॥४६॥
अमृतं एव सुंवृगे लोकं प्रति तिष्ठति। शृतमानं भवति। शृतायुः
पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। पुष्ठ्ये वा एतद्रूपम्।
यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनम्ध्यवं
रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रति तिष्ठति॥४७॥
प्रिप्पपर्यति ग्रेप्मां जहोति स्व नेति प्रत्यक्षं प्रनि लोको नवं व॥—————[७]
सप्तान्नहोमाञ्चंहोति। सप्त वा अन्नानि। यावंन्त्येवान्नांनि।

तान्येवावं रुन्थे। सप्त ग्राम्या ओषंधयः। सप्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धै। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धै। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन व्यृंद्धोत। सर्वस्य समव्दायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धो। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धो। देवस्यं त्वा सवितुः प्रमुव इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चिति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धो॥४९॥

पुरस्ताँत्प्रत्यश्चंम्भिषिश्चिति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंम् ह्यतै। शीर्ष्वतोऽभिषिश्चिति। शीर्ष्वतो ह्यन्नंम् ह्यतै। आ मुखांद्-ववं-स्नावयित। मुख्त प्वास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्राज्येना-भिषिश्चामीत्यांह। पृष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंम्भिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्राज्येनाभि-षिश्चामीत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणेवैनेम्भि-षिश्चति। सोमग्रहाइश्चांवदानीयानि चृर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहाइश्चांनवदानीयानि च वाज्यसृद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथौं उभयींष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुंवते वाज्यसृतः॥५१॥ इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सब्ने स्तुंबते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रं वै वाजः। अत्रंमेवावं रुन्धे। शिपिविष्टवंतीभिस्तृतीयसवने। यज्ञो वै विष्णुः। पृशवः शिपिः। यज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥ अस्त्रीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धाः इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येन्भिषिश्रामीत्यांह वाजुस्तः शिपिसीणि च॥—[८]

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। भुवनमगन्निति वै तमांहः। भुवनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। व्योमागन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। पृषामेवैतेनं लोकानारं सूयते। तस्माद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोंऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञोंऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनंदिस्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्युः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्युः करोति। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतन्ते। सोमाय पितृपींताय स्वधा नम् इत्यांह। पितुरेवाधि सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्वते॥५७॥

पृतद्वे ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंक्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षता य एवं वेदं। अभि द्वितीयां जायामंश्जुते। अग्नयें कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य एव पिंतृणाम्ग्निः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षदथ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितॄन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रीणाति।

तान्ग्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। स्कृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। स्कृदिव हि पितरः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरः। तानेव प्रीणाति। पराङावर्तते॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत् उपौस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्राश्चीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्राश्चीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेता अवृष्ठेयंमेवा तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितर्रः प्रयन्तो हर्रन्ति। वीरं वा ददति। दृशां छिनत्ति। हरंणभागा हि पितरः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर् आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसांय। नमों वः पितरः शुष्मांय। नमों वः पितरो जीवायं। नमों वः पितरः स्वधायैं। नमों वः पितरो मुन्यवें। नमों वः पितरो घोरायं। पितरो नमों वः। य पुतिसमें ह्लोके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽनुं। यें ऽस्मिँ ह्लोके। मां ते ऽनुं। य एतस्मिँ ह्लोके स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ ह्लोके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्मित्याह। विसेष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्पितृभ्यंः कुरोतिं। एष वै मेनुष्यांणां युज्ञः॥६४॥ देवानां वा इतंरे यज्ञाः। तेन वा एतिपंतृलोके चंरित। यित्पृतृभ्यः क्रोति। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापृत्ययुर्चा पुन्रैति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञेनेव सह पुन्रैति। न प्रमायंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजमानश्चरित। यित्पृतृभ्यः क्रोति। स ईश्वर आर्तिमार्तौः। प्रजापंतिस्त्वावेनं तत् उन्नेतृमर्हृतीत्यांहुः। यत्प्राजापृत्ययुर्चा पुन्रैति। प्रजापंतिरेवेनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥

इत्यंश्वृते पद्यन्ते पद्मन्ते पद्म ऋतवां वर्ततेऽहंिवः स्यान्नेदीयः स्थ युज्ञो यर्जमानश्चरित् यित्पृतृभ्यः क्रोति पश्च च॥———[१०]

देवासुरा अग्नीपोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्येग्न्हेंब्रह्मवादिनो नाग्निंष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं ताप्परं सप्तात्रहोमात्रुपदं त्वेन्द्रों वृत्र १ हत्वा दर्श॥१०॥ देवासुरा वाज्येंवैनुं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरुः पश्चेषष्टिः॥६५॥

देवासुरा यजंमानः॥

#### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्वासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें उन्य इमें उन्य इति। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तौत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्गहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा पुता यजंमानस्य गृहे गृह्यन्ते। यद्ग्रहाँः। विदुरंनं देवाः। यस्यैवं विदुषं पुते ग्रहां गृह्यन्तें। पुषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपा्रशः। सोमेन देवाइस्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपा्रशं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाइस्तंपयति। यद्ग्रहाँ जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यर्चम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण् यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वाययाः सोमुग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्जिंमदुह्नन्॥४॥

तस्यां पृते स्तनां आसन्। इयं वै पृष्टिनंः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुंहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुहन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्या-ऽऽयुंरदुह्नन्। यद्भुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णाते। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण प्शून्दुहन्ति। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौ व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

गृहलं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुह्नमाग्रयणस्थाली भवंति नवं चाा———[१]
युव १ सुरामंमिश्विना। नमुंचावासुरे सचाँ। विपिपाना
शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांवृश्विनोभा।
इन्द्रावंतं कर्मणा दूर्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः।
सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्थेते। सुचीवं
घृतं चमू इंव सोमंः॥७॥

वाजसिन रे रियमसमे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्।

यस्मिन्नश्वांस ऋषभासं उक्षणंः। वशा मेषा अंवसृष्टास आहंताः। कीलालपे सोमंपृष्ठाय वेधसें। हृदा मृतिं जंनय चारुम्ग्रयें। नाना हि वां देवहिंत सदों मितम्। मा स स्पृंक्षाथां परमे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्ट रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवनं। सोमुर् राजानिमुह भंक्षयामि। द्वे स्रुती अंशृणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यानाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन समेति। अन्तरा पूर्वमपेरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायुत्रछंन्दाः पाशंः। तं तं एतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छुंन्दाः पार्शः। तं तं एतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगंतीछुन्दाः पार्शः। तं तं एतेनावं यजे। सोमो वा एतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सत्राज्यो वा सोमेन यजेते। देवसुवामेतानि हवी १षि भवन्ति। एतावन्तो वै देवानार सवाः। त एवास्मैं सवान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनंः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥ सोमं आविशन् यंजे राज्यायैकं च॥=

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय

कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषींदति। यस्यांग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्।

उदस्थाद्वेव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥

ड्मामेवास्मा उत्थापयति। आयुंर्य्ज्ञपंतावधादित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। अवंतिं वा एषेतस्यं पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदति। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्धा ब्राह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंतिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्ध्वा दंदाति। न ह्यदंष्ट्य दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांन्ड् स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीर्प्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं एवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजित॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्रोति। यो वै युज्ञस्यार्ते नानांति स् सः सृजति। उभे वै ते तह्यांर्च्छतः। आर्च्छति खलु वा एतदिग्निहोत्रम्। यदुद्यमान् इ स्कन्दिति। यदिभिदुद्यात्। आर्ते नानांति युज्ञस्य सः सृजेत्। तदेव यादिकी दक्षे होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनेरहोत्व्यम्। अनांतिनेवार्ति युज्ञस्य निष्करोति॥१४॥

यद्युद्धुंतस्य स्कन्दैंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरे्यात्। युज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्दैंत्। तन्निषद्य पुनेर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पृवैनृत्पुनंगृह्णाति। तदेव यादक्कीदक्षं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। अनातिनेवार्तं यज्ञस्य निष्करोति॥१५॥

वि वा पृतस्यं युज्ञिष्ठंद्यते। यस्याँग्निहोत्रंऽिधिश्रिते श्वाऽन्त्रा धावंति। रुद्रः खलु वा पृषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पृश्नपि दध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यद्पौऽन्वतिषिञ्चेत्। अनाद्यमुग्नेरापंः। अनाद्यमाभ्यामपि दध्यात्। गार्हपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इति वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयाँद्ध्वर्सयुन्नद्वेवत्। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञेनैव यज्ञर सन्तंनोति। भरमंना पृदमपि वपति शान्त्यै॥१६॥

वपति शान्त्ये॥१६॥ वै देव्यदितिर्मुश्रति सुजति करोत्याभ्यामपि दथ्यात् पश्चं च॥————[३]

नि वा <u>ए</u>तस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। दुर्भेण

हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तौद्धरेत्। अथाग्निम्। अथौग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यदिग्नं पृर्वे हरत्यथौग्निहोत्रम्॥१७॥

यदाभ्र पूर्वे हर्त्ययााभ्रहात्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धंरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रमुपसाद्यातमितोरासीत। ब्रुतमेव हुतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष युज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत ५ सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वर्रुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निवंपत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्याऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्॥ यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वेष्ट्र हर्त्यथाग्निहोत्रम्। भाग्धेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्युच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देविभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्गषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंपसाद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृतु र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेंनैवान्तंं यज्ञस्य निष्करोति। मित्रो वा एतस्यं युज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् स् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यज्ञस्यं वास्त्व्यंं क्रियतेंं। तदनुं रुद्रो-ऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यमुग्निमुपासीत। रुद्रौंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

ड्तः प्रंथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्ठभा जगंत्या। देवेभ्यों ह्व्यं वंहत् प्रजानन्नितिं। छन्दोंभिरेवेन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयति। गार्हंपत्यं मन्थति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिंताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं कामन्ति। इषे रुय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्में रमयति। सारुस्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्यातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवेनु सिमंन्ये। सम्राडिसि विराडसीत्यांह। रथन्तरं वै सम्राट। बृहद्विराट॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् सिन्धे। वज्रो वे चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्तराऽग्नी यातिं। आह्वनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं पुद॰ हि तैं। सूर्यस्य र्ष्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं यज्ञेनं यज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने स्प्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव यज्ञ १ सन्तंनोति। अग्नयं पिथकृते पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वेपत्। अग्निमेव पिथकृत् १ स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं यज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धौ॥२७॥

जुन् श्वा प्राची प्राची विश्व प्राचीति हरेद्देवतां गच्छत्युद्धार्यं-मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचित दुर्भेण यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वर्कणो वारुणं नि वा पुतस्याप्युदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराच्युषाः पुनिर्मित्रो मैत्रं यस्याऽऽहवनीयेऽनुद्धाते गार्हपत्यो यद्वे मन्थेदुद्धरेत्॥)॥————[४]

यस्यं प्रातः सब्ने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यंं दिन् स् सर्वनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौर्धयति मुरुतामिति धर्यद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा पुतत्। यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्तिं। सुन्धेः शान्त्यैं। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सब्नान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मृध्यत एव यज्ञश् सुमादंधाति। यस्य मार्ध्यं दिने सवंने सोमोऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश्सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यै। बण्महा असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यते। तेनैवेन् कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत सामं भवति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। सप्तद्यशः स्तोमः। तेनैव तृतीयसवनान्नयंन्ति। होत्रश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सित॥३०॥

एकैको वै जनतांयामिन्द्रः। एकं वा एताविन्द्रंम्भि सर्सुनुतः। यौ द्वौ सर्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावांणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्सुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वेणोप्सृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजिंत्यै॥३२॥ मुरुत्वंतीः प्रतिपदंः। मुरुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानामेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनंमन्तरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचे। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्याँत्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्ये। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। विश्वजिद्भंवति। विश्वंस्य जित्यैं। यस्य भूयार्श्सो यज्ञकृतव इत्याहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्ताथस्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञुकृतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्भसुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्भस् वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्भस्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

ड्रष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्ष्टः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योर्मां पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋ्रकृतांमिवैषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्र्यात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधाये। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतौ प्रथमः प्रांचीनावीती मौर्जालीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनौं कीर्तयेत्। उभयोरेवैनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मै हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्टथ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षेषि पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसामेषार् सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथो पाप्मानमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥ अभिजित्ये पृथ्व्याश्च स्वादंध्वर्षृत्वंवाश्चेकयोः परिददित कुर्वीर्ड्कीणे च॥——[६]

असुर्यं वा पृतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य पृव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पृशून् वीर्यं यच्छति। नास्मौत्पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा पृते नियंन्ति। येषौं दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धंरेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निलंयते। यत्र खलु वै निलीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारों रुद्वायेंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तुनूः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तुनुवा समर्धयति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अभ्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनेंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्येंत्। सुवर्ण्र् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजीषेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयाद्न्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अंभिषूयमांणस्य प्रिया तनूरुदंकामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् १ हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् १ हिरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तुनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीतुर् सोम्मपृहरेयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं क्रीतमंपृहरंयुः। अवाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यर सोमुमाहेरत्। तस्य योऽ५ंशुः पराऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वल्कः परां-ऽपतत्। तानि फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फौल्गुनानिं। पशवः सोमो राजाँ। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोमंमेव राजानम्भिषुणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रीणीयात्। दुधा मुध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमः स्याद्रथन्त्रसांमा। य प्वित्विजो वृताः स्यः। त एनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं प्व। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिच्छिति। सेव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभ्यो वा पृष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मान्मागुरते। यः सृत्रायांगुरतें। पृतावान्खलु वै पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेद्सेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य पृव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मान्ं निष्क्रीणीते॥४५॥ उद्यायित मन्थनम्यत्यकमात्त्राऽपंतन्मुध्यन्ति आगुत्वे पश्चं च॥———[७]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुंनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवंः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रेण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्तं प्वित्रंम्चिषिं। अग्ने वितंतमन्तरा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वृश्वदेवी पुनती देव्यागात्। यस्यै बह्वीस्तुनुवो वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधुमाद्येषु। वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रुश्मिभिर्मा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी युज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवितस्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपों दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन ब्रह्मणा॥४८॥

ड्दं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत्र् रसम्। सर्व्र् स पूतमंश्ञाति। स्वदितं मांतरिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत्र् रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीर्र सर्पिर्मधूदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृंतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृतर्थं हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथों अमुम्। कामान्थ्समधियन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृंताः। पावमानीः स्वस्त्ययनीः। सुद्धा हि घृंतुश्चृतः। ऋषिभिः सम्भृंतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृतर्थं हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। श्तोद्यांमर्थ हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदो वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्याँ। यमो राजाँ प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥ अतं र्याणां ब्रह्मण स्वस्त्ययंनीः सुद्र्या हि सृत्व्युत् ऋषिभः समृत्ते रसः पुनातु त्रीणि च॥-[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनौर्धमास ऊर्जुमवांरुन्धत। तस्मादर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरों- ऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्ज्मवांरुन्धत। तस्मान्मासि पितृभ्यंः क्रियते। मृनुष्यां अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्यत। तस्माद्विरह्नों मनुष्येंभ्य उपंहियते। प्रातश्चं सायं चं। पृशवों-ऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्यमवांरुन्यत। ते देवा अंमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवेषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यंः क्रोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽन्नर् हरंन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव पुशव ऊर्जम्वारुन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। यचांतुर्मास्यैर्-यजंते। यामेवासुंरा ऊर्जम्वारुन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंब्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यद्यांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवनास्मिँ छोके प्रत्यंतिष्ठत्। वरुणप्रघासैरन्तरिक्षे। साकुमेधैरमुष्मि छोके। एष हु त्वावैतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वा इश्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥ ५६॥ मनुष्यां अपस्यश्रम्सं पृतस्यं पूर्णं इस्त्यामस्य अपस्यश्रम्सं पृतस्यं पूर्णं इस्त्यामस्य ददांत्वितिष्ठम्त्वारि

अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः पंरिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुरंनुवथ्सरः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमाँग्नोति। तस्माँद्वैश्वदेवेन् यजंमानः। संवथ्सरीणाः स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवथ्सरमाँग्नोति॥५७॥

तस्माँद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। पृरिवृथ्स्रीणाई स्वस्तिमा शाँस्त् इत्याशांसीत। यथ्मांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावथ्स्र-माँप्रोति। तस्माँथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदावृथ्स्रीणाई स्वस्तिमा शाँस्त् इत्याशांसीत। यत्पितृयुज्ञेन यजंते। देवानेव तदन्ववस्यित। अथ् वा अस्य वायुश्चांनुवथ्स्रश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुनासी्रीयेण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्सरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण यर्जमानः। अनुवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्सरं वा एष ईंपस्तीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इतिं। एष हु त्वै संवथ्सरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्ता तैंऽग्निमेवायंजन्ता त पृतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन् यजंते। अर्थ संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। अर्थं सहस्रयाजिनंमाप्नोति। यदा संहस्रयाजिनंमाप्नोति॥६०॥ अर्थं गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति।

अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवति। अथु गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमवमम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेयार्रसि भवन्ति। यद्विश्वे देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥ अथाऽऽदित्यो वर्रुण्यु राजानं वरुणप्रघासैर्यजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वेरुणप्रघासैर्यजते।

पृतमेव लोकं जंयित। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुज्यमुपैति। यदांदित्यो वरुण् राजानं वरुणप्रघासै-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दार्श्स साकमेथेरयजत॥६२॥ स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिर्श्श्चन्द्रमां विभातिं।

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्मांकमेथेर्यजंते। पृतमेव लोकं जंयति। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस पृव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। पृष ह त्वै साक्षाथ्सोमं भक्षयति। य पृवं विद्वान्थ्सांकमेथेर्यजंते। यथ्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना रे साकमेधत्वम्। अथर्तवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरंं पितृयुज्ञेनायजन्ता त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतर्वः। यत्पितृयुज्ञेन यजेते। एतमेव लोकं जेयति। यस्मिन्नृतर्वः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यदतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयुज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अंप्रथन्त। य एवं विद्वाङ्क्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पश्भिः। अर्थ वायुः पंरमेष्ठिन रे शुनासीरीयेणायजतः। स एतं लोकर्मजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुनासीरीयेण यजित। एतमेव लोकं जीयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सार्युज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चातुर्मास्ययाजी मीयता (३) न प्रमीयता (३) इति। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं शरदिं शरत्। यदि हेर्मन् हेमन्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

पितृयज्ञत्वं जंयति यस्मिन्वायुर्हेमन्तस्त्रीणि च॥-

उभयें युवर सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सब्न एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वै स्त्रमांसता्निर्वाव संवथ्सरो दर्श॥१०॥

उभये वा उदंस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राह्मणेष्वर्थं गृहमेधिन् पदथ्यंष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताङ्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका वितंतानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारों-ऽवस्तांत्। अदिंत्ये पुनंवसू। वातंः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतैस्तिष्यः। जुह्वंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सपाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तोऽवस्तांत्। पितृणां मघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रश्शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदष्भोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। वहुतवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सिवृतुर्हस्तः। प्रस्वः प्रस्तांध्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांध्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ठां व्रतिः। प्रस्तादसिद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिः प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तां-दभ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋंत्यै मूलवर्हंणी। प्रतिभञ्जन्तंः परस्तांत्प्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः परस्ताथ्समितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्परस्तांद्भिजिंतम्बस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमांनाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूंना् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्रातिभेषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्ताद्धिश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठप्दाः। वैश्वान्रं प्रस्ताद्धश्वावस्वम्वस्तात्। अहें बूंप्रियस्योन्तरे। अभिषिश्चन्तेः प्रस्तादिभषुण्वन्तोऽवस्तात्। पूष्णोरेवतीं। गावंः प्रस्ताद्धथ्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौ। ग्रामंः प्रस्ताथ्सेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तादपवहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पृश्वाद्यत्ते देवा अदेधुः॥५॥ आर्श्वम्ताद्वहंमाना अवस्ताद्वर्यारूवक्तात्ययं अवस्ताद्वस्या अवस्ताद्वर्या वा——[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्धंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेति। अथ् नक्षंत्रं नैति। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैत्। यत्रं जघन्यं पश्यैत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ हु वै युज्ञेषुं च शृतद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाययां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोविंदुः। हस्तं एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठा-ऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोविंदुः॥७॥

अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। यां कामयेंत दुहितरंं प्रिया स्यादितिं।

तां निष्ट्यांयां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

ज्यं जंयेदिति। तमेतस्मिन्नक्षेत्रे यातयेत्। अनुपुज्य्यमेव जयित। पापपराजितिमव् तु। प्रजापितः पुशूनंसृजत। ते नक्षेत्रं नक्षत्रमुपातिष्ठन्त। ते सुमावन्त पुवाभवन्। ते रेवतीमुपातिष्ठन्त॥९॥

यदभ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-

ते रेवत्यां प्राभंवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंर्वीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भंवन्ति। सृष्टिलं वा इदमंन्तरासीँत्। यदतेरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नेक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मांदश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। ताद्दगेव तत्। देवनृक्षत्राणि वा अन्यानिं॥११॥

यम्नक्षत्राण्यन्यानिं। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानिं देवनक्षत्राणिं। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानिं यमनक्षत्राणिं। यानिं देवनक्षत्राणिं। तानि दक्षिणेन् परियन्ति। यानिं यमनक्षत्राणिं॥१२॥

तान्युत्तरिण। अन्वेषामराथ्स्मेति। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषाम-

विधेष्मेतिं। तञ्ज्येष्ट्रघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूंलुवर्हंणी। यन्नासंहन्ता तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्श्वणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजीर-युअत। अपुभरंणी्ष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्षत्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणिं। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुक्रिता ६०॥ चक्रुरेवं वेदोभयोरेनं लोक्योंविंदुरजयत्रेवर्तोमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमृन्यानि यानिं यमनक्षत्राण्यक्षांणद्यमनक्षत्राणि त्रीणिं च॥—————[२]

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वर्रुणस्य सायमास्वो-ऽपानः। यत्प्रतीचीनं प्रातस्तनात्। प्राचीनः सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निर्रिममत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्हिं पृशवंः समायंन्ति। यत्प्रंतीचीनः सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मृथ्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मृथ्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मृथ्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो

भगंमिच्छमानाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीनर् सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविश्षो नक्षेत्राणाम्। स्मानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। यचं प्रस्तान्नक्षेत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरंति। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भंवति। स्मानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरंति। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं

गुप्तं भवति॥१८॥ सङ्गवाध्योंड्शिनं निरंमिमत तत्तदात्तंवीर्यं निर्मागों वंदेद्भवति समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राण्यष्टौ

बह्मवादिनों वदन्ति। कित पात्रांणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोंद्शेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्तस्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन इतिं।

प्राणापानाभ्यांमेवोपाईश्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा॰शुसवंनम्। वाच ऐंन्द्रवायवम्। दक्ष्ऋतुभ्याँ मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। युज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंद्वीयत। स एतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स युज्ञमप्यवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। युज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपार्धन्वर्यमे निर्तमिमीतामिमीत पद्गा-----[४]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किञ्चन। ऋते संमुद्र
अपदितः। ऋते भर्मिरियः श्रिता। अगिस्तिग्रमेन शोचिषाँ। तप

आहिंतः। ऋते भूमिंरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहिंतम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंर्तये। सृत्येन् पिरं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंर्तये। तद्दतं तथ्सृत्यम्। तद्वतं तच्छुंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तौन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रौन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्भिः सर्खिभिः स्ह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुण्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सृत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसुजत्। प्र्मेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदुं ते मर्त्याभृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवथ्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवर्तयन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसे अग्निस्तिग्मेनं शोचिषा तप् आक्रान्तमुष्णिहा शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनास्य नि वंतिये। स्रत्येन परि वर्तये। तप्साऽस्यानं वर्तये। शिवनास्योपं वर्तये। श्रग्मेनास्याभि वंतिये। तद्तं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥ परिवर्तये मुहाभिवर्तय प्रण्डां राध्यासं न्यवर्त्वयुपंवर्तये मुलारिवर्तय प्राचं मासं मर्वर्षास्वरा। एकं मासं मर्वर्षिश्वतिः॥——[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेंऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्रस्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूणि। अथ् केशान्। तत्स्तेऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वर्पन्ति। भवंत्यात्मनां। अथों सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षो। अथ केशान्। ततो वै स प्राजांयत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवेनं चतुरों मासोऽवृञ्चतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परिं च। वृरुणप्रघासैश्चतुरों मासोऽवृञ्जत वर्रण-राजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परिं च। साक्मेधेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परिं च। या संवथ्सर उंपजीवाऽऽसीत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वाः श्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवथ्सर उपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वर्तयते। यद्वा इमाम्भ्रिर्ऋतावागंते निवर्तयंति। एतदेवैनाः रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ ह्लोहितायुसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं

कृत्वा नि वंर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वंर्तयेत। त्रीणिं त्रीणि वै देवानांमृद्धानिं। त्रीणि छन्दा रेसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्चेत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येंति। नास्यं कृद्रः प्रजां पृश्नून्भि मंन्यते॥३१॥ प्रसृत्युषुक्षासंग प्रति लोका मंचते॥———[६]

आयुंषः प्राण १ सन्तंनु। प्राणादंपान १ सन्तंनु। अपानाद्यान १ सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्र १ सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनसो वाच १ सन्तंनु। वाच आत्मान १ सन्तंनु। आत्मनः पृथिवी १ सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्ष १ सन्तंनु। अन्तरिक्षादिव १ सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥ ३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभैः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। जघानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमुर्केभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्र इद्धर्योः सचौ।

सम्मिश्च आवंचो युजाँ। इन्द्रों वृज्जी हिंरुण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर् रोहयिद्दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्र वार्जेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेव। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृंतः। सबंलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृंतः॥३५॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया॰सोऽहनन्निति। प्रहादो

ह् वै कांयाध्वः। विरोचंनु इस्वं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनं देवा अहन्त्रितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योंचुः। नाराजकस्य युद्धमंस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेतिं। तं यंज्ञऋतुभि्रन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञकृतुभिनान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वं-विन्दन्। तदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते पुरोक्षेण। पुरोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्नावैष्णवमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्गुत्यांतन्वतः। तान्यंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि सुमारोहन्।

तदंपुद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छुय्य्वंन्त् उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि समारोहन्। तदंपुद्रुत्यांतन्वत। तानिडान्त् उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता एतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुवर हि देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चर्राम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपार्श्रूप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेथ्स्यन्तीति। त उपार्श्रूप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सामिधेनीरनुच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्यं। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांप्सदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी्र् स्वाहेति। अश्नम्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचः। एतश् ह् वाव तच्चंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिन्नरे। तथों एवैतदेवंविद्यजंमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्यं॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणीपुसदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधीड् स्वाहेतिं। अशनयापिपासे हु वा उग्रं वचंः। एनश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचंः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यर्जमानोऽपं हते। तेंऽभिनीयैवाहंः पृशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेंव रात्रेः प्राचरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मादिभिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अह्नं एव तद्यजंमानो-ऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिं क्षोके यजमानः। अस्थिं च मार्सं चं। अस्थिं चैव तेनं मार्सं च यजमानः सङ्स्कुंरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमावग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृञ्चपृञ्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं
मृज्ञा। एतमेव तत्पंश्रधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्रति।
भेषजताये निर्वरुणत्वायं। तर सूप्तभिश्छन्दोभिः प्रातरह्वयन्।
तस्मांथ्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्ससे प्रातरनुवाकेऽनूंच्यन्ते।
तमेतयोपस्मेत्योपांसीदन्। उपांस्मे गायता नर् इति। तस्मांदेतयां
बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥
एच्छत्रन्यःस्तिष्टनेऽन्च्यान्त्यं स्वेणांषारम्।षार्यं रात्रिया एव तद्देवा अवंति पाप्मानं मृत्युमपंजिष्ठरे

पुष्युवन्पपुरस्तिष्ठन्तुं व्यानुष्य स्त्रुपणावारनावाय सात्रया पुष्य तहुषा अपात पाष्पान नृत्युनपञ्जावर मित्रावरुणो नवं च (देवा यजमानो देवा देवा यजमानो यजमानः प्राचेरं प्रचेरेदार्लभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिधिरे आतृंब्यान्॥)॥—————[१]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिंशलं त्रिपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिवितुस्तं खेनन्ति। स सुवर्णरज्ताभ्याः कुशीभ्यां परिंगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनंयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यथ्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रद्शेनाहंरन्। यावंती पश्रदशस्य मात्रां॥४५॥

तः संप्तद्रशेनाभि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्रशेनादंदत। तः संप्तद्रशेनाहं रन्। यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्रशेनं ह्रियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कवि द्रशेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कवि द्रशेनादंदत। तमें कवि द्रशेनाहं रन्। यावंत्येकवि द्रशस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतें॥ ४६॥

त्रिवृतेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रार् सायुंज्यर सलोकतां गमयन्ति। अथ् यत्पंश्चद्शेनं स्तुवतें। पृश्चद्शेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्शस्य मात्राँ। चुन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रश्यामंपक्षीयतेँ। पृश्चद्रश्यामांपूर्यतेँ। चन्द्रमंस एवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यथ्मप्तद्शेनं स्तुवतें। सप्तद्शेनैव तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तदशेनैव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजा-पंतेरेवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ् यदेकवि शोनं स्तुवतें। एकवि शेनेव तद्यजंमानमादंदते। तमेंकवि शोनेव हंरन्ति। यावंत्येकवि शस्य मात्रां। असौ वा आंदित्य एंकवि शाः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायुं ज्य १ सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंघ्रन्। ते अहोरात्रे अभवताम्। अहरेव सुवर्णां उभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। पृतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ् यदंस्तमेतिं। पृतामेव तद्रंज्तां कुशीमनुसंविंशति। पृहादों ह् वै कांयाध्वः। विरोचंन् इं स्वं पुत्रमुदां स्यत्। स प्रंद्रोऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

अति्त्यः पंत्रद्रशस्य मात्रां स्तुवतं पश्रदृशेनेव तद्यजंमानुमादंदते समृदृशेनेव हंरत्यादित्यस्येवेनं तिर्दृशिति

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृत्मानि तानि ज्योतीरंषि। य पृतस्य स्तोमा इति। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकविर्शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योतीर्शि। य पुतस्य स्तोमाः। साँऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमृश्विनौं धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरम्भेणं। भारंती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यद्श्विभ्यां धानाः। पूष्णः केर्म्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽर्थः। कस्मादेतेषार् हृविषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिः। एता ह्येनं देवता इति ब्रूयात्। एतेर्ह्विर्भि-रभिषज्यङ्स्तस्मादितिः। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् माध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवने। एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। यज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सव्नम्। रुद्राणां माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसव्नम्। अथ् कस्मादितेषा हिविषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्येनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिरभिषज्य स्तरमादिति॥५४॥ पुक्षिक्षण अह्म्यूत्रीयसव्ने प्रांतः सवनं पर्व वा [११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्।

यदश्रंयन्। तच्छ्रांयुन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांर-वन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच एवावंपादादंबिभयुः। तस्मां एतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दाङ्स्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमुक्षराँभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वाद्शाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यां तत्प्रत्यतिष्ठदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यरिच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीयाणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृह्ती। मामेव भूत्वा। मामुप् स इश्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैः पङ्किर्बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्धांदधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैंक्ष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिर्क्षरैंस्त्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिर्क्षरैंर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥ ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजा-पंतिः। छन्दार्शस् रथों मे भवत। युष्माभिर्ह्मृतमध्वानमनु सश्चर्गणीतिं। तस्य गायत्री च जगती च पक्षावंभवताम्। उण्णिक्षं त्रिष्ठुप्च प्रष्ठ्यौं। अनुष्ठुप्चं पङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु समंचरत्। एतश् हृ वै छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरति। येनैष एतथ्सश्चरति। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥ अभ्यवन्वाव सा देवाक्षंस बृह्त्यंद्याद्वारंशाक्षरांण्यपृष्ट्विद्यांद्याद्वास्थाय् पद्वं॥ [१२]

अग्रेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्युतमेव देवा वा आर्युषः प्राणमिन्द्रां दर्धाचो देवासुराः स प्रजापितुः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादश॥१२॥ अग्रेः कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिम्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नर्वपश्चाशत्॥५९॥

अग्नः कृत्तिका दवगृहा ऋतम्बध्याम् अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

> हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवृशीयन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण प्रचरित। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वौ निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्धैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनृत्थायं। अध्वर्युं च यजंमानं च हन्यात्। वीह् स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवैन र्श्शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्ये भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वे निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष तें निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिमेवोपावंतिते। मुश्चेममश्हंस् इत्यांह। अश्हंस एवैनं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तृत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूष्

दक्षिणा। पृतद्वे निर्ऋंत्ये रूपम्। रूपेणेव निर्ऋंतिं निरवंदयते। अप्रंतीक्षमायंन्ति। निर्ऋंत्या अन्तर्हित्ये। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्येव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमृतेन प्रचंरति। इयं वा अनुंमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमनुं मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयींष्वेव प्रजास्विभिषिंच्यते। दैवींषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धै। आग्नावैष्णवमेकादशकपालुं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुर्युज्ञः। देवता श्चैव यज्ञं चार्व रुन्थे। वाम्नो वृही दक्षिणा। यद्वही। तेना ऽऽग्नेयः। यद्वाम्नः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमीम्यां वा इन्द्रों वृत्रमहिन्निति। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रघ्रमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। इन्द्रों वृत्र श्रह्त्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैन्द्राग्रमेकांदश-कपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। तेन् वै स देवताश्चेन्द्रियं चावांरुन्थ। यदैन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवताश्चेव तेनेन्द्रियं च यजंमानोऽवं रुन्थे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेर्नांऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनै्न्द्रः समृद्धै। आग्नेयम्ष्टा-कंपालुं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधे। यदांग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यज्ञमुखमेवर्द्धिं पुरस्तौद्धते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋषुभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंषुभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्ं। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भवति हुताद्याय। यजंमानस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता ईन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैन्द्राग्नो भवृत्युज्ञित्यै। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वैश्वदेवश्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न

प्राजांयन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहिम्माः प्रजंनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजािम्च्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्ते यं च न। ताबुभौ शोंचतः प्रजािम्च्छमानौ। तास्बग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। सृविता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोंषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्स्रस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। संवथ्सरो वै प्रजापंतिः। संवथ्सरेणैवास्मै प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता मुरुतौंऽघ्नन्। अस्मानपि न प्रायुक्षतेति॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योंऽकल्पता यन्मारुतो निरुप्यतें। यज्ञस्य क्रुस्यैं। प्रजानामघाताया सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पृवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिंन्मानंयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रें यजत। मया मुख्नासुंराञ्जेष्यथेतिं। मां द्वितीयमिति सोमोंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेतिं। मां तृतीयमितिं सविता। मया प्रसूंता जेष्यथेतिं। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीतिं। मां पंश्रममितिं पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेतिं॥१७॥

तेंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। सुवित्रा प्रसूंताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पृशवंः॥१८॥

पृदित्यंशोचद्युद्धरंत्यव्रवीत्प्रतिष्ठ्यां जेष्य्थेत्येतरिहं पृशवंः॥
[२]

त्रिवृद्धर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बुर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इव ह्यंयं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथमजामेव पुष्टिमवं रुन्थे। प्रथमजो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृंह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृशूनेवावं रुन्धे। पृश्रुगृहीतं भवति। पाङ्का हि पृशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बृहुरूपा हि पृशवः समृंद्धै। अृग्निं मंन्थन्ति। अृग्निमुंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थन्ति। अृग्निमुंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवानूयाजाः। अष्टौ हवी १षि। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल् आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्थयति। यदल्पंमानयेत्। अल्पां एनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयेत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावृद्येत्॥२३॥

यजंमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयित्वा। तेजसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आंहवनीयः॥२४॥ यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेंन जुहुयात्। सुवृगां ह्लोकाद्यजंमान् मवंविध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवृगंस्यं लोकस्य समंष्ट्ये। यत्प्राङ्घदेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पितृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञर हंन्युः। यदुदङ्कः। मृनुष्यलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावापृथिवी अनु प्रति तिष्ठतः। द्यावापृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजंमानः। यजंमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्वांहुः। छन्दार्रस्म वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजित। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरीं सोमपानौं। तयौः परिधयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छित। बुर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नंयति। प्रजा वै बुर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। सम्पुप्हूयं भक्षयन्ति। एतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भक्षयति। पृशवो वै वाजिनम्। यजमान एव पृश्नम्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥ लोको वंहुक्षं भवत्याज्यंभागे पृशव आज्यंमव्येवाहवृनीयः प्रत्यक्तस्मुत्वविष्ठितो होत्व्यो भाग्भेयमेते

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अस्मादपाँकामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपाधावन्नाथिम्च्छमानाः। स प्रतान्य्रजापंतिर्वरुणप्रघासानपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स प्रजा वरुणपाशादंमुश्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्तै॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यक् आसीत्। स्वयः प्रसृंतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वै स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयति। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उंभयाबांहुः। यज्ञाभिजित् क् ह्यस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौ। उत्तरस्यां वद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपित। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथो यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। एतद्गौह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथेष ऐन्द्राग्नो भवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानौम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्थे। ओजो बलं वा एतौ देवानाँम्। यदिन्द्राग्नी। यदैँन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलंमेवावं रुन्थे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमुशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शुमीपुर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामपिं यच्छति। प्रजा-पंतिमुन्नाद्यं नोपानमत्। स एतेन श्तेध्मेन ह्विषाऽन्नाद्यमवारुन्थ। यत्परः श्तानिं शमीपुर्णानि भवन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि व क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्करीरांणि भवन्ति। सौम्ययेवाऽऽहुंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्वति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्वति॥३३॥

उत्तरस्यां वेद्यांम्न्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्धह्मणश्च क्षुत्राच् विशौं उन्यतो उपकृमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचंरति। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वर्रुणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः क्रोति॥३४॥

तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँ-क्ररोतिं। तत्पापीं-यान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्ञार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥ प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानयित। अह्वतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यामनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजमानः स्यात्। यजमानो-ऽन्वाह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार् सवीर्यत्वायं। यद्ग्राम् यदरण्य इत्याह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यो वा आहवनीर्यः॥३६॥

भ्रातृब्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजमानं वरुणपाशनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंब्यमेव वंरुणपाशनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यमेव वरुणमवं यजते। शीर्षश्रीधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत इत्यांह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदांह। वर्रुणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यज्ञंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषेश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रुणगृहीतेनैव वर्रुणमवयजते। अपोंऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवंयजते। प्रतियुतो वर्रुणस्य पाश इत्यांह। व्रुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यंन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं ऽस्येधिषीमहीत्यांह। सुमिधैवाग्निं नंमुस्यन्तं उपायंन्ति। तेजोंऽसि तेजो मिये धेहीत्यांह। तेजं पष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् १) एवाऽऽत्मन्धेत्ते॥३९॥

क्रोति ग्राहयत्याहवुनीयस्तिष्ठं जुहोत्युपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥———[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तन्ः। तां प्रीणीत। अथासुंरान्भि भविष्यथेतिं। ते देवा अग्नये-ऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकान्यजनयत। ततो देवा अभवन्। पराऽस्राः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवा-नींकवन्तु स्वेनं भाग्धेयेन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आदित्यौं-ऽग्निरनींकवान्। तस्यं रुश्मयोऽनींकानि। साक्षः सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तंः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरुं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवी-भ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरुं निर्वपति। द्यावापृथिवीभ्यांमेव तदुंभ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्टं तपंति। चुरुर्भवति। सुर्वतं पुवैनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोंविज्यिनः सन्तंः। सर्वांसां दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता पुवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भंवितेतिं। स शृतोंऽभवत्। तस्याहृंतस्य नाश्वनं। न हि देवा अहृंतस्याश्वनितं। तैंऽब्रुवन्। कस्मां इम १ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्योंऽज्ञहवुः॥४३॥

ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकृत्रा ऋियतें। पृश्वव्यं तत्। पाकृत्रा वा एतिक्रंयते। यन्नेध्माबर्हिभवंति। न सांमिधेनीरन्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तै। नानूयाजाः। य एवं वेदे। पृशुमान्नेवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतो गृहमेधिनो यजित। भागधेयेनैवैनान्थ्समंध्यिति। अग्निइस्विष्टकृतं यजित प्रति-ष्ठित्यै। इडाँन्तो भवित। पृशवो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥४५॥

असंग अश्रयन्ग्रहम्भायं च्हं निरंवपत्रज्ञहतुर्न्वाहडाँन्तो भविति हे चं॥———[६] यत्पत्नी गृहम्भेधीयंस्याश्जीयात्। गृह्म्भेध्यंव स्यात्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो

व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्यौश्जीयात्। गृहमेध्येव भेवति।

नास्यं युज्ञो व्यृंद्धते॥४६॥ ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। आशिंता अभवन्। आञ्जंताभ्यंञ्जत।

ते देवा गृहम्धीयनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्चताभ्यञ्जत। अनुं वथ्सानवासयन्। तेभ्योऽसुंगुः क्षुधुं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंरान्युनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आश्रंतेऽभ्यंश्वते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायेव तद्यजंमानः क्षुधं प्रिहंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेतिं। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितते। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तत। गृहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निद्ध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनैवैन समर्धयति। ऋषभमाह्वयति। वषद्वार एवास्य

सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृत्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। परां परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यंमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तैंऽब्रुवन्मरुतो वरं वृणामहै॥४९॥ अथं व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रथम ह्विर्निरुप्याता इति। व प्राप्तराकीत्या। वक्कित्यां किरिक्या। यन्मरुद्धं किरिक्या

त एंन्मध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मुरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम ह्विर्निरुप्यते विजित्यै। साक स्यूर्यणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वे लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्थ्समृंद्धौ। एतद्वाह्मणान्येव पश्चं ह्वी स्षि। एतद्वाह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

उद्धारं वा एतमिन्द्र उदेहरत। वृत्र॰ हृत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुभेवंति। उद्धारमेव तं यर्जमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एककपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माणि यजंमानोऽवं रुन्धे॥५१॥

ऋद्धतेऽभ्यंअते जुहोति वृणामहै भवत्यष्टौ चं॥

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुणप्रघासैर्वरुण-पाशादमुश्चत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पित्रयनेनं सर्वां लोकम्यामयत्। यदैश्वदेवेन यन्त्रे। प्रजा प्रव

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्। यहैंश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मुंश्वति। साक्मेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवदयते॥५२॥

पितृयुज्ञेनं सुवृगं लोकं गंमयित। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपित। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदृत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपित्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमाय पितृमते पुरोडाशृष्ट् षद्वंपालं निर्वपित। संवथ्सरो वै सोमः पितृमान्॥५३॥

संवथ्सरमेव प्रींणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्धों धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रींणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं छोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्यौंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धुमासानेव प्रींणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्युर्धो देवानांम्। अर्थः पिंतृणाम्। अर्थ उपंमन्थति। अर्थो हि पिंतृणाम्। एक्योपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारम्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानाँम्। मृध्यतौँऽग्निराधीयते। अन्त्तो हि देवानांमाधीयतै। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मनुष्यलोकात्। यत्पर्रेषि दिनम्। तद्देवानाँम्। यदंन्तरा। तन्मनुष्यांणाम्॥५७॥

यथ्समूंलम्। तित्पंतृणाम्। समूंलं बुर्हिर्भवित् व्यावृंत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्तरं यजुंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तृष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिद्ध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिंगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षा ५सि

यज्ञ १ हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिंदधाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथों मृत्योरेव यजंमान्मुथ्सृंजिति। यत्रीणिं त्रीणि ह्वी १ ष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषा १ साकं प्रमीयेरन्। एकंकमन्चीनांन्युदाहंरिन्त। एकंक एवैषांम्नवश्चः प्रमीयते। कृशिपुं किशप्व्याय। उपवर्हणमुपवर्हण्याय। आञ्चनमाञ्चन्याय। अभ्यञ्चनमभ्यञ्चन्याय। यथाभागमेवैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निर्वदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखांता भवति मनुष्याणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्भीयते पश्चे

अग्नयं देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानुं ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघारयति। यज्ञपरुषोरनन्तरित्यै। नार्षेयं वृणीते। न होतारम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। प्रमायुंको होता। तस्मान्न वृंणीते। यजमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

युज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजति। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥ ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवेभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयित द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरं। अहं एवेनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयित। रात्रियै द्वितीयंया। ऐवेनान् याज्यंया गमयित। दक्षिणतोऽवदायं। उद्कृति कामित व्यावृत्त्ये॥६४॥

आ स्व्धेत्याश्रांवयित। अस्तुं स्व्धेतिं प्रत्याश्रांवयित। स्वधा नम् इति वर्षद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संव्थसरो वै सोमंः पितृमान्। संव्थसरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिषदो यजित॥६५॥

ये वै यज्वानः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनिग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरौं-ऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजित। अग्निं कंव्यवाहेनं यजित। य एव पितृणामृग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजीत। ताहगेव तत्। एतत्ते तत् ये च त्वामन्विति तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तै। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्याह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा व मनुष्याणां दिक्। स्वामेव तिहश्ममनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुवते। यथ्सत्याहवनीयै।

अथान्यत्र चरन्ति। आतर्मितोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृत्रिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतर्मितोरुप तिष्ठन्ते। सुसन्दर्शं त्वा वयमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै स्ंस्-ह्क्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यमि प्रपंद्यन्ते। अमींमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्ं॥६९॥

अथों तर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां प्शुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावनूयाजो यंजति। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। चतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंनूयाजो। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्थन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्थन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयोजयन्ति। पत्निये गोपीथायं॥७०॥ होतांप्माज्यंभागो यजित् सन्तंत्मवंद्यति व्यावंत्ये बर्हिषदी यजित् तमेव तद्यंज्ञत्वनु निष्कांमन्त्याहेनानृतवो नवं च॥——[९]

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितिरिक्तम्। जुनिष्यमांणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

एकोल्मुकेन यन्ति॥७१॥ तिद्ध रुद्रस्यं भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य

दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अंपुशुकाया आहंत्यै नातिष्ठत। असौ ते पुशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमस्मै पुशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पुशुरितिं ब्रुयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पङ्घीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मृध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पुष तें रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिक्येत्यांह। शुरद्वा अस्याम्बिका स्वसाँ। तया वा एष हिंनस्ति। यश हिनस्ति। तयैवैनर्श्र सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावेन्त एव ग्राम्याः पुशवेः। तेभ्यों भेषुजं करोति। अवाँम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूतेंकृत्वाऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेंऽवसं करोतिं। ताहगेव तत्। एष तें रुद्र भाग इत्यांह नि्रवंत्त्यै। अप्रंतीक्षमा यन्ति। अपः परिंषिश्चति। षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

रुद्रस्यान्तर्हित्यै। प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं चुरुं पुनुरेत्य निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्निरवंदयते शास्ते सिश्चति पद्गां

अनुंमत्यै वैश्वदेवेन ताः सृष्टास्त्रिवृत्युजापंतिः सिवृतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौँऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रधासैरग्नये देवेभ्यः प्रतिपुरुषं दर्शा॥१०॥

अर्नुमत्यै प्रथमुजो वृथ्सो बहुरूपा हि पुशवस्तस्मात्पृथमात्रं यदुग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नये देवेभ्यः प्रतिपुरुषं पर्श्वसप्ततिः॥७५॥

अनुमत्यै प्रतिं तिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पृतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षि। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पृरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरं। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयों भवति। वायुर्वे वृष्ट्यं प्रदापयिता। स एवास्मै वृष्टिं प्रदापयित। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं श्लोके वृष्टिं धृता। स एवास्मै वृष्टिं नियंच्छित॥१॥

द्वाद्शग्वर सीरं दक्षिणा समृद्धै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुंरान्भिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इति। स त्रेधाऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सौंऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौंऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावह्। इतिं। तौ समसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिंन्द्रतुरीयस्यैन्द्रतुरीयृत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांऽऽग्नेयी। यद्गोः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्स्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजा-पंतिर्युज्ञमंसृजत॥४॥ तर सृष्टर रक्षाईस्यजिघारसन्। स पृताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षारेसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य पृव तद्यजमानो रक्षारेसि प्रणुंदते। समूंढर् रक्षः सन्दंग्धर् रक्ष इत्यांह। रक्षाईस्येव सन्दंहति। अग्रयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धै॥५॥

इन्द्रों वृत्र रहत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। त र शृच्यांऽगृह्णात्। तौ समंलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्धार सन्दंधावहै। अथु त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण नाऽऽर्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स एतम्पां फेर्नमसिश्चत्। न वा एष शुष्को नाऽऽद्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुदितः सूर्यः। न वा एतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिल्लोके। अपां फेर्नेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्ततः मित्रंद्रुगिति॥७॥

स पृतानेपामार्गानेजनयत्। तानेजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहतः। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध रक्षंसां भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षारंसि हन्ति॥८॥ स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदुरे वां। पृतद्वै रक्षंसामायतनम्। स्व पृवायतंने रक्षा रंसि हन्ति। पूर्णमयंन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मंणैव रक्षा रंसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्याह। सिवृतुःप्रंसूत पृव रक्षा रंसि हन्ति। हृत रक्षोऽवंधिष्म रक्ष इत्याह। रक्षंसा रूप्ति स्तृत्ये। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रतीक्षमायंन्ति। रक्षंसा मृन्तर्रहित्ये॥ ९॥

युच्छृति वरुणं तृतीयं विजित्या असुजत् समृद्धै हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥——[१]

धात्रे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजंनयति। अन्वेवास्मा अनुंमतिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जंनयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकां-दशकपालं निर्वपति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्णुवं त्रिकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्ये प्रतिष्ठापयति। तस्मौत्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनौऽऽग्नेयः। यद्देष्मः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धै। अग्नीषोमीयमेकांदश-कपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चुरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजानयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बुभुर्दक्षिणा

समृंद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पेशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापियता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पुशून्प्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भवति। इयं वै पूषा।

अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। श्यामो दक्षिंणा समृंद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वानुरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निर्वैश्वानरः। संवथ्मरेणैवैन ईं स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिंणा॥१४॥ पवित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्। बहु वै राजन्योऽनृतं करोति। उपं जाम्यै हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते

खलु वै क्रियमाणे वर्रणो गृह्णाति। वारुणं यवमयं च्रं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवतयाऽश्वः समृद्धौ॥१५॥ पुन्द्रा<u>वैष्ण</u>वमेकांदशकपालुं यदंषुमो दर्धाति पूषा पुशून्प्रजनयित हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं च॥**——[२**]

रि्रामितानि हवी १षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारः। एतेंऽपादातारंः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येंऽपादातारंः। त एवास्मैं

राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्समाहृत्यं निर्वपेत्। अरंत्रिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रत्नित्वायं॥१६॥

यथ्सुद्यो निर्वपैत्। यावंतीमेकेन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निवंपति। भूयंसीमेवाशिष्मवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञकृतूनुपैति। बार्हस्पृत्यं च्रुं निर्वपिति ब्रह्मणों गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमुन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल र राजन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋषुभो दक्षिणा समृंद्धे। आदित्यं चुरुं महिंष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृंद्धे। भगाय चुरुं वावाताये गृहे। भगमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृंद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्ये गृहे कृष्णानां व्रीहीणां न्खनिर्भिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपाल र सेनान्यों गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। वारुणं दशंकपाल र सूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धै। मारुत र सप्तकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥

अत्रृं वै मुरुतः। अन्नेमेवावं रुन्धे। पृश्जिर्दक्षिणा समृंद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षत्तुर्गृहे प्रसूँत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृंद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यामेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृंद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥

अन्नं वै पूषा। अन्नमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धै। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते। शुबलु उद्वारो दक्षिणा समृद्धी द्वादेशैतानि हवी १ षि भवन्ति। द्वादेश मार्साः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मै राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भंवति॥ २१॥

यन्न प्रंति निर्वपेता रिन्न आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाशमेकांदशकपालम्। इन्द्रांया १ होमुचै। आशिषं पुवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वध्यादित्याह। आमेवैतामा शाँस्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भेवति। श्वेतायै श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्हस्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चे समीची दधाति। अथो ब्रह्मेन्नेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्हस्पत्येन् पूर्वेण प्रचरित। मुखत एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति।

ब्रह्मन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बुर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यमभिजिंतम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा समृंद्धै॥२३॥ र्बित्वाय समृंद्धै पष्टौही दक्षिणा समृंद्धौ ग्रामुण्यों गृहे भांगदुघस्यं गृहे भंवित दुग्धेंऽभिजिंत्यै द्वे

देवसुवामेतानि हवी १ पि भवन्ति। पुतावन्तो वै देवाना ५

स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन १ सुवन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ सुवते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृहस्पतिर्वाचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानाम्। मित्रः सत्यानाम्॥२४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वाँ प्रस्वाना स्मवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मृह्ते क्षत्रायं मह्त आधिपत्याय मह्ते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिंदधाति। स्वां तनुवं वर्रुणो अशिश्वेदित्यांह। वरुणसवमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवैनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवैनम्ं। सर्वे व्राता वर्रुणस्याभूविन्नित्यांह। सर्ववातमेवैनं करोति। वि मित्र एवैररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमेवैनं तारयति। असूषुदन्त यज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जंिरमाणं न आनुडित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं हृविषांमग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुक्रमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि जयित॥२७॥ स्त्यानांमधायीत्यांहातारीदित्यांह कमत् एकं च॥———[४]

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों हिविष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंम्भिवंहन्ति। अपां पतिरसीत्याह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्याह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवेनं करोति। वृष्सेनोऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। वृज्क्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मुरुतः। अन्नमेवावं रुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा पृतत्। यद्वर्षिति। अर्नृतं यदातपिति वर्षिति। सृत्यानृते पृवावं रुन्थे। नैनर् सत्यानृते उदिते हिर्इस्तः। य पृवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्याह। पृशवो वे शक्वंरीः। पृश्नेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव पंयुस्व्यंकः। जुनुभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्याह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेजस्र्यंकः। अपामोषंधीना<u>ः</u> रसः स्थेत्यांह।

राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। पुषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन समानानां करोति। षोड्शभिंगृह्णाति। षोड्शकलो वै प्रकृषः। यावांनेव प्रकृषः। तस्मिन्वीर्यं द्वाति।

षोर्डशकलो वै पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिर्जुहोतिं षोड्शभिर्गृह्णाति। द्वात्रिर्श्शथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्शदक्षराऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुफ्सर्वाणि छन्दार्श्सि। वाचैवैनुर्

-सर्वेभिश्छन्दोंभिरभिषिंश्चति॥३२॥

कुर्मिरित्यांहु सूर्यवर्षमः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्ष्ययंकसतेज्ञस्याः स्थेत्यांहुव पुरुषः पद चं॥———[५] देवीरापः सं मधुमतीर्मधुमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवैनाः सर्भृजति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्त्यांह। ब्रह्मणैवैनाः सादयति। अन्त्ररा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु १ सिनश्च सादयति। आग्नेयो वै होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु १ सी। तेजसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिर्रण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि प्वित्राभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृत्त्ये॥ ३३॥

शृतमानं भवति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्याह। अनिभृष्ट्रः ह्येतत्। वाचो बन्धुरित्याह। वाचो ह्येष बन्धुः। तृपोजा इत्याह। तृपोजा ह्येतत्। सोमस्य दात्रम्सीत्याह॥३४॥

सोर्मस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुका वंः शुक्रेणोत्पुनामीत्यांह। शुका ह्यापंः। शुक्र॰ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र॰ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृतु॰ हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्ञसूयायेत्यांह। राज्ञसूयांय ह्यंना उत्पुनातिं।
स्धमादौँ चुम्निनीरूर्ज एता इतिं वारुण्यर्चा गृह्णाति।
वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकया गृह्णाति। एक्थेव यर्जमाने
वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योत्वंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीतिं ता्र्यं चोष्णीषं
च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति।
शतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः। आत्मैकंशतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबलिमेवेनं करोति। आविदं एता भेवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावित। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः। मित्रावरुंणौ प्राणापानाभ्यांम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंन्ने द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविंन्ने द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावामुष्यायणौऽस्यां विश्यस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवैन रे राष्ट्रेण समर्धयित। मृह्ते क्षुत्रायं मह्त आधिपत्याय मह्ते जानराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्यांह। तस्माथ्सोमराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। श्रात्रुवाधनाः स्थेतीषून्। श्रात्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात माँ प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्चमून्चीं। ताभ्यं पुवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पुवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं व वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥ व्यावृत्ये वात्रमुसीत्याह्मत्रः हरंण्यमेकश्वो गंमयुन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यं पातेत्याह ब्रव्वारं व॥६॥

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्त्यै। यदंनु प्रकामैंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मनुसाऽनु प्रक्रांमति। अभि दिशों जयति। नोन्माँद्यति। सुमिधुमा तिष्ठेत्याह। तेजं पुवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्याह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराज्मातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यमेवावं रुन्धे। उदींचीमा तिष्ठेत्यांह। पृशूनेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनूजिंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्यै॥४२॥ मारुत एष भेवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृश्वभिरारण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्माद्भाम्यैः पृश्वभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिर्वैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभंवत्। स पृतानिं पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानिं जुहोतिं। राष्ट्रमेव भंवति। बार्ह्स्पृत्यं पूर्वेषामुत्तमं भंवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति॥४४॥

षद्वुरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षड्वपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानां मेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपां व्याधो भविति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रयत्रेव मृत्युर्जायते। ततं पुवैन्मवंयजते। तस्मांद्राज्सूयेंनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेंनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥ कुन्धे समंध्या असिच्यत स्थापयित जायंत पश्चे च॥——[७]

सोमंस्यु त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भयादिति शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र् हिरंण्यम्। अमृतंमसि मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्धत्ते। शतमानं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिष्ये निदंधाति। उभयतं पृवास्मै शर्मं दधाति। अवेष्टा दन्दश्का इतिं क्रीबर सीसेन विध्यति। दन्दश्कानेवावयजते। तस्मौत्क्रीबं दन्दश्का दरशुंकाः। निरस्तं नर्मुचेः शिर् इतिं लोहितायसं निरस्यिति। पाप्मानमेव नर्मुचें

सोमो राजा वर्रणः। देवा धर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचरं सुवन्तां ते तैं प्राणर सुवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीतिं। तेजस्व्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवेत्। सोमंस्य त्वा द्युग्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥

निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चिति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योर्वीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्सेत्यांह॥४९॥

ओजं पुवास्मिन्दधाति। क्षुत्राणां क्षुत्रपंतिरुसीत्यांह। क्षुत्राणांमेवेनं क्षुत्रपंतिं करोति। अतिं दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं बुरेत्याग्री द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्याह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। यर हिनस्ति। तेनैवैनर् सह शंमयति। तस्मै हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्याह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्ये प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भेवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नुन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यः। विशंमेवास्मिन्युष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मै कत्पयिति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥ भवत्याहः पुरुष् अजुन्नेत्याह निर्वद्यते यजते जन्ये हे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मणैवैनं देवतांभ्यां युनिक्त। प्रष्टिवाहिनं युनिक्त। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्में युनिक्त। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसार्थी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनं युनक्ति। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिज्यति। यः क्षृत्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति॥५४॥

म्रुतां प्रस्वे जेष्मित्यांह। म्रुद्धिरेव प्रसूत् उज्जयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनांकान्त एवाकंमते। वि वा एष इंन्ड्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हमिन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्थंते। पृश्नां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंश्नां मृन्युमात्मन्थंते। अभि वा इय स्पंषुवाणं कांमयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि रसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण उपंहरति। एक्धैव यर्जमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्यै॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मांचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठेताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवृगदिवैनं लोकादन्तर्दधाति। हुर्सः शृंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावृहरंति। ब्रह्मणाऽऽदंधाति। अतिच्छन्दसाऽऽदंधाति। अतिच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दार्रस। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा पृषा छन्दंसाम्। यदितंच्छन्दाः। यदितंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म् वेमरं समानानां करोति॥५८॥

पद्मन्ते दुधाति वीर्येणेत्याहानाँत्यै प्रतिष्ठित्यै ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥ [९]

मित्रोऽसि वर्रुणोऽसीत्याह। मैत्रं वा अहं। वारुणी रात्रिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनंमुपावंहरति। मित्रोऽसि वर्रुणोऽसीत्याह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सृव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भागुधेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वदेवेरित्याह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरसि क्ष्रत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः पुस्त्यांस्वा साम्राज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्राज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति।

ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सत्यसेव इत्यांह। सवितारमेवेन॰ सत्यसेवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैन र सृत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैन र सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्मासि वर्रुणोऽसि सृत्यधर्मेत्यांह। वर्रुणमेवैन र सृत्यधर्माणं करोति। सृविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरित। इन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। स्त्यमेता देवताः। स्त्यमेतानि छन्दारंसि। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते पुवावं रुन्धे॥६२॥

नैन र सत्यानृते उदिते हि इस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणैवास्मां अवरपुर १ रेन्थयति। एव हि तच्छ्रेयः। यदस्मा एते रध्येयुः। दिशोऽभ्यंय राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओ्दनमुद्भुंवते। पुरमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। पुरमामेवैन् ॥ श्रियं

गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)नित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वृरुणपाशादेवैनं मुश्लित।
परः शतं भंवित। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति
तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि शतिकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया
अग्नयं स्वष्टकृतं समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति।
अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नयं गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र
आहुंतीर्ज्ञाहोति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति॥६४॥
वैवेरित्यांह स्त्यसंवं करोति विष्ठभ्मेवेवेतनांभि व्याहंरित सत्यान्ते प्रवावं रूप्ये करोति श्वेतिश्चः पर

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रुब्निनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीदिंशः सोम्स्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पृतद्वाँह्मणानि वैष्णुवं त्रिंकपालमत्त्रं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांहु दिशो व्यास्थापयृत्युदंहुरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजुञ्चतुंष्पष्टिः॥६४॥

- एतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स्रस्द्रिरनु समंसर्पत्। तथ्स्रस्प्रपारं सरस्त्वम्। अग्निनां देवेनं प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुंङ्का। सरस्वत्या वाचा द्वितीयें। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीयें। पूष्णा पृश्भिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षष्ठे। वर्रुणेन स्वयां देवतंया सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञांऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनांऽऽप्रोत्। यथ्स्रेसृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमान आप्रोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। पुरस्तांदुपसदार्थं सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पुव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं पुव हितं त्वष्टां रूपाणि विकरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ पुवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

स्प्तमे देधाति पश्चं च॥———[१]

जामि वा एतत्कुंर्वन्ति। यथ्सुद्यो दीक्षयंन्ति सुद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवुर्गं लोकं यन्तः। अपसु दीक्षातपसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षातपसी अवं रुन्थे। दुशर्भिर्वथ्सतुरैः सोमं क्रीणाति। दशाँक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराद। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। मुष्क्रा भंवन्ति सेन्द्रत्वायं। दृश्पेयों भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। स्मुदुशः स्तोत्रं भंवति। सुमुदुशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरात्यै। प्राकाशावध्वयंवे ददाति। प्रकाशमेवेनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अश्वं प्रस्तोतृप्रतिहुर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अश्वं। प्रजापंतेरात्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावं रुन्धे। वशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु १सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रिया-व्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रें एवास्यैते। स्थूरिं यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहं मुग्नीधें। विहुर्वा अनुङ्गान्। विहुर्ग्नीत्। विहुर्नेव विहुं युज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतींयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतींयम्। सरंस्वती तृतींयम्। भार्ग्वो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृंह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यः श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विगद्वजापंतिरक्षः प्रजापतेगार्यं यजते बह्मसामं भवति सम चं॥————[२] ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। ह्विषोंहविष इष्ट्वा बांर्हस्पृत्यम्भिघांरयति। यज्मानदेवत्यों वै बृह्स्पतिः। यजमानमेव तेजंसा समर्धयति॥८॥

आदित्यां मुल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्किं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं सुमीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्माँद्राष्ट्रं विश्वमितिवदित। गुर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेविन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मारुती। विश्वे मुरुतः। विश्वेमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरानुभ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सृत्यमवांरुन्धत॥१०॥

यदिश्वभ्यां पूष्णे पुंरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव

भ्रातृंव्यानभिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे चुरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। सवित्रे सत्यप्रसवाय पुरोडाश्वं

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

द्वादंशकपालं प्रसूँत्यै। दूतान्प्रहिणोति। आविदं एता भेवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्व श्रंष्कदृतिर्दक्षिणा समृद्धौ॥११॥
अर्थ्यति भवत्यक्ष्यत् गुम्यन्ति हे वं॥
[3]

आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्माँद्वसुन्तं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्माँत्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्धते। बार्हुस्पृत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्रं द्वादंशकपालम्। तस्मांञ्जघन्यें नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपञ्चाला यांन्ति। सार्स्वतं च्रुं निर्वपति। तस्मांत्प्रावृषि सर्वा वाचों वदन्ति। पौष्णेन व्यवंस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन विधृता आसते। क्षेत्रपृत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानि ह्वी १ वि निरुप्याणीत्यांहुः। तेनै वर्तून्प्रयुंङ्क् इति। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्नि रुप्याणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनै वर्तून्प्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तरं उत्तरेषाम्। संवथ्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

त्वाष्ट्रमष्टाकंपालं दधते युनक्तयेकं च।

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दशधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठींवत्। तत्क्वंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यन्नस्तः। स सि १ हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँद्रिलः। यत्कर्णयोः। स वृक्षः। य ऊर्ध्वः। स सोर्मः। याऽवांची। सा सुरां। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धे। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दशमी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी। प्राणा इंन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यर्जमान आत्मन्धंत्ते। सीसेन क्लीबाच्छप्पाणि क्रीणाति। न वा एतदयो न हिर्ण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृद्धौ। स्वाद्वीं त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवेनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सर्रस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्याह। एताभ्यो ह्येषा देवताभ्यः पच्यते। तिस्रः स॰स्ष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुतमिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्यै। पवित्रंण पुनाति। पवित्रंण हि सोमं पुनिन्तिं। वारेण् शश्वंता तनेत्यांह। वारेण् हि सोमं पुनिन्तिं। वायुः पूतः पवित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिपवितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिंरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। पृक्षयेव यजमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ व देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सारुस्वतं मेषम्। वाग्वै सरंस्वती। वा्चैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ १ सैन्द्रत्वायं॥२०॥
अक्ष्युलीमानि हिरंण्यं वसित गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥————[५]

यित्रषु यूपेंष्वालभेत। बृहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्धैवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्यंते। युव सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवृत्यं

याज्यानुवाक्ये भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुत्या

उच्छेषंणस्य पाता। यदि ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः। यद्वे सौँत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्ये समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्व पुरोडाशांश्व भवन्ति समृद्धे। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥ इन्द्रिये प्वास्मै स्मीची दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचंरति। पृशवो वै पुरोडाशाः। पृश्नूनेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं प्रसूत्ये। वारुणं दशंकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। वर्डवा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृद्धे। बार्ह्स्पृत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणेव यज्ञस्य व्यृद्धमिपं वपित। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णतेतिं शतातृण्णायार्थं सुमर्वनयित॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्ये। हिरंण्यमन्तरा धारयित। पूतामेवनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। यः सोमोऽति पवंते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिंन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्धे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। अथो त्रीण वै यज्ञस्यैन्द्रियाणिं। अध्वर्युरहोतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते।

यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मै भेषुजं करोति॥२६॥ प्रण्णाते प्रथमो दक्षिणा समर्वनयति धारवंतीन्द्रियाणि चल्वारि च॥———[६]

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा ऋंमते। अथैषोंऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्दे देवताः। ता एवाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शः। तमेवाऽऽप्नोति। स्ष्श्रर एष स्तोमानामयंथा-पूर्वम्। यद्विषमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै युज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणुं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पवंमानाः। तेनाऽसर्श्वरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्प्नोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृश्ववं उक्थानिं। यदुक्थ्यों भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥ स्त्रोमाः पृश्ववं उक्थानिं। व

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भंवति। वाग्वे वायः। वाच पृवैषोंऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजानारं सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। पृतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्याह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्यां अक्रन्ं॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्तिं। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यंनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपंनमित। यः सामंभ्य एतिं। पापींयान्थ्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामांनि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवंन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिंश्लोक ऋंभ्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिंश्लोक ऋंभ्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋभ्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शोऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भंवति। एकविश्शः केंशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तदुशो दंशपेयंः॥३२॥

विड्वा एंकविश्वाः। राष्ट्रश् संप्तद्याः। विश्रं एवैतन्मध्यतींऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विश्रां प्रियः। विश्रो हि मध्यतींऽभिषिच्यते। यद्वा एंनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्सुवर्गं लोकम्भ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिज्ञनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहति। अथों अस्मिन्नेव लोकं प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥
अक्षत्राज्ञन्यों भवंति दश्पेयों माद्येशीण व॥——[८]

ड्यं वै रंजुता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्टिय्यमान्स्या-ऽऽपंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंघ्नन्। तथ्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। भवति शतक्षंरः। शतायुः पुर्रुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वै हिरंण्यम्। तेजस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वै हिरंण्यम्। वर्चस्यां पुवैनंमुभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

अप्रतिष्ठितो वा एष इत्याहुः। यो राजुसूर्येन यजंत इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ

संवथ्सरमाप्रोति। यावन्ति संवथ्सरस्याहोरात्राणि। तावतीरेतस्य स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्ठोमः पूर्वमहंर्भवति।

अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहोरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यष्टकायामुत्तरम्। नानैवार्धमासयोः प्रति तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंभवति। उद्दृष्ट उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रति तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिं-ष्ठित्यै॥ ३६॥

अपुशुब्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी। गायत्रं च त्रैष्ट्रंभं च। जगंतीमन्तर्यन्ति। न तेन जगंती कृतेत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीति। यदा वा एषाऽहीनस्याहर्भजंते। साह्रस्यं वा सर्वनम्। अथैव जर्गती कृता। अर्थ पशुव्यः। व्यृष्टिर्वा एष द्विरात्रः। य एवं वरुंणस्य प्रतिं तिष्ठति॥

विद्वान्द्विंरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं पुवापं हते। अग्निष्टोममंन्तत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतास्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तंरुं प्रतिष्ठित्ये पशृष्यः सप्त चं॥———[१०]
वर्षणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्नेयमिन्द्रंस्य यत्रिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वे रंजुताऽप्रीतिष्ठितो दर्श॥१०॥
वर्षणस्य यदिश्विभ्यां यत्रिषु तस्मादृद्वंतीः सप्तत्रिरंशत्॥३७॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टकम् २॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्चिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषणांजीवत्। तेंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंऽस्या ओषधीर्न जनयांम् इति। ते दिवो वृष्टिमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासां जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तेंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रिति। वयं भागधेर्यमिच्छमाना इति पितरोंऽब्रुवन्। किं वो भागधेयमिति। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भांगधेयं प्रायंच्छन्। यद्धत्वा निमार्ष्टि। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येति। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीति। तस्माद्वथ्यं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्र् ह्यंस्य। तस्माद्वथ्यः सर्थसृष्टध्यः रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥ अलिम्वेद पार्व् एकं वा [१] प्रजापंतिरग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग

उपाँस्त। सोँऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंव्रुरुंथ्समानोऽन्वैंत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सोँऽग्निरुपांरम्तातांपि वै स्य प्रजापंतिरिति। स रुराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिण्तः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलुक्ष्मी प्रांजापृत्येत्यांहुः। यद्र्राटांदुदमृष्ट। तस्मांद्र्राट्टे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा होषा(३)मितिं। तद्विंचिकिथ्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकिथ्संति॥५॥

वसीय पुव चेतयते। तं वागुभ्यंवदज्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य पुवइस्वांहाकारस्य जन्म वेदं। करोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्र्ममंजुहोत्। सोऽजामंस्जत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽग्नोतीति। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भागुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भागुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मादिग्नहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमानमादित्यौऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्माद्ग्नये सायश्हेयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आ्रमेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्यें प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेयः स्यात्। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नयं सायः हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अह्ना प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोति॥१०॥

प्रैव तेन जायते। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेन तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमपश्यत्। तद्दिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्य र राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावाऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांदग्निर्दूरान्नक्तंं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यमृग्निरन् समारोहित। तस्माँखूम एवाग्नेर्दिवां दद्दशे। यद्ग्नयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रांतर्जुहुयात्। आऽग्नये वृश्च्येत। देवताँभ्यः समदें दध्यात्। अग्निज्योंतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेत्येव साय होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योंतिरिग्नः स्वाहेति प्रांतः। तथोभाभ्या साय हंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समर्दं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रति-ष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्ये। यदुदिते सूर्यं प्रातर्जुहुयात्। यथाऽतिथये प्रद्रुताय शून्यायांवस्थायांहार्यर् हरंन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्स न वेदं। यस्मै तद्धरन्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौष्मसं परिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥
अमुष्ट विचिकिथ्मति जुह्रत्यजामंस्जनाग्रिहोनः स्यांय प्रातर्जुहोति जुह्रति स्म्पर्वते ह्यते स्थापयित

अमृष्टु विविधिकथ्यति जुहृत्युजामंसृजताग्निहोत्रः सूर्याय प्रातजुहाति जुहृति सम्पद्येते हूयते स्थापयति सम्प्रति द्वे चं॥——————[२]

रुद्रो वा पुषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयैत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गारान्निरूह्याधि श्रयति। पत्नियै गोपीथाये। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥ घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिञ्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंश्वयम्। न प्रति-षिञ्चेद्वस्ववर्चसकांमस्य। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्चसम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिञ्चति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यज्जुहोतिं। तद्भंह्मवर्चसि। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अर्गतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथो देवत्रैवैनंद्रमयति॥१८॥

पर्यम्नि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यम्नि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयेंत्। यजंमान शुचा- ऽपंयेत्। यदंक्षिणा। पितृदेवत्य इंस्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नीर्थ शुचाऽर्पयेत्। उदीचीन्मुद्वांसयित। पृषा वै देवमनुष्याणार्थ शान्ता दिक्। तामेवैन्दनूद्वांसयित शान्त्यै। वर्त्म करोति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपति। उपैव तथ्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्थे। सर्वान्यूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच उन्नंयित। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजाऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्ये। नाहौष्यनुपं सादयेत्। यदहौष्यनुपसादयैत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥ अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्च्येत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येंष्य्नतीतिं। स पृता स्मिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयोऽध्रियन्त॥२२॥

यदेन १ समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। सम्वैनं यच्छति। आहंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रम्वेध्मवंत्करोति। आहंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ स्मिधंमाधाय द्वे आहंती जुहोतिं। अथ् कस्या १ समिधं द्वितीयामाहंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा दृथ्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका रे स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहृंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्धंती आहृंती जुहोति। नास्मे भ्रातृंव्यं जनयित। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। तस्माँद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयित॥२४॥
भूवृत् प्रतिष्ठिष्वर्वतं गमयित प्रत्यक्ष्मवं उपनिभागींप्रयन्तित् तच्वतारं च॥———[3]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयों जुहुयात्। एषा वा उंत्तरावृत्याहंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। ततुस्तें ऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयंत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परेव भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृंत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतीक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुर्मृच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परि वृणक्ति। अथो भातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामति। अवाचीनर् सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ कं द्वे आहुंती भवत इति। अग्नौ वैश्वान्र इति ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँर्ष्टि। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षदथ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्रूयात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापृत्यम्॥३०॥

यन्निमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भांणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंश्वर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृंत्यै। उद्दिंशित। स्प्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावंर्तते। स्वमेव वीर्यमन् पूर्यावंर्तते। तस्माद्दक्षिणोऽर्थं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मन् पूर्यावंर्तते। हुत्वोपु समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य समिद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हेरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्नहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तत्यै। अपो नि नयिति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥ अभवन्भवित ज्रहुयात्रंयित मार्ष्ट् हिः प्रारक्षांति प्राजापुत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥——[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तिरक्षिमाग्नींद्धम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्र्हिः॥३४॥ वनस्पतंय इध्मः। दिशंः परिधयंः। आदित्यो यूपंः। यजंमानः

पृशुः। सुमुद्रोऽवभृथः। सुंवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः

सर्वमेव बंहिंष्यं दत्तं भंवति। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावंन्तो वै देवा अहंत्मादन्। ते परांऽभवन्। त एतदंग्निहोत्र ए सर्वस्येव संमवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृंतिमपश्यन्नितिं। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिंया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पशुकांमस्य। पृतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

ड्मामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंर्मा नंयित। योनांवेव तद्रेतः सिश्चिति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्व्येव भविति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वै पंशूना रूपम्। रूपेणैवास्मै पृशूनवं रुन्धे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। दुभ्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्यौष्धा वै मंनुष्याः। भागुधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयित। चतुंरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्वाक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामंन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रींणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रींणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रींणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदंः॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदी नमन्ति। विन्दते उपस्तारम्। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित्र् होतांरं ब्रह्माणं वषद्वारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंब्रह्मा। निमेषो वेषद्वारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वेंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमार्गच्छन्ति। तान् यन्न तर्पयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्तर्पयेंत्। तृप्ता एंनं प्रजयां पृशुभिंस्तर्पयेयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं सायः सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये च प्रात्यावाणः॥४३॥

तानेवोभया ईस्तर्पयति। त एनं तृप्ताः प्रजयां पश्भिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह एसायं प्रातवीज्ञं भार्तृंब्येभ्यः प्र हेरामि। तस्मान्मत्पापीयारसो भार्तृब्या इति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। समिथ्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वरी। शाक्वरो वर्जाः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रातविज्ञं यर्जमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मना। परांऽस्य भ्रातृं व्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातरहुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योपसदो वषद्वारश्चं प्रातुर्यावाणी वज्रस्रीणि

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्याँऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेँऽब्रुवन्। प्रजापंतिर-हौषीदात्मन्वन्में जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तुनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा ५ हतादंजायत गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमायन्। स आंदित्यों ऽग्निमंब्रवीत्। यतरो नौ जयाँत्। तन्नौ सहासदितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥

तुनुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अंग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्नि समर्धयति। अर्व्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजतमितिं। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंमभ्युंद्रवान्। तेन त्वां प्रींणानित्यंब्रुताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंमभ्युंद्रविति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानाः प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदालम्भ्यंमविंत्वा॥४८॥

प्रजापंतिमभि पूर्यावंर्तत। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्य-मात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांक्वर्यावंर्तत। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं ज्यति। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुर्षः। उतैकाहमुत द्यहं न जुह्नंति। हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्यों ऽग्निहोत्रम्॥४९॥ तुनुवै वायुर्ग्निर्भवत्यवित्वा भवत्येकं च॥

रौद्रं गर्वि। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमधि श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। -सारस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शर्रः। धातुरुद्वांसितम्। बृहस्पतेरुन्नीतम्। सवितुः प्र क्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र ५ हॅतम्॥५०॥ उद्वांसित रसप्त चं॥.

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदीचीमावृत्यं दोिष्ध। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्यं। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुद्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्थमण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंत्रीयमानम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। सवितुः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यर्थं ह्रियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। प्र सुंवृगं लोकं जानाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृश्भिमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषौंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकौँऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकंः। स्कृदेकंः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यर्जुषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥ यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँध्रुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्वयाँ। तूष्णीमुत्तंरा। उभे एवधी अवं रुन्थे। अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जंनयति। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्यौग्निहोत्रमहुंत्र् सूर्योऽभ्युंदेति। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङुदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातमितोरासीत। स यदा ताम्यैत्। अथ् भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवैनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छंति यजंमानः॥५६॥

त्रूणीं जीयते यर्जमानः॥————[९] यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे

जुह्वंति। वसुंष्वेवास्याँग्निहोत्तरे हुतं भेवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्याँग्निहोत्तरे हुतं भेवति। प्रथममिध्ममूर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्ह्यग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। आदित्येष्वेवास्याँग्निहोत्र र हुतं भंवति। सर्वं एव संर्वृश इध्म आदींग्नो भवति। विश्वें देवास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। विश्वेष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र रहुतं भंवति। नित्रामुर्चिक्पावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र॰ हुतं भवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजापंति-स्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्नि-होत्र हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंत्रेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। वसुषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वेषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्ं। अपरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतासु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ध्विप्रिरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्र॰ हुतं भंवति देवेषुं चुत्वारिं च (यद्ग्निन्निहिंतः प्रथम॰ सर्वं एव नित्रामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्वष्टो॥)॥————[१०]

ऋतं त्वां स्त्येन् परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। स्त्यं त्वर्तेन् परिषिश्चामीति प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः स्त्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनांऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौंऽस्ति। यस्यैवं विदुषौंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥———[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिरग्निर कुद्र उंत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रायणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयता-ऽऽत्मुन्बद्रौद्रङ्गविं दक्षिणृतस्त्रयो वे यद्ग्रिमृतं त्वां सृत्येनैकादशा।११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पश्नेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसर्वो दक्षिणतः पष्टिः॥६०॥

अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिं: ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येतिं। स एतं दशंहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहृत्वम्। यः कामयेत् प्रजांयेयेतिं। स दशंहोतार् मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंह्यात्। प्रजापंतिर्वे दशंहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजा-पंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनाद्धि प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना् सृष्ट्यैं॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनैंः प्रजापंतिः प्रजा अं-सृजत। यस्मादेव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो देक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानार्थं सृष्टानां धृत्यैं। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वारसं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्धथ्यं। ब्राह्मणं दक्षिणतो निषाद्यं। चतुंर्होतृन्व्याचंक्षीत। पृतद्वै देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। तदेव प्रकाशं गंमयति। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दर्भस्तम्बमुद्गथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचंष्टे। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानामुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट इति। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्धे॥५॥

अग्निमादधांनो दशंहोत्राऽरणिमवं दथ्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वृपस्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों यज्ञो वै दशंहोता। यज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव् वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवनमभि चरित। एतावद्वे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्र्याणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चरित। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवेनं निर्ऋत्या ग्राहयित। यद्वाचः ऋूरम्। तेन् वषंद्वरोति। वाच एवेनं ऋूरेण प्र वृंश्वति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥ व्यहेता स्वश्चं ऋष्वंश्वाचंटे रूप एव तेन्ते निर्ऋतिगृहीतं पश्चं चा——[१]

प्रजापंतिरकामयतं दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुर्होतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपांकामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दुर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंर्होतारं मनंसाऽनुद्गुत्यांहवनीयं जुहुयात्। दुर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चहोतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्याऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स चातुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपाकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतार्ं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानारं सृष्टानां धृत्यैं। सोऽकामयत पशुबन्धर सृंजेयेति। स एतर पह्वांतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सोंस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्॥१०॥

तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्थेनं यृक्ष्यमाणः। षङ्क्षीतारं मनंसा-ऽनुद्गुत्यांऽऽहव्नीयें जुहुयात्। पृशुब्न्थमेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्थस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमध्वर स्ंजेयेति। स एत स्महोतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्गुत्यांऽऽहव्नीयेऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमध्वरमंसृजत॥११॥ सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर स्पृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यो युज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। युज्ञस्य प्रभूँत्यै। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्जमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयंज्ञो वा एषः। योऽप्रक्रीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजनंनाय। उपसथ्सु व्याचंष्टे। एतद्वे पत्नीनामायतंनम्। स्व एवना आयत्नेऽवंकत्पयति॥१३॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेति। स तपोऽतप्यतः स त्रिवृत् स्तोमंमसृजतः। तं पंश्चदशः स्तोमो मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्तः। अपूरपक्षमन्वसुंराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादिति॥१४॥

तं पूँर्वपृक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भंवति। यं कामयेत् पापीयान्थ्स्यादितिं। तमंपरपृक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मात्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्कंरुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुरहोता पश्चंहोता। षड्ढोता सप्तहोता। ऋतवंः संवथ्सरः॥१५॥ प्रजाः पृशवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूयार्स्सं वेदं। बहोरेव भूयाँन्भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजतः। स इन्द्रमिष् नासृंजतः। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्माङ्स्तपुसाऽसृंक्षिः। एविमन्द्रं जनयध्वमितिं॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेति। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इति। ऋतू-थ्संवथ्सरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँक्षोकानित्यंब्रुवन्। तं वै माऽऽहंत्या प्र जंनयतेत्यंब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतिति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जायते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवृगंं लोकमियाम व्यं पूर्व इति॥१८॥

त आंदित्या पृतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरन्-वाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुव्गं लोकमायन्। यः सुव्गंकामः स्यात्। स पश्चंहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। सुंव्थ्सरो वै पश्चंहोता। सुंव्थ्सरः सुंव्गों लोकः। सुंव्थ्सर पृवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुव्गं लोकमेति। तेंऽब्रुव्नाङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥

कं स्थ। कं वः सुद्धो हृव्यं वंक्ष्याम् इतिं। छुन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायत्रियां त्रिष्टुभि जगत्यामितिं। तस्माच्छुन्दः सु सुद्धा आदित्येभ्यः। आङ्गीरुसीः प्रजा हृव्यं वहिन्ता वहिन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐनुमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश् मासाः पञ्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावदित्य एकविष्शः। एतस्मिन्या एव श्रितः। एतस्मिन्यतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादिति संवथ्सरो जंनयध्वमितीत्यंत्रवीत्पूर्व इत्यांदित्यानृतवः पद्गं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स एतं दशहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दशहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः स्रुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावान् यज्ञकृतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमितिं। तस्य सोमों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंम-सृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्ंषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तरिक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामांनि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुविरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमतिरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकाननुं प्रजाः प्रावृश्छन्दा रसि प्राजांयन्त। य पुवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहृंतीः प्रजाता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पशुभिंर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजत। स हविर्नाविन्दत। तस्मै सोमंस्तनुवं प्रायंच्छत्। एतत्तं हविरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तदस्याप्रिंयमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् १ हिरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यतः। सोंऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य

हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥ सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णोऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मांथ्सुवर्ण् र हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भंवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहों त्रेव सुंवर्गं लोकमैंत्। त्रिणवेन

स्तोमेनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्टशेन प्रत्यंतिष्ठत्। पुक्वि १शेन रुचमधत्त॥ २६॥ सप्तदशेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। सप्तहोंत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकेभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्र्यस्त्रि श्रोन प्रति तिष्ठति। एकवि श्रोन रुचं धत्ते। सप्तदशेन प्र द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

जांयते। तस्माँथ्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हृत्यंः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मंध्यतो धंत्ते प्रजाँत्यै॥२७॥

अनुन्दुद्भव इति व्याह्रपृद्धेदांसीह्रेदांधत् प्रजांत्ये॥———[४]

देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतायै दक्षिणामनयत्। तामंह्रीनात्। तैंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिगृह्णम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाष्ठीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास् इत्यांह। सौम्यं वै वासः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रतिगृह्णाति। वर्रणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिगृह्णाति। प्रजा-पंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। मनवे तल्पमित्यांह। मानवो वे तल्पः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। उत्तानायाँङ्गीरुसायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आँङ्गीरुसः॥३०॥

अनयेवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वानयर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वानरो वे देवतंया रथंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृतत्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। वयों दात्र इत्याह। वर्य एवैनं कृत्वा। सुवुर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वे शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवैषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्याह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेंन हि ददांति। कामेंन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कार्मः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कार्मः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशे-त्यांह। सुमुद्र इंवु हि कार्मः। नेवु हि कामुस्यान्तोऽस्तिं। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिंगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनंममुष्मिं लोक काम आगंच्छिति। कामैतत्तं पुषा तें काम् दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानोऽमुष्मिं होके दक्षिंणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतरिं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनुणामेवैनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥ ब्रीनात्यश्वमित्याहाङ्गीरुसः प्रंतिग्रहीत्र इत्याह प्रतिग्रहीतत्यांह दक्षिणेत्यांह चुत्वारि च॥————[५]

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दशमेऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तंं गत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्धते। तिसृभिंः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्धते। पृश्ञिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्ञिवा ३४॥

अन्नमेवार्व रुन्थते। मनसा प्रस्तौति। मनसोद्गायित। मनसा प्रिति हरित। मन इव हि प्रजापितः। प्रजापितेरास्यै। देवा वै स्पिः। तेषामिय राज्ञी। यथ्सपिराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रिति तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंश १ सित् शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्ये। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानौं पर्मं गृद्धं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह् १ श्वतुंरहोतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तंं गृत्वा। पर्मं देवानां गृद्धं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वार्चं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहंः। भातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यिद्ववा वार्चं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृजिति। पृतावंनतमेवासमे लोकमुच्छि १ षित। यावंदादित्यौऽस्तमेति॥३७॥ पृत्र्वं विष्ट्रित विश्वतः वार्चा अस्मज्ञतः। ताः स्रष्टाः समिक्षिष्यनः। ताः

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सृङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयंते॥३८॥ मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमिप् नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रंं नो जन्येतिं। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरानुभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं ह्योके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं युज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरुसं प्राहिंण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्येषु यृज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हृब्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यृज्ञो नंमित। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकाद्मुं लोकं किमिष्यन्त इति। स वाचेस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मात्पुत्रो हृदंयम्। तस्मादस्माल्लोकाद्मुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

देवा वै चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाङ्श्चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोता। प्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्तिं॥४२॥ ऋजुधेवैनंमुमुं लोकं गंमयित। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं पृवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयित। सुव्गर्यो वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुंव्गं लोकं गंमयित। ग्रहाँनगृहीत्वा स्प्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै सप्तहोता॥४३॥

ड्नियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन र सोमपीथो नमिति। बृहिष्पवृमाने दशंहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पवंमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पवंमाने पश्चंहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। युज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे स्प्तहोतारम्। अनुस्वनमेवैना इंस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैनः सोमपीथो नंमति। देवा वै चतुंरहोतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमित्ं यशंस्कामाः। तैंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषान्नस्तथ्सहास्वितिं। सोमुश्चतुंरहोत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षङ्कौत्रा॥४५॥

इन्द्रेः सप्तहोँत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषा् सोम् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैष्टत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तिन्निविदाँन्निवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो

व्यंगृह्णत। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वेंव गृंहीताः। तेंंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो-ऽभैत॥४७॥

तमंविधष्म। पुनिर्मि स्वामहा इति। तं छन्दीभिरसुवन्त। तच्छन्देसां छन्दस्त्वम्। साम्ना समानेयन्। तथ्साम्नः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानामुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवेनंमृच्छति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यंः। यशं एवेनंमृच्छति॥४९॥
अभिषुणवित्तं स्महौता वर्षयति पश्चौत्रा निवित्त्वमभूतिष्ठति प्रहेति हे चं॥————[८]

ड्रदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोंऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मौत्तेपानाद्धमोंऽजायत। तद्भयोंऽतप्यत।

तस्मौत्तेपानादग्निरंजायत। तद्भूयोंऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-दुर्चिरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयोऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भ्रमिव समहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनमिव् हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोता-ऽन्वंसृज्यत। प्रजापंति्र्वे दशंहोता। य पृवं तपंसो वीर्यं विद्वाइस्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापः सल्लिमांसीत्। सोऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स करमां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्पस्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्धमृष्ट। तद्न्तिरक्षिमभवत्। यद्र्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तदनयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य पृवं वेदं। नास्यं गृहे रुंदन्ति। पृतद्वा पृषां लोकानां जन्मं। य पृवमेषां लोकानां जन्म वेदं। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स ज्घनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहतः। सा तिमस्राऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यतः। सोंन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अंसृजतः। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाद्धेना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहतः। सा जोथ्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपों- ऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स उपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रजते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानं-सृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पुवं वेदं। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पुवं देवानां देवत्वं वेदं। देववांनेव भवति। पुतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य पुवमहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽधि मनोऽस्ज्यत। मनंः प्रजापंतिमस्जत। प्रजापंतिः प्रजा अंस्जत। तद्वा इदं मनंस्येव पंरमं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वोवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मे वस्यंसीवस्यसी व्युच्छति। प्रजायते प्रजयां पृशुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अभिरंजायत् तद्भयौंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्तासृंजत घृतमंद्रह्बाऽस्य सा तुनूरासीदहंरभवदच्छित् वेदं (इदं धूर्मौंऽग्निज्योंतिंरुचिंर्मरीचय उदारास्तद्भः स ज्ञघनाथ्सा तमिस्रा स प्रजनंनाथ्सा जोथ्सा स उंपपक्षाभ्याः सौंऽहोरात्रयाः सन्धिः स मुखात्तदहंदेंववांन्मृन्मये दारुमये रज्तते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रं पयो घृतः सोमम्॥॥———[९]

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रं देवानांम्। तं प्राहिंणोत्।

परेंहि। एतेषाँ देवानामधिपतिरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। वृयं वै त्वच्छ्रेया ५ सः स्मृ इतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं वृयं वै त्वच्छ्रेया ५ सः स्मृ इतिं मा देवा अंवोचन्नितिं। अथ वा इदं तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। पृतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष्यामीतिं। कोऽह स्यामित्यंब्रवीत्। पृतत्प्रदायेतिं। पृतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्भवीषीतिं। को ह वै नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं मृ आहरेति प्रालेपत्। तचन्द्रमंसश्चन्द्रमस्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चन्द्रवानेव भेवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत् इतिं। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाच्येव भवति॥६३॥

अयं वा इदं पंरमों ऽभूदिति। तत्पंरमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा दंक्षिणृतः। आदित्याः पृश्चात्। विश्वं देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्रम्॥६४॥

साध्याः पराश्चम्। य एवं वेदं। उपैन १ समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्याय। ता मुर्खं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दंक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुर्खं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुर्खं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तरतः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः सर्वतांमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मै प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्याय। य एवं विद्वान्परि च वृत्यंते नि च। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्याय। अन्नाद एव भविति॥६७॥ अमीद्वेदं चन्द्रमुस्तं य एवं वेदेन्द्रियाय्येव भविति प्रत्यश्चं मुखं दक्षिण्तो मुखं पृथान्नवं च॥-[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामिति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामिति। स दर्शहोतार् प्रयुंक्षीत। बहोर्भ्व भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजायेतेति। स दर्शहोतुश्चतुंरहोतार् निर्मिमीत। तं प्रायुंङ्कः॥६८॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २) तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म आजांयेतेतिं। स चतुरहोतारं प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्थस्यामिति। स चतुंरहोतुः पश्चंहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयंत पशुमान्थस्यामितिं। स

पश्चंहोतारं प्रयुं जीत॥६९॥

पशुमानेव भंवति। सोंऽकामयतर्तवों मे कल्पेरन्नितिं। स पश्चंहोतुः षङ्कोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवौऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेतर्तवों मे कल्पेरन्नितिं। स षट्टोतारं प्रयुंश्चीत। कर्ल्पन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोमपः सोंमयाजी स्यांम्। आ में सोमपः सोमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुङ्का। तस्य प्रयुक्ति सोमपः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोमपः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेंत सोमपः सोमयाजी स्याम्। आ में सोमपः सोमयाजी जांयेतेतिं। स सप्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोमप एव सोमयाजी भवति। आऽस्यं सोमपः सोमयाजी जांयते। स वा एष पशुः पंश्वधा प्रतिं तिष्ठति॥ ७१॥

पद्भिर्मुखेन। ते देवाः पशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिँ होके व्यंक्षुध्यन्। तेंंऽब्रुवन्। अमुर्तः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरसं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं। तस्य वा इयं क्रुप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सन्ध्यो देवेभ्यो हव्यं वहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। यो वै चतुरहोतूणां निदानं वेदं। निदानंबान्भवति। अग्निहोत्रं वै दर्शहोतुर्निदानम्। दुर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पुशुबन्धः षड्ढोतुः। सौम्यौ-ऽध्वरः सप्तहोंतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवति॥ ७३॥

अमिमीत तं प्रायुंङ्क पर्श्वहोतारुं प्र युंश्चीत जायेतेतिं तिष्ठति क्रृप्तिर्दशहोतुर्निदानर् सप्त चं॥—[११]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेतिं प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं प्रजापंतिरकामयत प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत दशहोतारं तेनं दशधाऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापितुस्ताः सृष्टाः समिश्रिष्यं देवा वै चतुरहोतृभिरिदं वा अग्रै प्रजापितिरन्द्रं प्रजापितरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥

प्रजापंतिस्तद्ग्रहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवेनुत्तस्य वा इयं क्रुप्तिस्तस्मात्तेपानाज्योतिर्यदस्मिन्नादित्ये स पड्ढांतुः सप्तहोतारं त्रिसंप्ततिः॥७३॥

प्रजापंतिरकामयत निदानंबान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमिति। यदेवैषु चतुर्धा होतांरः। तेन् चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चहोता। धाता षङ्कोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदं। ऋभ्नोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदं। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्रृप्तिं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। य एषामेवमायतंनं वेदं। आयतंनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदं॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता पङ्घांता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतांनामुपदेशंनात। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतांनामुपदेशंनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्ं। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्ं। अयमवांसादितिं॥३॥ स्महांना प्रतिष्ठा वेदं बुध्यन्ते। पृथमेनेवानुं वृद्यन्ते पर्वाः।

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्थ्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव

सिमंन्थे। तेजंसे वीर्याय। अथौ प्रजापंतिरेवैनौ भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्भृतः सन्तं निर्हरेरन्। आग्नीप्रे जुहुयाद्दशहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्गष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींप्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविंग्राहम्। प्राणानेवास्में कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयति। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षङ्कृता वै भूत्वा प्रजा-पंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोऽसृजत। मन्सोऽधि गायत्रीमं-सृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दार्श्स्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तथ्साम् यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्नोऽधि यजू ईंष्यसृजत। यजुभ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोम् यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधि पृशूनं-सृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुं नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव

यश्स्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अन्यवैन्तप्रतिगृह्णाति। नैन १ हिनस्ति। बर्हिषा प्रतीयाद्वां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥ विश्वाहंमृतवस्तवाऽलंभतेन्तं गृह्णीय्थदं॥——[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयेते। विशीर्षा सपाँप्माऽमुष्मिँ होके भंवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयेते। सशीर्षा विपाँप्माऽमुष्मिँ होके भंवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी च। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाँ। अग्निर्न्यंवर्तयत। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यं-वर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिर-पुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स र्षिमभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यं-वर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्ध-मासैर्मासैर्र्ऋतुभिः संवथ्सरेणापुष्यत्। तान्योषानपुष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयते परिं च॥१०॥ अपूष्वत्रक्षंत्रपुष्यत्वः च॥——[३]

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्थिमेन्द्रियस्यापाँकामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सोंऽर्धिमेन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्थिमेन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं
प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अर्थमंस्येन्द्रियस्यापंकामित। तस्य वे सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंकामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रंतिजग्रहुषंः। चतुर्थमिन्द्रियस्यापाकामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चंतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥

चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधेत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै वर्रणस्यार्थं प्रतिजग्रहुषंः। पृश्रुममिन्द्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स पंश्रुममिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। पृश्रुममिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। पृश्रुममिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पुश्चममंस्येन्द्रियस्यापंकामति। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स षृष्ठमिंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षृष्ठमिंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्र्यस्याऽऽत्मन्नुपाः धंत्त। सप्तमिनिद्र्यस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाः स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। स्प्तममंस्येन्द्रियस्यापं-कामित। तस्य वा उंत्तानस्याँऽऽङ्गीर्सस्याप्रांणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्र्यस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपा-धंत्त। अष्ट्रमिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रति-गृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अष्ट्रममस्येन्द्रियस्यापं-क्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृह्णातं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान औङ्गीर्सः। अन्येवैनत्प्रतिगृह्णाति। नैन १ हिनस्ति॥१६॥ वृतीयमिन्द्रियस्यापाकामबत्यिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाध्तार्थं प्रतिगृह्णाते पृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्रममिन्द्रियस्यापाकामव्यव्यापिकामत्यष्ट्रममिन्द्रियस्यापाकामव्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्यव्यापिकामत्याविकामत्याविकामत् ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृज्नतेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृज्नतेतिं। सोमेन वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनै्भ्यो लोकेभ्योऽसुरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनै्भ्यो लोकेभ्योऽसुरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कौतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेतिं। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः सत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ छोकान्थ्समं-तन्वित्रितिं। अर्थम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेनेमाँ छोकान्थ्समंतन्वित्रितिं॥१९॥

पुते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पुवं विद्वान्। अप्युन्यस्यं गार्हपते दीक्षते। अवान्त्रमेव स्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्युमण्ं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। युज्ञो वा अर्युमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशश्संन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य पुवं वेदं॥२०॥ यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वं चतुंरहोतारः। चतुंरहोतृभ्योऽिधं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंरहोतृन् वेदेतिं। स ह्यंव भूयो वेद। यश्चतुंरहोतृन् वेदे। यो वै चतुंरहोतृणा् होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमित्त॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दर्शहोतृणा् होताँ। सोम्श्चतुंरहोतृणा् होताँ। अग्निः पश्चंहोतृणा् होताँ। धाता षड्ढोतृणा् होताँ। अर्यमा सप्तहोतृणा् होताँ। एते वै चतुंर्होतृणा् होतां। अर्यमा स्प्तहोतृणा् होतां। एते वै चतुंर्होतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वां सु प्रजास्वन्नंमित्त। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥
आर्धुवृत्रार्थुव्वर्ष्वे वेदांति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं स्वक्कंत्रं॥)॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्नश्सत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंशृण्वन्। ता अंग्निहोत्रेणेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धुमुपौहन्। तस्मादग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं कृत्विक्। चृतुष्कृत्वोऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंश्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्या-वंर्तन्त। त उपौह् श्रृं खार्यङ्गांनि। तस्मां दर्शपूर्णमासयों यंज्ञऋतोः। चृत्वारं ऋत्विजाः। पृश्रृं कृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंश्वण्वन्। ते चातुर्मास्योरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्। तस्मां चातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥ पश्चर्त्विजः। षद्भृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुब्न्थेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतन्त। त उपौहुन्थ्स्तनांवाण्डौ शिश्वमवाश्चं प्राणम्। तस्मात्पशुब्न्थस्यं यज्ञऋतोः। षड्विजः। सम्भकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपर्यावंतन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षण्यान्प्राणान्। तस्माथ्सौम्यस्याध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीविषंद्भविन्ति। दृशकृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणेव संवथ्सरेण सर्वैर्यज्ञकृत्भिरुपं पूर्यावंतित। तथ्सर्वमात्मान्मपरिवर्गमुपौहत्। तस्माथ्संवथ्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्मादृशंहोता चतुरहोता। पश्चहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बृलि हरिन्ता। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बृलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य पृवं वेदं॥२६॥

चुन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानाँ यज्ञकृतोरेध्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पूर्यावर्तन्त सप्तहोता चुत्वारिं च॥———[६]

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्वितं। सोंऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीतिं। स एता श्रश्चतुं रहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञकृतुमां प्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुंर्होतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति दर्श- पूर्णमासौ। चत्वारिं चाऽऽत्मनोऽङ्गांनि स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पश्चमी। पश्चंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँग्नोति चातुर्मास्यानिं। लोमं छुवीं मा्र्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानि चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनावाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं।

आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्। स्प्त चाऽऽत्मनंः शीर्षण्यांन्प्राणान्थ्स्पृणोति। आदित्यस्यं च् सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति संवथ्सरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गङ् स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं

गच्छति॥३०॥

भूम्होत्रं मुक्कानुन्दिर्ज्होत्यपंरिवर्गः स्पूर्णात्यकं चा———[७]
प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेयेति। स तपोऽतप्यत।
सौऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोऽभवत्। तस्माथ्म्र्यन्तर्वन्नी।
हरिणी स्ती श्यावा भवति। स विजायमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मान्तान्तः कृष्णः श्यावो भवति।
तस्यास्रेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य एवम-सुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितॄनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ँ। स पितॄन्थ्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य पृवं मनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मृनस्त्र्यंव भंवति। नैनं मनुंर्जहाति। तस्मैं मनुष्यांन्थ्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानां देवत्वम्। य पृवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां है्वास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा पृतानि चत्वार्यम्भारंसि। देवा मनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य पृवं वेदं॥३३॥ अजीव्थ्स्वानं भवति देवानंस्जत सुम चं॥——[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायंरियात्। न पुराऽऽयंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थस्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भंवति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥ अस्याः पंवते। इमामभि पंवते। इमामभि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥ आदित्यमभि पंवते। आदित्यमभि सम्पंवते। द्योः पंवते।

आदित्यमाभ पवता आदित्यमाभ सम्पवता द्याः पवता दिवंमभि पंवते। दिवंमभि सम्पवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्माँत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानांम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ यद्देक्षिणतो वाति। मात्तिरश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वाति। तस्माँद्विणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश् आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरिश्वेव। अथ यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ् यदुंत्तर्तो वातिं। स्वितेव भूत्वोत्तर्तो वाति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तादायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्नन्ति। पुरस्तादितंरान्याप्मनंः सचन्ते। अथ् य एंनं दक्षिणत आयन्तंमुपवदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एंनं पृश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यं पृश्चात्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एंनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यौत्तरतः पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तर्त इतरान्पाप्मनः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषित। मृण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरिति। स यान्दिश्रं स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिश्रं वातों वायात्। अथ् प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वां कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सम्पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वाँत्येष पर्वमान एव देक्षिणत आयन्तंमुण वर्दन्युत्तर्तः पाप्मानुस्ताः स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥———[९]

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। तर होंवाच। नमस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्र त्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रद्धामु स कांमयत इति। तस्यां उ ह स्थांगरमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दर्शहोतारं पुरस्ताँ द्याख्यायं। चतुंर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। पङ्कोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारेश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। तार होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त १ होवाच। भोगुं तु मु आचंक्ष्व। एतन्म आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उ ह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुह स्त्रियो भोगुमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थांगरमेलङ्कारं कंल्पयित्वा। दर्शहोतारं पुरस्तौद्धाख्यायं। चतुर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। षड्ढोतारमुत्तरतः। सप्तहीतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलुङ्कत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भंवति॥४६॥ अयान्यलङ्कृत्यं स्यामितिं भवति॥

ब्रह्मात्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं दशुम ह्तः प्रत्यंशृणोत्। स दर्शहूतोऽभवत्। दर्शहूतो ह वै नामैषः। तं वा पृतं दर्शहृत्रू सन्तम्। दर्शहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं सप्तम ह्तः प्रत्यंशृणोत्। स सप्तहूंतोऽभवत्। सप्तहूंतो ह् वै नामैषः। तं वा एत सप्तहूंत ह् सन्तम्। सप्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं षष्ठ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स षड्ढूंतो-ऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा एत षड्ढूंत् सन्तम्। पड्ढो्तेत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै पश्चम हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स पश्चेहूतोऽभवत्। पश्चेहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चेहूत् सन्तम्। पश्चेहोतेत्याचंक्षते परोक्षेण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुत्रात्मृत्रित्यामंत्रयत। तस्मैं चतुर्थ र हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुंर्हृतोऽभवत्। चतुंर्हृतो हु वै नामैषः। तं वा एतं चतुंर्हृत् र सन्तम्। चतुंर्होतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै मे नेदिष्ठ र हूतः प्रत्यंश्रोषीः। त्वयैनानाख्यातार् इति। तस्मान्नु हैना्र्श्र्यतुंर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणा्र हृद्धांतमः। नेदिष्ठो हृद्धांतमः।

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यहशहोतारः प्रजापितिर्व्यस्त्रं प्रजापितः पुरुषं प्रजापितिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वान्ब्रह्मवादिनो यो वा डुमं विद्यात्प्रजापितिः सोम्॰ राजानं ब्रह्मात्मु-वदेकादश॥११॥ ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चे प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणृतः पेश्चाशत्॥५०॥ ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। शृत्रूयतामा भेरा भोजनानि। अग्ने शर्धं महृते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्युंत्तमानिं सन्तु। सञ्जांस्पृत्य स्यम्मा कृंणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्रस। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघार्सति॥१॥

ताइस्त्वं वृंत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नो-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ठ्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमिन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्म्-मदेंम। तिमन्द्रं वाजयामिस। मृहे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं गुवेषंण् हिर्रभ्याम्। उप् ब्रह्माणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुंवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृंणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुं चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

वातौं वातः॥७॥

सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां यृज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षारेसि सेधित। शुक्रशोचिरमंर्त्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हंसः॥६॥

प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठेर्जरों दह। अग्ने हश्से न्यंत्रिणम्ं। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षयें शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेष्जम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश्हि विश्वभेषजः। देवानांं दूत ईयंसे। द्वाविमौ

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु

यद्रपंः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु

मन्यें त्वा जातवेदसम्। स हव्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि

नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुंरिताऽतिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तुनूनांम्। पूषा गा

अन्वेतु नः। पूषा रेक्षुत्वर्वतः। पूषा वाजर्र सनोतु नः। पूषेमा

भेषुजम्। शुम्भूर्मयोभूर्नो हृदे॥८॥

प्र ण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नर्मः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सुम्राडेको विराजिति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतून्थ्सृंजते वृशी। कामस्तदग्रे समंवर्ततार्घि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। सृतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रथंशशानाः। उप प्रयंन्ति नरीं अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगो मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः।
मृन्युं विश्वं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण।
त्वमंग्ने व्रत्मृच्छुचिः। देवा श्र आसादया इह। अग्ने ह्व्याय वोढंवे।
ब्रतानुबिभ्नंद्वत्पा अदाभ्यः। यजां नो देवा श्र अजरंः सुवीरंः।
दध्रत्नानि सुविदानो अग्ने। गोपाय नो जीवसे जातवेदः॥११॥
जिष्णांसत्यमित्रां अप्नवानीं इते सर्व अर्रुसं वाति हुदे राजत्युप्रिरूपाः स्विदानो अंग्र एकं वाति [१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मां-ऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणा। यो मा चक्षुंषा यो मनसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणा। यत्किश्चासौ मनसा यर्च वाचा। य्ज्ञैर्जुहोति यजुंषा हविर्मिः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन सत्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत १ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँ त्रौ व उभौ बाह्। अपंनह्यास्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मंणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्वारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापृत्ररातयः। अन्तिं दूरे स्तो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्जेण। कृत्याः हंन्मि कृताम्हम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नों निपीयंति। अद्या तिमेन्द्र वर्जेण। भातृं व्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य साधंनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्ने श्वेकमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषारंसि तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सर्चेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भवतमद्य नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥ तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशुंचानः। प्रवरं सुधस्थमन् पश्यंमानः। आ तन्तुंमृग्निर्दिव्यं तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भविस देवयानंः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं वयमारुहेम। अथां देवैः संधमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशंं मध्यमश्रृंत। अवांधमानिं जीवसें॥१७॥

वय सोम व्रते तवं। मनस्तन्षु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमितः। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नी। उद शोन पतिविद्ये जिगाय। त्रि शदंस्या ज्यनं योजनािन। उपस्थ इन्द्र स्थिवंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंन अया। विश्वव्यं या अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविचाचिलः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि अशत्। ध्रुवा द्यौध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वमिदं जगत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशामयम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविंचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रम्ं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्रांणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं ह्विषां। तस्मै देवा अधिब्रवन्। अयं च ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥ ह्विभंगस्यंमभ् वसंतो विप्षित्मप्रंयावश्चीवस् वदांना व्यथिष्ठा ब्रव्तेकं च॥———[२]

जुष्टीं नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलांरिषाथ। यच्छक्ररीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेंभिर्वाजिनींवती। यृज्ञं वंष्टु धिया वंसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सुख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्नौ। अर्याम् स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अर्म्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रायि यृज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमिति ह्वये। इन्द्रं जैत्राय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतो हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्रमं नो युज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंर्मो हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिंः। मृन्द्रः कृविरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभवद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रे प्रथमो देवतानाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद॰ ह्विरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत् हि शंक्रा। विश्वेंद्वैर्यक्तियैः संविदानो। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधि क्षियन्ति भुवंनानि विश्वाः। नूमर्तो दयते

सनिष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥

प्र यः स्त्राचा मनंसा यजातै। पृतावंन्तन्नर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्रांय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य की्रयो जनांसः। उ्रुक्षिति स्रुजनिंमा चकार। त्रिर्देवः

पृंथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतचंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्रतवीयान्। त्वेष इ ह्यस्य स्थविंरस्य नाम्॥२५॥ दोतांरं चित्रर्रथमध्यस्य। यजस्ययजस्य केतः कर्णन्तमः।

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। युज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यदेवस्य मृह्रा। श्रिया त्वंग्निमितिथिं जनांनाम्। आ नो विश्वाभिक्तिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्ध्स्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृदृषंणु शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भिः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमह्रांम्। अविन्दुञ्चोतिर्बृहृते रणांय। अश्विनाववंसे निह्वंये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्रंयं नो अस्तु। आवां तोके तनये तूतुंजानाः। सुरह्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥

त्व र सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षों विश्ववेदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिह्त्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्र्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्ं। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजार सुंक्षिति र सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासुंतिः। विभूतद्युम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमों युज्ञस्य राध्यों हृविष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमज्जानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य मंहृतो मृहि ब्रवांत्। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्भ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ हृविषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

इमा धाना घृंतसुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्रर्र सुखतंमे रथैं। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदर्थे शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचंर्षणिप्रा वृष्भो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायां ह्यवाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपः समुद्रश्र् रथ्येव जग्मः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदीश् सोमः पृणतिं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यवाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्तुनुवें भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मार अंव पृतंनासु प्रयुथ्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिर्वृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णः। अहेंडमान् उपयाहि युज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्देवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थस्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो यज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृंता या विरेष्ठा। यया शश्वत्पिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तया पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्ञो वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गेच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतये। प्रात्यांवांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृधादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रह यज्ञमृश्विना दधांते। प्रश्र सन्ति कवयः पूर्वभाजः। प्रातर्यंजध्वमृश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अर्जुष्टम्। उतान्यो अस्मद्यजते विचायः। पूर्वः पूर्वे यज्ञमानो वनीयान्॥३३॥ गृध्विज्ञो गंच्छतं ने दाशुत्रामांभिश्वर्गमम सुप्रथां भजामहे विश्वत् याह्यंबंहच्छं पिवायः पर्दाः [३]

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। परौ श्वेतानि पातय। असितं ते निलयंनम्। आस्थानमसितं तर्व॥३४॥

असिक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥ शुन १ हुंवेम मघवांन्मिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंम् वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये स्मथ्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृश्चिमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्चन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवांरत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि स्टङ्कासिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समथ्सुं त्वा हवामहे। समथ्स्विग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्वर संवंदध्वम्। सं वो मनार्रसि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वै। सञ्जानाना उपासंत। समानो मञ्जः सिमेतिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतो अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो हिवषां यजामः। समानी व आकूतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

स्ंज्ञानं नः स्वैः। स्ंज्ञान्मरंणैः। स्ंज्ञानंमिश्वना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। स्ंज्ञानं मे बृह्स्पितिः। स्ंज्ञानर् सिवता करत्। स्ंज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अर्गन्मु शर्म ते वयम्॥३९॥ अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्येभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्च परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे। रक्षा मार्किनी अघशर्षस ईशत। मदेमदे हि नो दुदः। यूथा गवामृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया ह्स्त्या वस्। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचींवस्तवं दुष्ट्सनाः। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभ्रुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्यर्तेनं मुश्चत। ऋतस्यर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। यज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चतु। द्रुपदादिवेन्मुमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनेसः। उद्वयं तमेसस्परि। पश्येन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगेन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तर्व कृषि वन्स्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नर्व च॥———[ $oldsymbol{8}$ ]

वृषा सो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्युः

श्तायुंः। स मा वृषांणं वृष्मं कृंणोतु। प्रियं विशाः सर्ववीरः स्वीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्तें शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्ड्पाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

त र स्प्रीचीरूतयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्च-रिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयुन्थ्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्भं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवातस्तिविंषीभिरिन्द्रंः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमान् ओजंः। अवांभिनत्कुकुमः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। रृयिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेंहि जीवसैं। त्व॰ सोम महे भगम्। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसैं। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजारेसि चित्रा विचंरन्ति तुन्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्र् सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषींमतीम्। अभा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य नित्रयंः। ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः। विहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥ अवव्ययन्नसितं देव वस्वः। दिवध्यतो र्ष्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अपस्वंन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छत्। अच्छां वद त्वसंं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविवास। कनिकददृष्भो जीरदानः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्ये ह्विः। जुहोता मधुमत्तमम्। इडाँ नः स्यतं करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजाताः॥४९॥

उत नंः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुजुंष्टा। सरस्वती

स्तोम्यांऽभूत्। इमा जुह्वांनायुष्मदा नमोभिः। प्रति स्तोमर्थं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मान्य्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणिं पदा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देव्यवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उथ्संः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वृन्वन्थ्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सीद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्रियः सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म् आ सुंव। शुचिंमुर्कैर्बृह्स्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशेः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सकूंतिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं जुघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभान्न आ भंर। प्रयुपस्यन्निव सुक्थ्यौ। वि नं इन्द्र

मृधों जिह। कनींखुनदिव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजा-पंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामस्य तृप्तिंमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चत्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रिये पुमान्। यथा स्नी तृप्यंति पुःसि प्रिये प्रिया। एवं भगस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदिति। तथेति वायुराह्
तत्। हन्तेति सृत्यं चन्द्रमाः। आदित्यः सृत्यमोमिति।
आपुस्तथ्सृत्यमा भरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ
मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यमुस्मात्।
वैश्वानुरात्पुरणुतारमग्नेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृंता पुरूणि। वैश्वान्य त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तरिंक्षुं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति

न दंभाति तस्कंरः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्ज्ते। न सर्इस्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अन्। गावो मर्त्यस्य वि चंरन्ति यज्वंनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृश्वो वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना। धेनुर्वाग्स्मानुष् सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र् ऊर्जं दुदुहे पया रेसि। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवृषीं। सहस्रांक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्या रेसमुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्श्वतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयन्विश्वकर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गणवान्थसजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। स्पत्ना वाचं मनसा उपासताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा स्पत्ना श्वशुंरोऽयमस्तु। अयर

यजामहे। वृष्भेण यजेमानाः। अर्कूरेणेव सूर्पिषाः। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेंण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥ यस्यायमृष्मो हविः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं

भवतु। अयं यो मांमको वृषां। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यंः। वि ब्रंवीतु

वृषाँऽस्य १ शुर्वृषभायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यों हितो बृहन्नामं। वृष्भस्य या कुकुत्। विष्वान् विष्णो

क्षंत्रभृदनिभृष्टमोर्जः। सहस्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥ धारयंन्युरोडाशुं बृह्स्पतिं ज्ञधनंच्युतिमानुन्दो भगस्य तृप्याण्युग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिश्क्षतंस्रो वाजंसातौ

जनेंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥ अस्याः पृंथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृषभं कृणु। यः सुशृङ्गः सुवृष्भः। कुल्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृषभेणं

उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तुनुवा मेरयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमातीः। नि शृणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उुरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भंगु सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जर्नेषु। उदींडितो वृंषम् तिष्ठ शुष्मैं:। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रूँ-थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधों नुद। पृतं ते स्तोमंं तुविजात् विप्रंः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्रे प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्रषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तरिक्षर् सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुंरुचेतनः। इन्द्रों जिगाय सहसा सहार्रसा। इन्द्रों जिगाय पृतनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिवः कृणोतु। अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदिथ्सोमंः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्भिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंन्द्र वर्धय क्षित्रियांणाम्। अयं विशां विश्पितंरस्तु राजाँ। अस्मा इंन्द्र मिह वर्चारंसि धेहि। अवर्चसं कणुिह शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योंऽमित्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षूत्रस्यं कुकुिभं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अय॰ राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्ं। येन् जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्भः स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मान्वानांम्। उत्तंरस्त्वमधेरे ते सुपत्नाः। एकवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्ञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बृिलमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिहृ शर्म भद्रम्। यो देह्यो अनमयद्वध्रक्षेः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निः। विश्लंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो ब्भूथं। ईडेन्यों वपुष्यों विभावा। प्रियो विशामितिथिर्मानुषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिव्मा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म स्रुचों घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं युज्ञस्य तन्तेवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतेः। शृङ्गाणीवेच्छृङ्गिणा् सन्देदिश्रिरे। चृषालंबन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवाश्सः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतरद्वजाश्सि। स्पृधो विहत्य पृतेना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामहिष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनं त्वा भुवंनानामभिश्रियम्। स्तौम्यंग्न उरुकृतश्रे सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्नाश्रे अभिभूरंसि। जहि शत्रूश् रप् मृधो नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामिस जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूँनि जिगीवान्थ्सहाँभिर्मिता नंश्चत्वारिं च॥-[9]

स प्रंत्नवन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेनं स्यता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवं नु स्तोमंमुग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनातिं नः। स्वारुहा यस्य श्रियों दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने यज्ञस्य चेतंतः। अदाभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवः। नव् सोमाय वाजिने। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितम् वसुं। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नों रास्व सह्स्रिणंः। नवर्ष ह्विर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्। तदङ्ग प्रतिहर्य नः। राजैन्थ्सोम स्वस्तयें। नव्ड्स्तोम्न्नवर्ष ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तञ्ज्षेषता्र् सचेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातमद्य। इन्द्राग्नी वृत्रहणा जुषेथाम्॥७६॥

3ुभा हि वार्ष सुहवा जोहंवीमि। ता वाजर्ष सद्य उंश्ते धेष्ठाँ। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। युज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवुर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विंदो हि जंजि्रे। एदं ब्र्हिः

सुष्टरीमा नवेन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भवंनस्य गर्भः। विश्वे देवा इदम्द्यागमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीचीं। तुन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मै पृणीतां भुवंनानि विश्वाः। प्रजां पृष्टिममृतं नवेन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातें। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहेनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्रे तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांत्। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भद्रान्नः श्रेयः समनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विंशस्व। शं तोकायं तन्वें स्योनः। एतम् त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपतिः श्तन्नंतुः। कीनाशां आसन्मरुतः सुदानंवः॥८०॥
पुरुवा वृंणीमहे जुषेशांन्वर्पयतामृत्ववंन मीयसे स्योनश्रुत्वारि व॥———[८]

जुष्टश्चक्षंषो जुष्टींनरो नक्तञ्जाता वृषास उत नो वृषांऽस्यु॰्शुः सप्रंत्रवद्ष्टो॥८॥ जुष्टो मृन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिवर्षसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नंः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥ जुष्टंः सुदानंवः॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इथ्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मनुसोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनस्थित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धि देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम॰ हवम्ँ। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद॰ हिवः। विराड्देवी पुरोहिता। हव्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा॰सि देवाः पंरमे जनित्रें। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी ज्रंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिंर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानांय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिंरशीमिह। सुवज्योतिंरृतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंणवन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यें दिशः शृणवन्त्यंत्तरात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्।

उदेहिं वाजिन्यो अस्यपस्वन्तः। इद॰ राष्ट्रमा विश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदं जुजानं। स नों राष्ट्रेषु सुर्धितान्दधातु। रोहर्ररोहर् रोहिंत आर्रुरोह। प्रजाभिवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। ताभिः सर्रेन्थो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाँः। आऽहार्षीद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यास्थिदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गुत्वायं महता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रमुनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विशस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वथ्समनु तास्त आऽगुंः। तास्त्वा विंशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण सुयुजा प्रमृंणीथ शत्रून्ं। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिङ्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अद्र हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावापृथिवी अंद ४ हत्। तेन सुवं स्तिभृतन्तेन नाकं ॥ ६॥

सो अन्तरिक्षे रजसो विमानः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्। सुशेवं त्वा भानवों दीदिवा सम्पासी जुह्वों जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। स॰संमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जांस्पृत्य॰ सुयममा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा॰सि॥७॥ अस्तेषु गहिले नाको महा॰सि॥——[२]

पुनर्न् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि शुक्रो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं हविषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा स्मृधैं त्वा पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसैं। आकूंतिमस्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनुद्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेद्ग्निर्ग्नी ५ रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यंः। चृतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यर्जमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अर्गृभीताः पुशर्वः सन्तु सर्वै। अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रः।

बृह्स्पतिः सिवता यः संहुस्री। पूषा नो गोभिरवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समंनक्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगरं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिदंद्दिन्द्रः सहस्रम्। मित्रो दाता वरुणः सोमो अग्निः॥११॥

आ नों भर भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सवर्यवों

ड्मं कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा प्रथंश्च। सुवर्यवो मितिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासो अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानि वज्री॥१२॥

अहुन्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अहुन्निहिं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र ई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्वपिबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमुजा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राह्नेन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आथ्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्रृतर् व्यरसम्। इन्द्रो वज्रेण मह्ता व्धेनं। स्कन्धारसीव कुलिशेनाविवृक्णा। अहिं शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्वे। मृहावीरं तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंद्धे हस्ते दक्षिणे। तरणिनं शिंश्रथत्। श्रवस्यया न शिंश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुज्जिहांनो अभि कामंमी्रयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलां गोमंती्मिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषुः पुरुदश्ससा। पूषा रक्षतु नो र्यिम्॥१६॥

ड्मां यज्ञमृश्विनां वर्धयंन्ता। ड्मो र्यिं यजंमानाय धत्तम्। ड्मो पृश्नृत्रंक्षतां विश्वतो नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते मृहे संरस्वति। सुभंगे वाजिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हृव्यं घृतवंथ्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १षिं। ड्मानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिर्व्य सुभगांसः स्याम॥१७॥ व्यक्षति व्यक्षति विश्वति रक्षत् नो रुवि सोभंगान्यकं चा——[४]

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सुस्यानांमुत सुक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचेत्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा । अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपृत्या सुवीरां। इदं बर्हिरतिं बर्ही इष्यन्या। इमं यज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग् सर्व् इज्ञोहवीमि। स नों भग पुरएता भंवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णों जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शर्श्वतीः समा उपयन्ति लोकाः। शर्श्वतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तर शर्श्वतीनार् समानार शाश्वतेनं। हविषेष्वाऽनन्तं लोकं परमा रुरोह॥१९॥

इयमेव सा या प्रथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारी वयत्स्तन्नमेतत्। स्नातनं वितंत्र षण्मयूखम्। अवान्याइस्तन्त्वैन्किरतो धत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वं मुरुतो जुनन्ति। अ्यं यो अग्निर्मरुतः समिद्धः। पृतं जुषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूमिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋंजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वता वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पिति सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यूः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः।

पूरू सर्खिभ्य आसुतिं केरिष्ठः। पूष्ड् स्तवं व्रते व्यम्। निरंष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूष्त्रा वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरेक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शृक्टीरिंव सर्जिति। गामुङ्गेषु आ ह्रंयिति। दार्वङ्गेषु उपावधीत्। वसंन्नरण्यान्या स्मायम्। अर्नुक्षिदितिं मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्ञ्या। यत्र काम्ं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धी स् सुर्भीम्। बृह्वन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंश स्सिषम्॥२४॥ स्माम् क्षेह् युवानः शुक्षित्व्छमाने दृश्यते निपंद्यते चलारि च॥————[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्याय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्माणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उ्रं गंभीरं पृथुबंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवे ते द्यावापृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावापृथिवी सहौषंधीभिः। शमन्तरिक्षः सह वार्तेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वार्तपत्नीर्भि सूर्यो विच्छे। तासां त्वा जुरस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं

पराचैः। अमोचि यक्ष्माँ हुरितादवंर्त्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्त्रिर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्।
अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा
अमुंश्चन्नस्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्चांमिशु सात्।
द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशांत्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च
वस्वः। दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर रृयि स्तुंवते
कीरयेंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधमिन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावधम्भि ये रक्षंमाणाः। येनं हुता दीर्घमध्वानमायन्। अनुन्तमर्थमनिवथ्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोऽसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्र्शोभंमाना कृन्येव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदानि देवा अयमुस्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं जुरसंः प्रस्तांत्। प्राणापानो चक्षुः श्रोत्रम्ं। वाचं मर्नस् सम्भृंताम्। हि्त्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तांत्। आ भूतिं भूतिं वयमंश्रञवामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्योच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चेरूपा। शश्वंतीनिर्वपृज्यन्ति। न गम्नत्यन्तम्॥२९॥
कुगुम्यकेते विच्छुभेऽश्रवामहे चुत्वारि च॥——[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेर्जसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूति-रहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुर्थः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बर्लं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं शृतशांरदाय। प्रतिगृभ्णामि मह्ते बीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वं म् आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नंपितः। ब्रह्मं क्षुत्र स्वाहां॥३१॥

प्रजापितः प्रणेता। बृह्स्पितिः पुरपुता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहाँ। अग्निरंन्नादोऽन्नंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। वर्रुणः सम्माद्थ्सम्राद्वंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ॥ ३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु

स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पितृर्ब्रह्म ब्रह्मंपितः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विशंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनानार्थ रूपकृद्रपपंतिः। रुपेणास्मिन् युज्ञे यजंमानाय

पशून्देदातु स्वाहाँ॥३३॥
च स्वाहा साम्राज्यमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहा विशंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां
चुत्वारिं च (अग्निः सोमो वरुणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवृता पूषा सरस्वती त्वष्टा दर्श॥)॥.[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौत्रिभिद्वंत्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्रार अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमेत्ववाङ्। इन्द्रं द्युम्नर सुवंबद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समथ्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वयश् शुंनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजै्रुपं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र हुव्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता

सजोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी हविरिदं जुंषस्व। वर्यः सुपर्णा उपंसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णिहि पूर्धि चक्षुंः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्। बृहदिन्द्रांय

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंर्णं चक्षुंस्तनुवां विदेय। एवा वेन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्सत्॥३७॥

यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। नार्के सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनेन्तो अभ्यचेक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षुं वरुंणस्य दूतम्। युमस्य योनौं शकुनं भुंरुण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योरभि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अुपो र्याचामि भेषुजम्। अुफ्सु मेु सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषुजा। अग्निं चे विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्फ्सु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमङ्क्षि सरस्वति। या सर्रस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं हव्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुकुञ्जातवेदः।

इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपितिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तन्रूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहि। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों हृव्यं वंह नः प्रजानन्। आयुंः प्रजार रियम्स्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मुघवानमुग्रम्। स्त्रा दर्धानमप्रतिष्कृत्र शवारंसि। मर्रहिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियों- ऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपथां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रुकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद मिह् कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्देवं देवः स्तयिमन्दु र स्तय इन्द्रः। विदद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य र स्द्भियंकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांनतीगात्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजंते विद। आ ये विश्वाः स्वपृत्यानि चुकुः। कृण्वानासो अमृतत्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमंरिम्। धुनिं चा-स्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पाहि प्रव्नथा मन्दंत त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्मिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूशं र्मि गा इंन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधो नृदस्व। अपामीवा अप रक्षाशंसि सेध। अस्मार्थ्समुद्राह्नंहतो दिवो नंः॥४४॥

अ्पां भूमान्मुपं नः सृजे्ह। यज्ञ प्रति तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जिर्तारमङ्गि। इन्द्रंः शुनावृद्धितंनोति सीरम्ँ। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदिदांस ज्येष्ठम्ँ। संवथ्सर शुनवृथ्सीरमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंकरूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रति तिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तो गृव्यन्तो वाजयंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन हेवंते नस्त्मग् पदं॥ [८]

प्राण उदेहि पुनुरा नौ भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूनार् स ईं पाह्यष्टो॥८॥ प्राणो रंक्षत्यगृंभीता धारावृरा मुरुतो दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिरशत्॥४५॥ प्राणः शुनर हंवेम॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वाँ स्वादुनाँ। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रिंभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण् शश्वंता तनाः। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखाः। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्र्त्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमः सुत आसुंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजंमानाय धेहि। कुविद्ङ्गः यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत् भोजंनानि। ये ब्र्हिषो नमोवृक्तिं न ज्ग्मः। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मियं धेहि। बलंमसि बलुं मियं धेहि। नाना हि वाँ देवहिंत्र सदंः षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् २) कृतम्। मा स॰सृंक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि स्सीः स्वां योनिंमाविशन्॥४॥

उपयामगृंहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सारुस्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दाय त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोंऽसि महो मियं धेहि। सहोंऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतत्रिण र सिरहम्। सेमं पात्वरहंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविशन्विपूंचिका पश्चं च॥—

सोमो राजाऽमृतर् सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। विपान ५ शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमंमुद्धो व्यंपिबत्। छन्दंसा हर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। अद्धः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

कुङ्कां द्विरसो धिया। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। अन्नांत्परिस्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षत्रम्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशदिंन्द्रियम्। गर्भो जुरायुणाऽऽवृंतः। उर्ल्बं जहाति जन्मंना। ऋतेनं सत्यमिंन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। सुतासती प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यपिबत्। सुतासुतौ प्रजापितः।

ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। स्त्यानृते प्रजापितः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रृद्धाः सत्ये प्रजापितः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा परिस्रुतो रसम्। श्रुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापितः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपानः श्रुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥
अवः श्रीरं व्यपिव्यन्तेनं स्त्यमिन्द्रियः श्रुद्धाः सत्ये प्रजापितिर्ष्टौ वं॥———[२]

सुरावन्तं बर्हिषदर् सुवीरम्। युज्ञर हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दधानाः सोमं दिवि देवतासु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषधीषु। सोमस्य शुष्मः सुरंया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सरस्वतीमश्विनाविन्द्रमग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादिधे। सरस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मधुमन्त्मिन्दुम्। सोम्र राजानिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रसिनः सुतस्य। यदिन्द्रो अपिबच्छचीभिः। अहं तदस्य मनसा शिवेन। सोम्र राजानिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षन्यितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण शृतायुंषा। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

पवित्रेण शतायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्ञवै। अग्न आयू ५ेषि पवसे-ऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवुर्जनः पुनन्तुं मा देवजुनाः। जातंवेदः पवित्रंवद्यत्ते पवित्रंमर्चिषिं। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुंनती। ये संमानाः समंनसः। पितरों यमुराज्यें। तेषां लोकः स्वधा नमंः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समनसः। जीवा जीवेषुं मामुकाः। तेषाु ॥ श्रीमीयें कल्पताम्। अस्मिँ क्षोके शतर समाः। द्वे स्रुती अश्वणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेज्यध्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद १ हविः प्रजनंनं मे अस्तु। दर्शवीर १ सर्वर्गण १ स्वस्तर्ये। आत्मुसनिं प्रजासनिं। पृशुसन्यंभयुसनिं लोकुसनिं। अग्निः प्रजां बहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त।

रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं दीधर्थस्वाहाँ॥१३॥ इन्द्रियायं पितरं श्तायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पताः स्वस्तये पश्चं च॥[३]

सीसेन तत्रं मनसा मनीषिणंः। ऊर्णास्त्रेणं कवयो वयन्ति। अश्विनां युज्ञ ए संविता सर्रस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वर्रुणो भिषज्यन्। तदंस्य रूपमुमृतुर् शचीभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सररराणाः। लोमानि शप्पैर्बहुधा न तोक्मिभिः। त्वर्गस्य मार्समभवन्न लाजाः। तद्श्विनां भिषजां रुद्रवर्तनी। सरस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मञ्जानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गर्वां त्वचि।

सरेस्वती मर्नसा पेश्वलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्श्वतं वर्पुः। रसंं परिस्रुता न रोहिंतम्। नृग्नहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतं जनित्रम्। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मृतिं बार्यमानाः। ऊर्वध्यं वातर्ं सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदंयेन स्तयम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिष्ज्यन्। मतस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आत्राणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शचीभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो वंनिष्ठुर्जनिता शचीभिः। यस्मित्रग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधार् उथ्संः। दुहे न कुम्भी इस्वधां पितृभ्यंः। मुख् इसदंस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा प्वित्रमृश्विना स इसरेस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः। वस्तिर्न शेपो हरसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुर्मृतं ग्रहाभ्याम्। छागेन् तेजो ह्विषां श्वतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्कमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो नसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैर्व्यानम्। नस्यांनि ब्र्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णांभ्याङ् श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न ब्र्हिर्भुवि केसंराणि। कुर्कन्धुं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मत्रुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रृणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥ केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सि्ट्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिषजा तद्धिनाँ। आत्मानमङ्गेः समंधाथ्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपः शतमानमायुः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतं दर्धाना। सरंस्वती योन्यां गर्भमृन्तः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं विभर्ति। अपाः रसेन् वरुणो न साम्नां। इन्द्रः श्रिये जनयंत्रपस् राजां। तेजः पश्नाः ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्तुता पर्यसा सार्घं मधुं। अधिभ्यां दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। सम्हं विश्वेद्वैः। क्षुत्रस्य नाभिरसि। क्षुत्रस्य योनिरसि। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पुस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भैषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्ये भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायान्नाद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसवे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्रियेणं। श्रियै यशंसे बलांयाभिषिश्चामि। कोंऽसि कतुमोंऽसि। कस्मैं त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणीं-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्भोत्रम्ँ। जिह्ना में भुद्रम्। वाङ्काहंः। मनों मुन्युः। स्वराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गानि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बर्लिमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीमें राष्ट्रमुदर्म स्सौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। कुरू अंरुबी जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सुर्वतंः। नाभिमें चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥ २४॥

आन्न्द्न्न्दावाण्डौ मैं। भगः सौभाँग्यं पसः। जङ्गाँभ्यां प्रद्यां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्षत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यक्षेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतिं तिष्ठाम्यात्मन्। प्रतिं प्राणेषु प्रतिं तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतिं तिष्ठामि युज्ञे॥२५॥

त्र्या देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यज्ञीर्भः॥२६॥

यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व ५ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना ५ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुश्चत्व ५ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नै। एना रेसि चकृमा वयम्॥२८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुञ्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदर्णये। यथ्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्यैं। एनश्चकृमा व्यम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमिस। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततों वरुण नो मुश्र॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कण निचेरुरंसि निचङ्कण। अवं देवैर्देवकृतमेनों-ऽयाट्। अवु मर्त्यैर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आपु ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे वयं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंसुस्परिं। पश्यंन्तो ज्योति्रुक्तरम्। देवं देवुत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। प्रतिंयुतो वर्रुणस्य पार्शः। प्रत्यंस्तो वर्रुणस्य पार्शः। एधौं ऽस्येधिषीमहिं। समिदंसि॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वाः अग्र आगंमम्। तं मा सःसृंज वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंविति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वान्रज्योंतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ञवै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वाहां॥३२॥

स्वाहां॥३२॥

होतां यक्षथ्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्म-थ्सिमध्यते। ओजिंष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्ततनूनपांतम्। ऊतिभिर्जेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव॰ सुंवर्विदम्। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश॰सेन् तेजंसा॥३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंत्यंम्। देवो देवैः सवीर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाऽ-ऽज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्भं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रेरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बुर्हिरासंदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षदोजो न वीर्यम्। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषे। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुषे मातरौ मुही। सवातरौ न तेजंसी। वृथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्दैव्या होतांरा। भिषजा सखाया। ह्विषेन्द्रं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंबोपसंः। इडा सरंस्वती भारंती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं स्युयजं घृत्श्रियम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मुघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शुमितारं शृतकंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मधुंना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्ष्विन्द्रङ् स्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहाँ स्तोकानाँम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा अ आज्यपान्। स्वाहेन्द्र होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्र्यंजं॥३८॥ तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीद्व्रियं जुंषाणा हे चं (सुमिधेन्द्रन्तनृनपांतृमिडांभिबंगृहिष्योजं उपे देव्यां तिस्रस्त्वद्यां वन्स्यतिमिन्द्रमं॥ सुमिधेन्द्रं चृतुर्वत्वेको वियन्तु हिर्वत्वेको वियन्तु होत्र्यंजा॥[७]

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्ट्रशता वर्ज्जबाहुः। जघानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशरसः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रतिं यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुना सम्अन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजित प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिरंवा अभिष्टिः। आजुह्वांनो हिवषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञंबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिर्वान्न इन्द्रंः। प्राचीनर् सीदत्यदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथमान् स्योनम्। आदित्यैर्क्तं वसुंभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरः कव्ष्यो धावमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्रीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुद्धे शूर्मिन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ते। दैव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिर्हिविषां वृधातः। तिस्रो देवीर्हिवषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पर्वीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरंस्वती। इडां देवी भारंती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधदिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्य्शसें पुरूणि। वृषा यजन्वृषेणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वन्स्पित्रवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंमिता न देवः। इन्द्रंस्य ह्यैर्जुठरंं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुंना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर् इन्द्रंः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृत्प्रुषा मधुंना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता्ड् स्वाहां॥४२॥

शर्थमानो महोंभिः पत्नीर्धृतेनं चुत्वारि च॥\_\_\_\_\_[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। तर स्प्रीचींः। स्त्यिमत्तन्न त्वावारं अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहन्निहं पिर्शयान्मर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्समे। मिहं क्षत्रं जनाषािडंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो म्घोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥ रेवतीना मृत्वारं मा

देवं ब्रहिरिन्द्र ए सुदेवं देवैः। वीरवंथ्स्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्रहिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जः। देवीर्द्वार् इन्द्र ए सङ्घाते। विङ्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वथ्सेन् तरुंणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जः॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं युज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषार्रसा। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें।

पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवाँक्षीत्। सग्धिर् सपीतिम्न्या। नवेन पूर्वं दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहुंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशः सावाभाँष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृंक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्युज्ञः सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देव इन्द्रो नराशः सः। त्रिव्रूथिस्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शितिपृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवंतिते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पृलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रेणाप्रात्। आऽन्तरिक्षं पृथिवीमंद १ हीत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासुस्थिमन्द्रेणासंन्नम्। अन्या ब्रही इष्यभ्यं-भूत्। वसुवने वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्थित्वष्टकृत्। स्विष्टम्द्यं करोतु नः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ ४९॥

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वेलैभेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविंमेंषो न भेषजम्। पृथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुपवाकांभिर्भेष्जं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षं नराशरसं न नग्नहुम्ं। पित्र् सुरांयै भेष्जम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनोंव्पा इन्द्रंस्य वीर्यम्ं। बदंरैरुपवाकांभिर्भेष्जं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५१॥

होतां यक्षिद्दिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋषभेण गवैन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हः सुष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह

इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षद्वरो दिशः। कुवृष्यो न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधै। दुहे कामान्थ्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्देव्या होतांरा भिषजा-ऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषुजैः। शूष्ट् सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिमन्द्रे हिर्ण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांरमिन्द्रमृश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषुजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शुमितारः श्वतंत्रत्तम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमंः परि्स्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्यै। स्वाहंर्ष्भमिन्द्रांय सिःश्हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामांणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

 सिमंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घर्मो विराद्थ्सृतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर्थ शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजार्थसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिवहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराश्रश्सेन नुग्नहुः॥६०॥

अधांतामृश्विना मधुं। भेषुजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणिं वीर्यम्ं। इडांभिरश्विनाविषम्ं। समूर्जु सर र्यिं देधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमर् शुक्रं परिस्रुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कृव्ष्यो न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुघें। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्रर्थ सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्तर्थ सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रोधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ँ। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप र रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शश्मानः परिस्रुतां। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिर्न सोमंमश्विना। मासंरेण परिष्कृतां। समधातार् सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥
नृत्रहुः पातीव सरस्वत्याः सुतंऽद्यो चे॥———[१२]

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मृघमिन्द्रांय जिश्रेरे। यमृश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वृलं मृघम्। नमुंचावासुरे सचौ। तिमन्द्रं पशवः सचौ। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। ह्विषां युज्ञमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं दुधुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां ह्विष्पंतिः। यजंमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदधंत्। यजंमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥

वरुंणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दधाना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्विभिर्वीर्यं बलम्। हिविषेन्द्रक् सरंस्वती। यज्ञमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नराँ। सरंस्वती हिविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुद्धा सरंस्वती। स वृंत्रहा श्रातक्रेतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥ क्रिमिद्रियम्॥ पद्धा मरंस्वती। सहि।

देवं बर्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। बर्हिषां दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यंत्रिसि। द्वारों दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥६७॥ देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी जोष्ट्रीं अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रींभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६८॥

देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यिश्वनां भिषजांऽवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजां। देवा देवानांं भिषजां। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वषद्वारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजां॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भार्तीडाँ। शूष्त्र मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशक्षः। त्रिव्रूथः सर्रस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपणी अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः स्पिप्पलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृंष्भो न भामम्। वन्स्पतिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवं बर्हिवीरितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमृश्विभ्यांम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमेन्द्र ते सदः। ई्षाये मृन्यु राजांनं ब्र्हिषां दधुरिन्द्रियम्। वृस्वने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रमिश्वनाः। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्निः सोमई स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रः सुत्रामां सिवता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्ननाः। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्जुमपंचिति स्वधाम्। वस्वने वसुधेयंस्य वियन्तु यजां॥७२॥

द्वारों दध्रिरिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यां दध्रिरिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दध्रिरिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञेंन्द्रियाणिं वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञ् सरंस्वत्या वनस्पतिः पद्गं (देवं वर्षुहिद्वंविद्वारों देवी उपासांविश्वनां देवी जोष्ट्री देवी ऊर्जाहंती देवा देवानां भिषजां वपद्मारेर्देविस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नगुश्यश्मा देव इन्द्रो वनस्पतिंदेवं वर्षहित्रीरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। सुमिधाऽप्रिं देवं वर्षहिः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारिस्तुम्नः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽप्रिं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वं दृह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिनिद्रयम्। सौत्रामुण्याः सुतासुती। अञ्चन्द्रययं यजनानः॥॥———[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अयः सुंतासुती यर्जमानः। पर्चन्यक्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्ं। गृह्णन्यहान्ं। बुध्नन्नश्विभ्यां छागुः सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुध्नन्थ्यरंस्वत्यै मेषिमन्द्रांयाश्विभ्याम्। बुधन्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्याः सरंस्वत्यै। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन् सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्ष्यभेणाश्विभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षुङ्स्तान्मेंदुस्तः प्रतिपचताग्रंभीषुः। अवीवृधन्त ग्रहैः। अपांतामृश्विना सरंस्वृतीन्द्रंः सुत्रामां वृत्रहा। सोमांन्थ्सुराम्णंः। उपों उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्गूषैः। त्वामुद्यर्षं

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

आर्षेयर्षीणां नपादवृणीत। अय र सुंतासुती यर्जमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यंस्मा आ च शास्त्रं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रंहि॥७४॥

इन्द्रीय यर्जमानः सुप्त चं॥

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नो अग्ने सुकेतुनां। त्वर सोम महे भगं त्वर सोम प्रचिंकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरंः सोम पूर्वे त्वर सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निंष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुंष्पदे। ये अंग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

ना मवन्तु । हुपद् श चतुष्पदा य आग्नष्वात्ता यऽनाग्नष्वात्ताः॥ ७५॥ अर्थहोमुचंः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुषन्ताम्। यदग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मार्तली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिरर्वाङ्। सत्यैः कव्यैः

पितृभिर्धर्मसिद्धेः। हृव्यवाहंम्जरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हृविषां सपुर्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती १ समृण्वतु॥७६॥

अनंभिष्वाता जेहंमानाः सुप्त चं॥——[१६] होतां यक्षदिडस्पदे। सुमिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्।

अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षच्छुचिंद्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यं गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्य् सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथसं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्। पूष्णवन्तममंत्यंम्। सीदंन्तं बर्हिषिं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्धचंस्वतीः। सुप्रायुणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्ह्रंं वयोधसम्। पृङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशिल्पे बृह्ती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठ्वाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजी। होतां यक्ष्त्प्रचेतसा। देवानांमुत्त्मं यशः। होतांग् दैव्यां कवी। सयुजेन्द्रं वयोधसम्। जगतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजी होतां यक्षत्पेशस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पतिमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छतक्रंतुम्। हिरंण्यपणमुक्थिनम्। रश्नां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। कुकुमं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्णणं भेषजं कृविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। वृहदंषभं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥ वृहदंषभं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥ वृह्वंष्यभं शिवंभूणिहंन्दित्यवाहमं। ईडेन्यु सोमंमनुष्ठभं त्रिवृथ्यम्। सुव्रुह्पदेम्मतेन्द्रं वृह्वां पश्चविम्। व्यवंस्वतीः सुप्रायणा द्वारां बृह्वाणं पृष्टिमिन्द्रं प्रियंनाहमं। सुप्रायणा द्वारां वृष्टिमिन्द्रं प्रायणा द्वारां पृष्टिमिन्द्रं पर्वतिम्। सुप्रायणा द्वारां प्रायणा द्वारां प्रायणा प्रिकृतिः प्रायणा द्वारां प्रायणा द्वारायणा द्वारायणा द्वारां प्रायणा द्वारायणा द्वारायण

द्विपर्दमिहोक्षाणुत्र। शतर्ऋतुं भगुमिन्द्रं कुकुर्भमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंषुभं गां वयो

दर्धदिन्द्रियमृषिं वसु नवं दुशेहैंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिडस्पदे सर्वं वेतु॥)॥——[१७]

सिमद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगींवयों दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उण्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयों दधुः। इडांभिरग्निरीङ्यः। सोमों देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्ठुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधः। सुब्र्हिर्ग्निः पूष्णवान्। स्तीर्णबंर्हिरमंतर्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गोर्वयो दधः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्युवाङ्गोर्वयो दधः॥८५॥

उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वे देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। दैव्या होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशंः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधुः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधुः। शुमिता नो वनस्पितिः। सुविता प्रंसुवन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षुत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंषुभो गौर्वयो दधुः॥८७॥

अमंत्र्यस्तुर्युवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्चृत्वारि च॥————[१८]

वसन्तेन्त्नां देवाः। वसंविश्ववृतां स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। हिविरिन्द्रे वयो दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चदशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्। हिविरिन्द्रे वयो दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनां-ऽऽदित्याः। स्तोमं सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शार्देन्तुंनां देवाः। एक्विश्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। हेम्न्तेन्तुंनां देवाः। म्रुतिस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वरीः सहंः। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। श्रैशिरेण्तुंनां देवाः। त्रयस्त्रिश्शेऽमृत इंस्तुतम्। सत्येनं रेवतींः क्षत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः॥८९॥ स्तोमं समद्गे स्तुतर सहं ह्विरिन्द्रे वयों दधुः॥८९॥ स्तोमं समद्गे स्तुतर सहं ह्विरिन्द्रे वयों दधुः॥विरिन्द्रे वयों दधुः॥८९॥

देवं ब्र्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वस्पुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उष्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वयोधसम्। उषे इन्द्रमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्टीं देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वृसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्शा छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवा देव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्त्रिस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगंत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमन्द्रे वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवीरितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्।

# व्सुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९४॥

वियुन्तु यजं वीतां यजं वीतां यजं वेतु यजं वेतु यज् पश्चं च (देवं ब्र्ह्हिर्गायित्रिया तेजंः। देवीद्वर्गि उप्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टुभा वाचमं। देवी जोष्ट्रीं बृहृत्या श्रोत्रमं। देवी उज्जीहुंती पृङ्गा शुक्रम्। देवा देव्या होतांरा त्रिष्टुभा त्विषिमं। देवीस्तुम्नस्तिम्नो देवीः पितं जगंत्या वलमं। देवा नराशश्चां विराजा रेतंः। देवो वन्स्पतिर्द्विपदा भगमं। देवं ब्र्हिर्विरितीनां कुकुभा यशंः। देवो अग्निः स्विष्टुकृदतिंच्छन्दसा क्षुत्रम्। वेतु वियुन्तु चृतुर्वीत्तामेको वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयःश्चृतुरंवर्धतामेकोऽवर्धयः श्चृतुरंवर्धयत्॥)॥———[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेंन मित्रोंऽसि यदेवा होतां यक्षय्यमिथेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचर्षिणप्रा देवं बुर्हिरहोतां यक्षथ्यमिथाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरिश्वनाऽश्विना हविरिन्द्रियं देवं बुर्हिः सरम्बत्यग्निमुद्योगन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः समिथां वसुन्तेनुर्तुनां देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विश्यातिः॥२०॥

।वरशातः॥२०॥ स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं पवित्रेणोषासानक्ता बर्दरैरधातां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाहङ्गां देवी देवं वयोधसं चतुर्नवतिः॥९४॥

स्वाद्वीं त्वां वेतु यजी॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। अग्निष्टोमः सोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। रथन्तर सामं भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्त्रिश्ंकः। एतद्वे ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणेव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गच्छेयमितिं। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वेनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। एकांदश् दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। नाराश्र्यसेषुं। न्रयंस्त्रिप्श्राद्धे देवताः। देवतां एवावं रुन्धे। अश्वंश्चतुस्त्रिप्शः। प्राजापत्यो वा अश्वः॥३॥

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्रशो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनेंऽभिषिंश्चति। ब्रह्मंणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्ष् समर्धयति। आज्येंनाभिषिंश्चति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥ होतां भवति यजेत् वा अश्वों दधाति॥

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथु यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे

यदाश्रया मवाता आश्रमुखा ह्याद्धः। अय यत्पाष्णः। पृष्टिव पूषा। पृष्टिवैश्यंस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणि विक्रोतिं। निर्वृरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैंश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मारुतो हि वैश्यः। स्प्तैतानिं ह्वीश्षे भवन्ति। सप्तगंणा वै मुरुतः। पृश्चिः पृश्चेही मारुत्या लेभ्यते। विश्वे मुरुतः। विश्वे एवैतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मे-ऽध्यभिषिश्चति। स हि प्रजनयिता। द्व्वाऽभिषिश्चति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवैनंमुन्नाद्यंन समर्थयति॥६॥

यदाँग्रेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ् यद्वांर्हस्पत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यथ्सारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वृरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयते। स हि वारुणः। अथु यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी नान्वमन्येताम्। तमेतेनैव भांगधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्जस्य वा एषोंऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इतिं। अष्टावेतानि ह्वी॰षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रंह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्सम्वं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमुत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चति। ब्रह्मणो वा एतदंख्सामयो रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मन्नेवेनमृख्सामयोरध्यभिषिश्चति। घृतेनाभिषिश्चति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्यां सूयतें। स मंनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरुण्यानांं पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वासार सूयते॥११॥ य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्ष्स्यर्चाऽभिषिश्चिति। मनुष्यां वे नराश्र संः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यितं चं राज्सूयंमनुत्तरवेदीकम्ं। तथ्सर्वं भवित। ये में पश्चाशतं ददुः। अश्वांना स्मधस्तुंतिः। द्युमदंग्ने मिह्न श्रवंः। बृहर्त्कृधि मघोनाम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

स्यवे स्वस्तुंविश्वीण वाम्मा

पूष गोस्वः। षुद्भिर्श उक्थ्यो बृहथ्सामा। पर्वमाने कण्वरथन्तरं भवति। यो वै वाजुपेर्यः। स सम्राट्थ्सवः। यो राजुसूर्यः। स वंरुणसवः। प्रजापितिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्ध स्वाराँज्यम्। अयुत्ं दिक्षणाः। तिद्ध स्वाराँज्यम्। प्रतिधुषा-ऽभिषिश्चति। तिद्ध स्वाराँज्यम्। अनुद्धते वेद्यै दक्षिणत आंहवनी-यंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चति। इयं वाव रंथन्त्रम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोंरेवेन्मनंन्तर्हितम्भिषिंश्वति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विर्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वारांज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति॥१५॥ सि १ हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या राजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रिश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वातें पूर्जन्ये वर्रणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त ॥ श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत् ओजंस्वन्त ॥ श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वा-ऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजस्वदस्तु मे मुखम्। तेजस्विच्छरों अस्तु मे। तेजस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। तेजसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ँ। ओर्जस्विच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पर्योऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पर्यस्वदस्तु मे मुखम्ँ। पर्यस्विच्छिरों अस्तु मे। पर्यस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पर्यसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥ आयुंप्सि। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवांस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वे देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस् सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासा॰ रुचा। अभिषिश्चाम् वर्चसा। स्मुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिव विश्वतंः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसः। तम्हम्स्मा अम् ध्यायणायं। तेजंसे ब्रह्म-वर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसः। तम्हम्स्मा अम् ध्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसः। तम्हम्स्मा अमुष्यायणायं। अमुष्यायणायं। पृष्ठौ प्रजननाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसः। तम्हम्स्मा अमुष्यायणायं। आयुषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥ गोष्वोजंस्वतः श्रीण्म्योजीऽस् तते प्रयंखाम् पर्यस्य सम्पिपृष्य माऽसिंह्नभूविजये रसो हे वं॥[७]

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित स्वरीचाः। महत्तदस्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रो मदत्वनु बृहस्पतिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्वावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षेत्रेरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बहुस्पिकः सोमों अग्निर्वं च॥————[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंर्तन्त। अन्नंमेवेनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंर्तन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वाण्येवान्नान्यवं रुन्थे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्याह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति। यद्धिरण्यं ददांति। तेज्स्तेनावं रुन्थे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्राम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिंरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्ग्राँह्यण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र्समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिद्क्षेण्यों दर्शनीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्यों ऽवभृथा (३) ना (३) इतिं। यहंभीपुञ्जीलैः प्वयंति। तिथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। प्रिभेरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा पृतत्तेजो वर्चः। यह्भीः। यहंभीपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजंसा वर्चसाऽभिषिश्चित॥२९॥ भवन्त्वष्ट्रांमव्रुष्यं वदन्ति दुर्भा यहंभीपुञ्जीलैः प्वय्यके च॥——[९]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं पंश्रशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयंत बहोर्भूयांन्थ्स्यामितिं। स पंश्रशार्दीयंन यजेत। बहोर्व भूयाँन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बुहुर्भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयों भवति। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को युज्ञः। युज्ञमेवावं रुन्थे। सृप्तदृशः स्तोमा नातिं यन्ति। सृप्तदृशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥ भूर्यिष्टा यन्ति द्वे चं॥———[१०]

अगस्त्यो मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनुं वर्ज्रमुद्धत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चेवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐंन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहृन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्येतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य पुतेन यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा पुष युज्ञः। पुतेन वा एक्या वां कान्द्रमः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वारौज्यं गच्छति। य पुतेन यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै मुरुतों देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवित। य एतेन् यजेते। य उं चैनमेवं वेदं। पुश्चशार्दीयो वा एष युज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन् यजेते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तदशः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरेव नैति॥३४॥

तृतीर्ये गच्छति य एतेन् यजंतेऽति य एतेन् यजंते य उं चैनमेवं वेद् त्रीणि च (अगस्त्यः स्वाराँज्यं मारुतः पंश्वशार्दीयो वा एप युज्ञः संप्तदुशं प्रजापंतिरेव नैतिं॥)॥————[११]

अस्या जरांसो दमा मुरित्राः। अर्चर्द्धूमासो अग्नर्यः पावकाः। श्विचीचर्यः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनुरुषदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुंणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यिक्षे स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्री शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्धे। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हिरेर्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां दद्दशे सुवर्चाः। पूर्वापुरं चरतो माययैतौ। शिशू कीर्डन्तौ पिरं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनः। त्रीणि श्वा त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कृविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कृविक्रतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निष्ठियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिर्णिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठा ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रसप्तो वि चं यत्कृतं नंः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुता्ड् स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥ श्रुधि श्रुंत्कर्ण वह्निभिः। देवैरंग्ने सयावंभिः। आसींदन्तु ब्र्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावाणो अध्वरम्। विश्वेषामदितिर्यज्ञियानाम्। विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम्। अग्निर्देवाना-मवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षेमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवों दिधरे युज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे।
कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्।
त्वां जिह्वार शुचंयश्रिकिरे कवे। त्वार रांतिषाचीं अध्वरेषुं
सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य सार्धनम्।
अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वदेव धीमिह् प्रचेतसम्। जीरं

दूतममंत्र्यम्॥४०॥
यज्ञबाहुसासुपुर्यन्वयमृद्धां भिक्षमाणाः प्रचेतसुमेकं च॥——

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमाना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं।

पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिष्मा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युर्जं वृत्रेषुं विज्ञिणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्तकंतुः। उपं नो हरिंभिः सुतम्। स सूर आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया त्रणिरद्विबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्युंस्निधों अस्रो अद्विविभेद। उत्तत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र् सुहवर् हवामहे। अरहोमुचर् सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वर्रुण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तयै। महि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सर्खिभ्यश्चरथु ध समैरत्। इन्द्रो नृभिरजनदीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसं गातुमग्निम्। उरुं नों लोकमनुं नेषि विद्वान्। सुर्वर्वज्योतिरभंयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविंरस्य बाह्। उपंस्थेयाम शरणा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्यस्थविरेभिः सुशिप्रा अस्मे दधद्वषंण १ शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुह्रे वुज्रिणे मधुं। यथ्सीमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञन्धेनवी जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियुतो विश्ववाराः। अहरहर्भूय इज्जोगुवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोर्जनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आनजे। तमुंथ्सवे चं प्रसवे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासः शर्वसा मदं ननु॥४५॥ विज्ञिणंमयथ्स्वस्ति जोंजयुर्नः सप्त

प्रजापंतिः पशूनंसृजत। तेंऽस्माथ्सृष्टाः परां च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्योडशिना नाऽऽप्रोंत्। तान्रात्रिया नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्सन्धिना नाऽऽप्नोंत्।

सौंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानग्निस्रिवृता स्तोमेंन नाऽऽप्नींत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्स्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकवि्ष्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्माँत्पृशवः प्रप्रेव् भ्रश्शेरन्। स पृतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम्। पृतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमाँऽऽप्नुवन्। यं कामं कामयंते। तमेतेनाँऽऽप्नोति॥४८॥

व्याघ्रोऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अभिशस्तिपा अयम्। नम्स्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयार्कर्म

भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वृष्मीणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सवितः सर्वतांता। दिवेदिव आ सुंवा भूरिं पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्वभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्सूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दश्हत्। येभिद्याम्भ्यपिश्-शत्प्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपाश् समव्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समिक्षिः। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृदशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समंङ्गि॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अंस्तु पुष्कुलं चित्रभांनु। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मित्राजांनमधि विश्रयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधि॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। रथीतंम रथीनाम्। वाजांना सत्पतिं पितमं। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्भिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तों ऽभिषिश्चन्तु त्रेष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चाद्भिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वं त्वा देवा उत्तर्तो- ऽभिषिश्चं त्वाऽनंष्टुभेन् छन्दंसा। बृह्स्पतिं स्त्वोपिरंष्टाद्भिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा। ५३॥ अरुणं त्वा वृकंमुग्रङ्कं जङ्करम्। रोचंमानं मरुतामग्रं अर्चिषंः।

सूर्यंवन्तं मुघवानं विषासिहिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नामहूर्तम हवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसें नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥

वभुवाव्ययत्तेनममंग्र इह वर्चसा समिक्षु वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दसोपावंहरामि॥——[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपब्रहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यंं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावृभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं सञ्चरंन्तौ। दूरहेतिरिन्द्रियावांन्यतृत्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वर्त्रहस्तः। आ र्श्मीन्दंव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परिं। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सिवता स्वेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंम १ रथीनाम्। वाजांना १ सत्पंतिं पितम्। पिरमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्रवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः॥५७॥

तद्भावांणः सोमसुतों मयोभुवंः। तदंश्विना शृणुत र सौभगा युवम्। अवं ते हेडु उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सि॰ह॰ हिंन्वन्ति महते सौभंगाय। समुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवा॰सम्।। मर्मृज्यन्तें द्वीपिनंमफ्स्वंन्तः। उदसावंतु सूर्यः। उद्दिदं मामुकं

वर्चः। उदिंहि देव सूर्य। सह वग्नुना मर्मे। अहं वाचो विवार्चनम्। मिय वार्गस्तु धर्णसिः। यन्तुं नदयो वर्षन्तु पर्जन्यौः। सुपिप्पला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषा र राजां भूयासम्॥५८॥

र्वुधार्यं त्वा सुवेन द्योः सूर्य सप्त चं॥= ये केशिनः प्रथमाः सुत्रमासंत। येभिराभृतं यदिदं विरोचंते।

तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वशिनी ह्युंग्रा। प्र केशाः सुवते काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वर्पनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषेहस्व शत्रून्। अवासाग्दीक्षा विशनी ह्युंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरस्वार्युः। अथामुच्यस्व वरुणस्य पाशाँत्। केशानन् गाद्वर्चं पृतत्। तथां धाता कंरोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः।

येनावंपथ्सविता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रुणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदमुस्योर्जेमम्। रुय्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते सविता वर्च आदंधात्॥६०॥ तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावापृथिवी अपः

सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सर सृंजाथ। बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पयंसा घृतेनं। स्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सरसृंजाथ।

यथ्सीमन्तं कङ्कतस्ते लिलेखं। यद्वाँ क्षुरः परिववर्ज् वपर्इस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेम स् स सृंजाथो वीर्येण॥६१॥ अवाँसार्यक्षा वृशिनी ह्यंप्राऽदंशहुवर्ज् वपई स्ते हे चे॥————[१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विधुनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तर सईं स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्वंघनस्यं विधनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर हते। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

यः राजानं विशो नापचार्ययुः। यो वा ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स पुतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विष्शे। औद्भिंद्यमेव तत्। पुतद्वै क्षत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बुलिश हर्रन्ति॥६३॥

हरंन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐनुमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रंः क्षत्राण्यादंत्त। न वा इमानि क्षत्राण्यंभूवन्नितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां ह वे संच्किणो कप्लंकावुपावंहितो स्यातांम्। एवमेतो

युग्मन्तौ स्तोमौँ। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य १ हते। य पृतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यः। एवं छन्दा १सि। तेष्वसावांदित्यो बृहतीरभ्यृंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्ष्त्रं विशा। विशेवैनं क्षत्रेण् व्यतिषज्ति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषजति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनो नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥\_\_\_\_\_\_[१८]

त्रिबृद्धदाँग्वेयाँऽग्निमुंखा ह्याद्धियंदाँग्रेय आँग्नेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंन्य गोंसुवः सि॰्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ऑदनं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांसुस्तिष्टा हरीं प्रजापंतिः पृष्णुच्याप्रोऽयमुभिप्रेहिं वृत्रहन्तमो ये केशिन इन्द्रं वा अष्टादंशा॥१८॥

त्रिवृद्यो वे सोमेनायुरिस बहुर्भविति तिष्ठा हरीरथ् आयं भांतु तेभ्यों निधान्॰् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥ त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

# ॥तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियृवधंः सुमेधाः। श्वेतः सिषक्ति नियुतांमभिश्रीः। ते वायवे समनसो वितंस्थः। विश्वेन्नरंः स्वपृत्यानि चकुः। रायेऽनु यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्रयाभिः। प्र वायुमच्छां बृहुती मनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कृविः कृविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शृतिनींभिरध्वरम्। स्हुस्निणींभिरुपं याहि युज्ञम्। वायो अस्मिन् हुविषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्ततं बृहन्तम्ं। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्यं। यजांम देवमधिं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वन्निधिपाः पुराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वंस्य जगंतः पर्स्पाः। हृविर्नो देव विह्वे जुषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्व॥३॥

प्रावतो निवतं उद्वतंश्च। प्रजापते विश्वसृज्ञीवधंन्य इदं नो देव। प्रतिहर्य हुव्यम्। प्रजापतिं प्रथमं युज्ञियानाम्। देवानामग्रे यज्तं यंजध्वम्। स नों ददातु द्रविंण र सुवीर्यम्। रायस्पोषुं वि ष्यंतु नाभिम्स्मे। यो राय ईशें शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूनार रंक्षिता विष्ठिंतानाम्। प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

सहस्रंधामा जुषता १ ह्विर्नः। सोमांपूषणेमो देवो। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंक्र १ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिश्मम्। दिव्यंन्यः सदेनं च्क उच्चा। पृथिव्याम्न्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। रयि सोमो रयिपतिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वां। बृहद्वंदेम विदर्थे सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना ज्ञानं। विश्वमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तुत्तमं वंरुणास्तंभाद्याम्। यत्किं चेदं किंत्वासंः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न देक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवाना शृचिरपः॥६॥

मुगुषाऽस्तुं चृतंस्यास्मे कित्वासंश्ववारं च॥——[१]

मृन्पारस् चृतस्याम्मे कित्वामंश्वलारि चा [१]
ते शुक्रासः शुचयो रश्मिवन्तः। सीदंन्नादित्या अधि बुर्हिषिं
प्रिये। कामेन देवाः सुरथं दिवो नः। आ यान्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः।
ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र

युज्ञिया यजंमानाय येमुरे। आदित्याः कार्मं पितुमन्तंम्स्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु युज्ञम्। आदित्यासः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥ अस्मे कार्मं दाशुषे सन्नमन्तः। पुरोडाशं घृतवन्तं जुषन्ताम्।

स्कुभायत् निर्ऋति १ सेधतामंतिम्। प्र रुश्मिभिर्यतंमाना अमृधाः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्गृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जन्यंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीर्णं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बुर्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्श्सत। आदित्याः कामं हृविषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। हृव्यं मृतिं चाग्नये सुपूंतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुषा जनूर्षि। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरो मृतयो देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्र सुप्रतींक्र् स्वश्रम्। हृव्यवाहंमर्तिं मानुषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनंग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंरस्मभ्यर्र सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिर्जरेंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला नं उर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वृच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्घाजिनी प्राच्येति। ह्विर्भरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रं नरो युजे रथम्। जुगृभ्णाते दक्षिणमिन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति १ शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण १ रियन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्वयम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वः। सिनेन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः। स१ सूरिभिर्मघवन्थ्स १ स्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवानार् सुमृत्या युज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत् तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियं जरित्रे वाजंरलाम्। आ वेधस्र सह शुचिंः। बृहुस्पतिंः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। सृप्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि सप्तरंश्मिरधमत्तमारंसि॥१३॥

बृहस्पितः समंजयद्वसूनि। महो ब्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांसन्थ्स्वरप्रंतीत्तः। बृहस्पित्र्हन्त्यमित्रंमकेः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नों दिवः पावींरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय शृष्मेभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणां तंविषेभिंस्कर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवसे स्वृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥ व्वयानैव्वाः सुप्तं यजत्र हस्त्मस्त् तमाईस्वृमिभिःई चं॥———[२]

सोमों धेनु र सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं कंर्मण्यं ददातु। सादन्यं विद्थ्यरं सभेयम्। पितुः श्रवणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युथ्सु त्वर सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वम्पो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तरिक्षम्। त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्ध॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृंथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तेभिन्ते विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्थ्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदंस्य प्रियम्। प्र तद्विष्णुः। प्रो मात्रया तुनुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधो मिथतीररिषण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिंन्द्र। आभिविश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अयश्र्षण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमृत प्र कृणते युधा गाः। यदा स्त्यं कृणुते मृन्युमिन्द्रंः॥१७॥

विश्वं दृढं भेयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामक्षर्न्नापां अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मेनाहन्नुभिद्यून्। मुरुत्वन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकवारिं दिव्यः शासमिन्द्रम्। विश्वासाहुमवसे नूतंनाय। उग्रः संहोदामिह तर हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं मुरुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं द्धनृद्धनिष्ठा। क्रंस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक र समर्धत्ताहिहत्यै। अह इ ह्यंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनंमं वधस्नेः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। मरुद्धिरिन्द्र सख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधौं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनेव विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृंथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्दृत्रतूर्यं॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एकराजो जगंतः परस्पाः। यदा वृत्रमतंरुच्छूर् इन्द्रंः। अथाभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता रहिवर्नः। वृत्रं तीर्त्वा दान्वं वर्ज्रबाहुः॥२१॥

दिशोऽद्दश्हद्दृश्हिता दश्हेणेन। इमं युज्ञं वर्धयेन्विश्व-वेदाः। पुरोडाशुं प्रति गृभ्णात्विन्द्रेः। युदा वृत्रमतंरुच्छूर् इन्द्रेः। अथैकराजो अंभव्ञनांनाम्। इन्द्रों देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रों देवानांमभवत्पुरोगाः। इन्द्रों यज्ञे ह्विषां वावृधानः। वृत्रतूर्नों अभय शर्म य सत्। यः सप्त सिन्धू रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोदिशंश्च। इन्द्रों ह्विष्मान्थ्सगंणो मुरुद्भिः। वृत्रतूर्नों यज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥

बुबुध् बिथ्स इन्द्रंस्तुरायांस्त वृत्रत्यें वर्जवाहः पृथ्व्यात्रीणि च॥———[३] इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः।

तस्यं वय संमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भृद्रे सौमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य स्ति। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्र इस्तिहि विज्ञिण्इ स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता इिवर्नः॥२३॥

ह्त्वाऽभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरंं वृज्जिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनेषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमधिपाः पुरोहिंतः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तंविषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यंं चित्रं वृषंणश्र्यिन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाद्दंहदभिमातिहेन्द्रं। स

नों ह्विः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नो अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहृन्नहिम्ं। इन्द्रों यातो-ऽवंसितस्य राजां। शर्मस्य च शृङ्गिणो वर्ज्जबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्ं। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्त्रेणासृजद्दृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्ं। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधेना। प्रजावंद्स्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं युज्ञं जुषमाणावुपेतम्। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनाय मिह शर्म यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्ज्य ह्विषां वृधाना। ज्योतिषाऽरांतीर्दहत्न्तमारंसि। ययोरोजंसा स्कभिता रजारंसि। वीर्येभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रंतीत्ता सहोंभिः। विष्णूं अगुन्वरुंणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणावभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामींवा सेधत र रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतयें ह्विः। मही न द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भंवता र शुचयंद्भिरकेंः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृहती विमिन्वन्। नृवज्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्वः सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्येन। जर्नेन यातं मिहं वां वर्रूथम्। स इथ्स्वपा भुवनेष्वास। य इमे द्यावांपृथिवी जजानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकैं। अव १शे धीरः शच्या समैरत्॥ २९॥ भूरिं द्वे अर्चरन्ती चरेन्तम्। पद्बन्तं गर्भमपदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थै। तं पिंपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यांवापृथिवी सत्यमंस्तु। पितर्मातर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः।

विद्यामेषं वृजनं जी्रदानुम्। उुर्वी पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा युज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षेतं पृथिवी नो अभ्वाँत्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावती । सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरो-

ऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥ हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्केरैरदुस्मिन्पश्चं च॥=

शुचिं नु स्तोम् इ श्वर्थद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृंत्रहणा गीर्भिविप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य युन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्ति देवाः। बृहद्वंदेम

विदर्थे सुवीराः। स ई ५ सुत्येभिः सर्खिभिः शुचद्भिः। गोधायस् विधंनसैरंतर्दत्। ब्रह्मंणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैं:॥३१॥ घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट्। ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावशम्। सत्यो मृन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्यस दिवे वि चांभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूशुवद्रातहंच्य इत्। जातेनं जातमित्मृत्प्र सृरंसते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहां॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यों विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा र उपंपृिङ्क्ष नस्त्वम्। यदीशानो ब्रह्मणा विषि मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वार्जं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवासति। श्रुद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उभे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरति प्रजानन्। पूषा सुबन्धुंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पतिम्घवां दस्मवर्चाः। तं देवासो अदेदः सूर्यायैं। कामेन कृतं तवस् इस्वश्रम्। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अर्पितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्ञक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिरं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सृत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमृकं गृणते तुरायं। मारुंताय् स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्रस् सहंसा सहंन्ते। रेजते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसे्ष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥ वक्षः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषं यच्छुताधि। अस्मभ्यं तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंसु आ नंमन्ति। इमे शर्रसंवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेंव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोंभिः। पृश्वेः पुत्रा उंपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मृरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इन्द्रियायं। सृत्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यें। अनुं क्षुत्रमनु सहों यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यें। य इन्द्रं शुष्मों मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत् नृभ्यः। त्व १ हि दृढा मेघवृन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विष्रूपं यदस्तिं। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध् उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र १ सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्भं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तमुं ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीषु। प्र धृंष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतों अभिसमेंत्वर्वाङ्। इन्द्रं आ देवो यांतु सविता सुरत्नं। अन्तरिक्षप्रा वहंमानो अर्थैः।

हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्तो बृहन्तम्। आस्थाद्रथरं सिवता चित्रभांनुः। कृष्णा रजारंसि तर्विषीं दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ सांविषद्वसुंपित्वर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनुमधंरासतेन। विजनां ञ्छ्यावाः शितिपादो अख्यन्। रथ् हिरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्विद्दशंः सिवृतुर्देव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवनानि तस्थुः। विस्पूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गृभीरवेपा अस्रुरः सुनीथः। केदानी स्सूर्यः कश्चिकेत। कतमान्द्या रश्मिरस्या तंतान॥४१॥

भगं धिर्यं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशक्सो ग्रास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंथीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतः स्याम। आ नो विश्वे अस्क्रागमन्तु देवाः। मित्रो अर्थमा वर्रुणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करन्थ्सुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शक्ष सरंस्वती सह धीमिरंस्तु॥४२॥

शर्मभिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितुः सत्यसंवस्य विश्वै। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्युः शर्मं बहुलं वि यंन्त। विश्वें देवाः शृणुतेमः हवंं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अंग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषिं मादयध्वम्। आ

द्यौः पितः पृथिवि मातुरध्रुंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः।

देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्नंः। दर्घातन द्रविणं चित्रमस्मे। अग्ने

वाँ मित्रावरुणा ह्व्यजुंष्टिम्। नर्मसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥ अस्माकुं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्द्व्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरच्छिंद्रा मन्तंवो हु सर्गाः। अवांतिरतमनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वाँ

मित्रावरुणा मिह्त्वम्। ईुर्मा तुस्थुषीरहंभिर्दुदुहे। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥ यद्वश्हिष्टन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्रश्र शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवाश्सः स्याम।

ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवां स्सः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वरमा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गव्यूतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥
आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा।

इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्नें। अषांढाय् सहंमानाय मीदुषें। तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र् शन्तंमेभिः। श्वतः हिमां अशीय भेषुजेभिः। व्यंस्मद्वेषां वित्रं व्यः व्यंसीवाङ्श्चातयस्वा विष्चीः॥४७॥

अर्हन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुतार सुम्नमेतु।
मा नः सूर्यस्य सन्दशो युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्र
जायमिह रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न
हंणी्षे न हर्स्ते। हावन्श्रूर्नो रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः।
परि णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्ट्रमार्हन्बिभर्षि। त्वमंग्ने
रुद्र आ वो राजानम्॥४८॥
वर्षि ततानास्तु विश्वानं ववत्यां ववति पृतेन विष्वीः श्रुतन्द्वे चं॥———[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भृद्रायं भृद्रम्। भृद्रा

अश्वां हरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवृत्वं तन्मंहित्वम्। मध्या कर्तोवितंतुर सञ्जन्मार॥४९॥

यदेदयुंक्त ह्रितंः स्थस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सि्मस्मैं। तन्मित्रस्य वरुणस्याभि्चक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमुन्यद्रुशंदस्य पाजंः। कृष्णमुन्यद्धरितः सं भेरन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिर्भाजमानः। नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसी। शं नों भव चक्षंसा शं नो अह्नाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शम्स्मै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषंश्च। त्वष्टा दधत्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पि्शङ्गं रूपः। दशेमन्त्वष्टुंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभर्त्रम्। तिग्मानीक्ष्ट् स्वयंशसं जनेष्। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यो वर्धते चारुरास्। जिद्यानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीची सिर्हं प्रतिजोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नमस्यः सुशवः। राजां सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वयर सुमतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। अनुमीवास् इडिया मदेन्तः। मितज्मवो वरिमन्ना पृथिव्याः। आदित्यस्य व्रतमुंपक्ष्यन्तः॥५३॥

व्यं मित्रस्यं सुमृतौ स्याम। मित्रं न ई॰ शिम्या गोषुं गृव्यवत्। स्वाधियों विदर्थे अपस्वजीजनन्। अरेजयता॰ रोदंसी पार्जसा गिरा। प्रति प्रियं यंज्तं जनुषामवंः। महार आंदित्यो नमंसोपसद्यः। यात्यज्ञनो गृणते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ वार् रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वर्श्वः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिंवाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्साऽऽयांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमिश्वना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वाक्। दस्रां निधिं मधुमन्तं पिबाथः। वि वा र रथो वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तान्दिवो बांधते वर्तनिभ्याम्। युवोः श्रियं पिर् योषांवृणीत। सूरों दिहुता परितिक्सयायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शवींभिः। परिघ्रुष् सवां मनावां वयोगाम्। यो ह्स्यवार्ष रिथरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्धः समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिंधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दूरसनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाम्। इदं वर्चः सप्यिति। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यात्। देवद्रीचा मनंसा यो घृतेनं। तस्ये ब्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥ विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँ खुविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्वत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमव्सं पृणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषः। अविंन्दतं ज्योतिरकं बहुभ्यः। अग्नीषोमाविम स् से अग्नीषोमा ह्विषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभार बौगुन्नेष्ठपस्थं उप्रक्ष्यतां वह्याने व्यां यादंमानः समुद्वेऽ १ हंमः प्रस्थितस्य॥——[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नमदन्तंमिद्ये।

पूर्वमृग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमुत्त्रेषुं। व्यात्तंमस्य पृशवः सुजम्भम्। पृश्यंन्ति धीराः प्रचरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जहाम्यन्यम्। अहमन्नं वशमिचंरामि॥५९॥

स्मानमर्थं पर्येमि भुअत्। को मामन्नं मनुष्यो दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैर्देवैः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शृत्तमी सा तुनूमें बभूव। महान्तौ चुरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भूयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमाहुः। अन्नं मृत्युं तम् जीवातुंमाहुः। अन्नं ब्रह्माणीं जुरसंं वदन्ति। अन्नंमाहुः प्रजनंनं प्रजानाम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सृत्यं ब्रंवीमि वृध इथ्स तस्यं। नार्यमणुं पुष्यंति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तुनयुन्वर्षंत्रस्मि। मामंदन्त्युहमंदयुन्यान्॥६१॥

अह १ सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा १ षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं गन्ध्वाः प्रावों मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागृक्षरं प्रथम्जा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। अवंन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मत्रुकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छंं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाचर् ह्विषां यजामहे। सा नों दथातु सुकृतस्यं लोके। चुत्वारि वाक्परिमिता पुदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणः। गुह्य त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति।
तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रृद्धयां विन्दते
ह्विः। श्रृद्धां भगस्य मूर्धिनं। वचसा वेदयामिस। प्रियः श्रृद्धे ददेतः।
प्रियः श्रृद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृधि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्रिरे।

एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृधि। श्रृद्धां देवा यजंमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रृद्धाः हृंदय्यंयाऽऽकूँत्या। श्रृद्धयां हूयते ह्विः। श्रद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥

श्रद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रद्धा देवानिधं वस्ते। श्रद्धा विश्वंमिदं जर्गत्। श्रद्धां कामस्य मातरम्। ह्विषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुिश्नयां उप मा अंस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकेर्भ्यंचिन्ति वथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगंत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनां। अन्तरंस्मिन्निमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन कोंऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मन्देवास्त्रयंस्त्रि श्यत्। ब्रह्मित्रन्द्रप्रजापती। ब्रह्मन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः समाहिता। चतंस्र आशाः प्रचंरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंत्रजर्श् सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्भंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भुद्रमंक्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रुणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोंभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रः। इच्छामीखृदा मनंसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्लीलं चित्कृण्था सुप्रतीकम्। भद्रं गृहं कृण्थ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते स्भास्। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिवंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्रसः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृज्यात्। उपेदमुपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

चुरामि कर्नीयोऽन्यानिर्पता पदानि यज्वंसु हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्वा पिवंन्तीः पर्द $\|$ —[  $\$  ]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा मृहत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न मृमे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परिं यात् अर्म्यां। दिवो न र्श्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुवन्ती भुवना कृविकृत्। सूर्या न चन्द्रा चरतो ह्तामंती। पतीं द्युमिद्वेश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षुणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता महिंव्रता। विश्ववपरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मृनुस्विनोभानुंचरतोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नुर्द्यः सप्त बिंभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शृतं वर्पुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रुद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टैं। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनेः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासा र राजाँ। यासाँ देवाः शिवेनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भुद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कुह कस्य शर्मन्॥ ७३॥

अम्भः किमांसीद्गहेनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अह्रं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँद्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रैं प्रकेतम्। सुलिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेना्भविपिहितं यदासीत्। तमस्तन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समेवर्त्तािधं॥७४॥

मनंसो रेतंः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिरश्चीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्मिह्मानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तात्। को अद्धा वेद् क इह प्र वोचत्। कृत् आजाता कृतं इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेंद्र यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यंक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्गः वेंद् यदिं वा न वेदं। किङ्स्विद्वनुङ्कः उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावापृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्टद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनुं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥ ७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्ठतृक्षुः। मनीषिणो मनसा विब्रंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्। प्रातर्गि प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातर्श्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोममुत रुद्र हुंवेम। प्रातुर्जितं भगमुग्र हुंवेम। व्यं पुत्रमदितेर्यो विधृत्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चित्॥७७॥

राजां चिद्यं भगंं भृक्षीत्याहं। भगु प्रणेतुर्भगु सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददन्नः। भगु प्र णों जनय गोभिरश्वैः। भगु प्र नृभिर्नृवन्तंः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रिपत्व उत मध्ये अह्नौम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यंस्य। वयं देवाना र् सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भगु सर्व् इञ्जोहवीमि। स नों भग पुर एता भंवेह। समध्वरायोषसों नमन्त। दृधिकावेंव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगंं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥ विच्छुन्तु शर्मत्रिषे विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्त्रिश्चेद्देवाः प्रपीना एकं च॥[९] पीवाँत्रान्ते शुक्रासः सोमां धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यां देवीम्हर्मस्म् ता सूर्याचन्द्रमस्म नवं॥९॥ पीवाँत्रामग्ने त्वं पारयानाभृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो क्कोऽत्रं प्राणमत्रन्ता सूर्याचन्द्रमस्म नवंसप्तिः॥७९॥ पीवाँतां य्यं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टकम् ३॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं र्ष्मयो यस्यं कृतवंः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिकाभिर्भिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुविते देधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृहती चित्रभानुः॥१॥

सा नो युज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेम शूरदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तात्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना। प्रजा-पंति १ ह्विषां वर्धयन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु युज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रियर रांजन् प्रियतंमं प्रियाणाँम्। तस्मैं ते सोम ह्विषां विधेम। शं नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आर्द्रयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिष्ट्रियानाँम्। नक्षेत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजार रीरिष्नमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिं णो वृणक्ता। आर्द्रा नक्षेत्रं जुषतार ह्विर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघशर् सन्नुदतामरांतिम्। पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोत्। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वें। पुनः पुनर्वो ह्विषां यजामः। एवा न देव्यदितिरन्वा। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येत् पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठां देवानां पृतंनास् जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पृश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्रंयः स्याम। इद स्पर्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥

ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नेः सूर्पासो हवमार्गमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमन् स्श्ररन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मधुमञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मघास्। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमार्गमिष्ठाः। स्व्धाभिर्य्ज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। याः श्चं विद्या याः उं च न प्रविद्या। मुघासुं युज्ञः सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः सिन्तारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप् संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सिक्षिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रम्जर्रं सुवीर्यम्। गोम्दर्श्वंवदुप् सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनी्रा विवेश। भगस्येत्तं प्रंसुवं गेमेम। यत्रं देवैः संधुमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहुन् हस्तर्थ सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारंमुद्य संविता विदेय। यो नो हस्ताय प्रसुवाति यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभर संसं युवृतिर रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्व। रूपाणि पिर्शन् भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदुं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स्सनोत्। गोभिर्नो अश्वेः समनत्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्येति निष्ट्याम्। तिग्मर्श्वङ्गो वृष्भो रोरुंवाणः। सुमीरयुन् भुवंना मात्रिश्वा। अप द्वेषा सि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नो वायुस्तद् निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्ँ। तन्नो देवासो अनुजानन्तु कामम्ँ। यथा तरेम दुरितानि विश्वाँ। दूरमस्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृंणुतां तद्विशांखे। तन्नो देवा अनुमदन्तु युज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादर्भयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूचः शत्रूनप् बार्धमानो। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवतिः सजोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुं दुहां यजमानाय युज्ञम्॥१२॥

बित्रमांपुर्वजमाने दश्व हिवर्नः प्रयुक्षेतां ज्यन्ताक्षेतां मदेम रोचंमानामरांतीगींगे युज्ञम्॥——[१]

ऋष्यास्मं हुव्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धयंं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयंन्तः। श्रतं जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति पृथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तरिक्षे। इन्द्रौं ज्येष्ठामनु नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृंत्रतूर्ये ततारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहांनाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुर्न्द्रायं वृष्भायं धृष्णवें। अषाढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुमृद्दुहांना। उरुं कृणोतु यर्जमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिनंक्षंत्रं पशुभिः समंक्तम्। अहंभूयाद्यजमानाय मह्यम्॥१४॥

अहंनों अद्य सुंविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति।

परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजायें शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासामषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न् आपः शः स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तद्ष्षाढा अभिसंयन्तु युज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम्। शुभाः कन्यां युव्तयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतो वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् हविषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च् सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दधात्वहृंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मंणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंशृणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना १ ह्विषां यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। महीं दिवं पृथिवीमन्तरिक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य १ श्लोकं यजमानाय कृण्वती।

अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पौन्तु रजसः पुरस्तौत्। संवथ्सरीणममृतः स्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तौत्। दक्षिणतोऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा नो अरातिरघशु साऽगन्। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिभेषुग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः। श्रत सहस्रां भेषुजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयात्। तन्नो विश्वे अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानि प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वें। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभाजमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुह्दगृन्द्याम्। तर सूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥ अहिंविधियः पर्थमान एति। श्रेष्ठों देवानांमत मानेषाणाम्।

अहिं बुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासों अभि रंक्षन्ति सर्वै। चत्वार् एकंम्भि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुध्रियं परिषद्य इत्वन्तंः। अहि रे रक्षन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

ड्मानिं हुव्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां युज्ञम्। क्षुद्रान् पुशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वा<u>र</u>् अन्वेतु पूषा। अत्रूर् रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर्ं सनुतां यजंमानाय युज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गमिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्रर् हविषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहो। विश्वंस्य दूतावमृतंस्य गोपो। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां मह्तो महान् हि। सुगं नः पन्थामभयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्ननम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदस्य चित्र १ ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्ते देवा अदेधुः॥२३॥

देवा अदधुः॥२३॥
ततारु मह्यं प्रामुचीर्या याँन्तु युज्ञं वाचई स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ देवास्त्रीणिं
च॥
[२]

नवीनवो भवति जार्यमानो यमोदित्या अर्शुमौप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। सुमानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमेतम्। वयं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अतिं पाप्मानमितं मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायृती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यंस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षेत्रमर्चिमत्। भानुमत्तेजं उचरत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु १ हवामहे। स नंः सिवता स्वय्यानम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिनं उरुष्यतु महीमूषु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनो-ऽद्यानुमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। ह्व्यवाहु ६ स्विष्टम्॥२६॥

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम् ग्रये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव १ ह वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहाँ। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहाँ। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्ये स्वाहां। चुपुणीकांये स्वाहेति॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासारं रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छ्येतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनया गच्छत। उप हु वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानायै स्वाहाँ प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीनाः राज्यम्भिजंयेयमिति। स एतः सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीनाः राज्यम्भ्यंजयत्। सुमानानाः ह वै राज्यम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एत १ रुद्रायाऽऽद्रीये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पृशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽद्रीये स्वाहाँ। पिन्वंमानाये स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेति॥३०॥

ऋक्षा वा इयमंलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंन-स्पतिंभिः प्रजांयेयेतिं। सैतमदिंत्यै पुनंवंसुभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते हु वै प्रजयां पृश्भिः। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्यै स्वाहा प्रजांत्यै स्वाहेति॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतये तिष्यांय नैवारं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स

ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी हु वै भंवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सूर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यें

देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दन्दशूकैंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥ पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रुयामेति। त एतं पितृभ्यों मुघाभ्यः पुरोडाश्र् षद्भंपालं निरंवपन्। ततो वै ते

करम्मं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपांनयन्। एताभिर्ह वै

पितृलोक आर्ध्रवन्। पितृलोके हु वा ऋषोति। य एतेन हिवषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽनघाभ्यः स्वाहांऽगदाभ्यः। स्वाहांऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेति॥३४॥ अर्थमा वा अंकामयत। पृशुमान्थस्यामितिं। स एतमंर्थम्णे

अयमा वा अकामयता पृशुमान्थ्रस्यामाता स एतमयम्ण फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हृ वै भंवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना ईस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगांय स्वाहा फल्गुंनीभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधींरन्। स्विता स्यामितिं। स एत सिवेत्रे हस्ताय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां ब्रींहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्धेवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहां हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेति। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायै पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र॰ हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्रायै स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजायै स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामुचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांयै गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामुचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामुचार ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांये स्वाहां। कामुचारांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रैष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रैष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रैष्ठ्यं ह् वै संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाहा विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रैष्ठ्यांयु स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनैव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्यै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेति॥४१॥

कामांयु स्वाहाऽऽगत्ये स्वाहिति॥४१॥ अग्निः पर्श्वदश प्रजापितिः षोडंशु सोम् एकांदश रुद्रो दश्केंकांदश् बृहुस्पतिर्दशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुंदंशु त्वष्टां बायुरिन्द्राग्नी दशं दशाथैतत्वौर्णमास्या अष्टी पश्चंदश॥[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रुधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्वरुं निर्रवपत्। ततो वै स मित्रुधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रुधेयर्थ हु वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहां-ऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रुधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेति॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेयमितिं। स एतमिन्द्रांय ज्येष्ठायैं पुरोडाश्मेकांदशकपालुं निरंवपन्महाव्रींहीणाम्। ततो वै स ज्यैष्ठ्यं देवानांमभ्यंजयत्। ज्यैष्ठ्यं हु वै संमानानांमभिजंयति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्यैष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेति। स एतं प्रजा-

मूल रे हु वै प्रजां विन्दते। य एतेन हिवधा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहाँ। प्रजाये स्वाहेति॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कामंम्भिजंयेमेति। ता एतमुद्रांऽषाढाभ्यंश्चरं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कामंमभ्यंज्यत्। समद्रः इ वै कामंमभिजंयति। य एतेनं

पंतये मूलांय चरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलंं प्रजामंविन्दत।

कार्मम्भ्यंजयन्। समुद्र ह वै कार्मम्भिजंयित। य एतेनं हिवणा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्भः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कार्माय स्वाहां। अभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४५॥ विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेतिं। त एवं विश्वेरो देवेर्गाऽषादास्यंश्वरं निर्म्वपना वर्वो वै वे

पृतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै तें-उनपज्य्यमंजयन्। अनुप्ज्य्यः हु वै जंयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुप्ज्य्याय स्वाहा जित्यै स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेय्मितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें चुरुं निरंवपत्। ततो वै तद्वंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक रह् वा अभिजंयित। य एतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्युष्ट् श्लोकर् शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदिति। स एतं विष्णंव श्लोणायै पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वै स पुण्युष्ट् श्लोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्यर् ह वै श्लोकर्श् शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्लोणाये स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्लुताय स्वाहेतिं॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामिति। त एतं वसंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं ह वै संमानानां पर्येति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वस्भ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहाँ। अग्रांय स्वाहा परींत्ये स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स

पूतं वर्रुणाय श्तिभिषजे भेषुजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निरंवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो व स दृढोऽशिथिलोऽभवत्। दृढो ह् वा अशिथिलो भवति। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्तिभिषजे स्वाहां। भेषुजेभ्यः स्वाहेति॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। स पृतमृजायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरं निरंवपत्। ततो व स तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। तेजस्वी ह् व ब्रह्मवर्चसी भवति। य पृतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। तेजंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुभ्नियां ऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुभ्नियांय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिंकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा है वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुभ्नियांय स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थस्यामितिं। स पृतं पूष्णे रेवत्यें चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य पृतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेति॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमृश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रोंत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी हु वा अबंधिरो भवित। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्यै स्वाहेति॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायाप्भरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पितृणाः राज्य-मभ्यंजयत्। सुमानानाः ह वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहां-ऽपुभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम् आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमित। येन कामेन यज्ञते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगत्ये स्वाहेति॥५६॥

मित्र इन्द्रं प्रजापंतिदंशं द्शाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्रयांदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहिंवं बुप्रियः प्रणाऽिक्षनी युमो दशं दशाथैतदंमावास्यांया अष्टो पश्चंदश॥—————[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृष्यांयै पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्संवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सार्युज्य र सलोकर्तामाप्नोत्। अहोरात्रान् हु वा अर्धमासान्मासां-नृतून्थ्यंवथ्यरमाप्त्वा। चन्द्रमंसः सार्युज्य र सलोकर्तामाप्नोति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृश्यांयै स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। सुवृथ्यराय स्वाहेति॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह। न नांवहोरात्रे आंष्ठुयातामिति। ते पुतमंहोरात्राभ्यां चुरुं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायै च कृष्णाये च। ततो वे ते अत्यंहोरात्रे अंमुच्येते। नैने अहोरात्रे आंष्ठुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनमहोरात्रे आंष्ठुतः। य पुतेन हिविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिमृत्त्वे स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां-ऽभवत्। प्रियो हु वै संमानाना र सुभगां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेति॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपति। यथा त्वं देवानामिसं। एवम्हं मंनुष्यांणां भूयासमितिं। यथां हु वा एतद्देवानांम्। एव॰ ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहाँ। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहाँ। हरसे स्वाहा भरसे स्वाहाँ। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहाँ। तपंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामिति। स एत र सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमदिंत्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ पुवान्ततः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहाः। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चेदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्रशाधैतस्मै नक्षंत्राय त्रयांदश् सूर्यो दशाधैतमदित्यै पश्चाधैतं विष्णंवे पद्रथ्सप्त (स्विताऽऽशूनां ब्रीहीणामिन्द्रों महाब्रीहीणामिन्द्रः कृष्णानां ब्रीहीणामेहोरात्रे ह्यानां ब्रीहीणामि। पितरः पद्रंपालश् सविता द्वादंशकपालमिन्द्र्यश्ची एकांदशकपालमिन्द्र्य एकांदशकपालमिन्द्र्य राक्षेपालं विष्णुंक्षिकपालमिहिभूमिकपालमिन्द्र्यो वृद्धस्ताः पश्चंदशकपालमिश्चर एकांदशकपालमिन्द्र्य वृद्धस्ताः विष्णुंक्षिकपालमिन्द्र्याः स्वाप्तं वृद्धस्तिः पर्यास्त्र स्वाप्तं वृद्धस्तिः पर्याः सोमों वायुरिन्द्राश्ची मित्र इन्द्र् आणे ब्रह्मं युमोऽभिजित्ये त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजायं पौणंमास्या अमावास्याया अगत्ये विश्वे जित्यां अश्विनो श्वर्त्ये ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायुः स एतदापस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतित्रिरंवपन्। आपोऽकामयन्त् मेति ता एतित्ररंवपन्। इन्द्र्यशी अश्विनोवकामयेतां वेति तावेतित्ररंवपताम्।

अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते एतित्ररंवपताम्। अन्यत्रांकामयेतिते स एतित्ररंवपत्। इन्द्राग्री श्रेष्ठामिन्द्रो ज्येष्ठामिन्द्रों दृढः। अहिः सूर्योऽदिंत्ये विष्णंवे प्रतिष्ठायैं। सोमों युमः संमानानाम्। अग्निर्नों रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः॥)॥———[६]

अग्निर्मृस्तन्नो वायुरहिर्वुग्नियं ऋक्षा वा इयमघेतत्यौर्णमास्या अजो वा एकंपाथ्सूर्यस्त्रिपंष्टिः॥६३॥ अग्निर्मः पातु प्रतिष्ठाये स्वाहेति॥

अग्निर्न ऋध्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥६॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पूर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंणशाखयां वृथ्सानंपाकुरोतिं। ब्रह्मणैवैनानुपाकरोति। गायुत्रो वै पर्णः। गायत्राः पशवंः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानिं। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवैनां देवतंया प्राप्यति। यं कामयेतापृशुः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपृशुरेव भवति। यं कामयेत पशुमान्थ्रस्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनंं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरेँत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यदुदींचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदींचीमा हंरति। उभयौंलींकयोर्भि-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्याह। इषेमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृश्चवंः॥३॥

वायवं पुवैनान्परि ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्यंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव प्शूनुपं ह्वयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांहु प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण् इत्यांह। युज्ञो हि श्रेष्ठंतम्ं कर्म। तस्मादेवमांह। आप्यायध्वमघ्निया देवभागमित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा पृताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं पृवेना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् १ हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयुक्ष्मा इत्यांहु प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशरंस् इत्यांहु गृह्यै। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवैनास्त्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा पुवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृश्न्याहीत्याह। पृश्न्नां गोपीथायं। तस्माँथ्सायं पृश्न्व उपंसमावंतन्ते। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रेपादाय। तस्माद्ग्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये॥६॥ पृश्वः करोति पृश्वां देवभागमित्यांह करोति वर्ष च॥——[१]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वृशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वृशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हरच्छैति। प्राजापृत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिं दंधाति। प्रत्युंष्ट्रं रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां बर्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वित्ष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुंः स्वधाकृंता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयः। यज्ञः पुरस्तात्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह बर्हिरासद इत्यांह। बर्हिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषृतमसीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं केरिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहि रंसायै। यावंतः स्तम्बान्यंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छि रूप्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक र्रं स्तम्बं परिंदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युजस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं पृवैनंत्करोति। मा त्वाऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि रंसायै। पर्वं ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनों मीयते। य पृवं वेदं॥११॥ देवंबर्हिः शृतवंल्श्ं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वयः रुहेमेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवैन्थ्सम्भंरति॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्द्रास्नाँ करोति। इन्द्राण्यै सन्नहंन्मित्यांह। इन्द्राणी वा अग्ने देवतांना १ समंनह्यत। साऽऽभ्रौत्। ऋद्धै सन्नह्यति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंश्नात्वित्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राञ्चमुपंगूहति। पृश्चाद्वे प्राचीन् र रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्ध्रा हंगुमीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः॥१४॥

ब्रह्मणैवैनंद्धरति। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यैं। देवङ्गमम्सी-त्यांह। देवानेवैनंद्रमयति। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रपादाय। तस्माद्गभाः प्रजानामप्रपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्य लोकस्य समेष्ट्यै॥१५॥ स्योनित्वायं स्वयाकृंताऽसीत्यांह वायाहेदं भरति जायन्ते बृहस्सिकः समेष्ट्ये॥——[२]

धृत्यैं॥१७॥

प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्र॰सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्मौत्राय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्र साय। शुन्धंध्वं दैव्याय कर्मणे देवयुज्याया इत्याह। देवयुज्यायां एवैनानि शुन्धति। मातरिश्वंनो घर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्यंषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादिवमाह। विश्वधाया असि परमेण धाम्नेत्याह। वृष्टिर्वे विश्वर्धायाः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह

वसूनां पवित्रमसीत्याह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भागधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। शतधार ५ सहस्रंधारमित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाश-शाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्धे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजंमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रं दर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयों रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक् ह्येतदहेः। अन्नं वै चन्द्रमाः। अन्नं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य सर्वतंः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रफ्स

दुहे॥२१॥

बृहते नाकायेत्याह। नाकमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥२०॥ पवित्रंवत्यानंयति। अपां चैवौषंधीनां च रसर सर्मुजति। अथो ओषंधीष्वेव पशून्प्रतिष्ठापयति। अन्वारभ्य वार्चं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्ति। कामंधुक्ष इत्याहाऽऽतृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यर्जमानो

स्कन्दंति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्यं विप्रुषों भागधेयम्। अग्नयं

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्याह। इयं वै विश्वायुः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकर्मा। इमानेवैताभिर्लोकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथाँ प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवैनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पशून्दुंहन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्राय देवेभ्यों हविरिति वाचं विसृजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृत्यै। त्रिरांह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वारुभ्योत्तंराः। अपंरिमितमेवावं रुन्धे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥ यातयांम्रा ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १ षिं। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामो ऽस्तीतिं। कामंमेव दारुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥ २४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्तिं। यदा खलु वै प्वित्रमृत्येतिं। अथ् तद्धविरितिं। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्यांह। अपां चैवौषंधीनां च रस्र् सर् सृंजति। तस्मांद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनंस्य सात्य इत्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। सोमेन त्वातंनुच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमंमेवेनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सर सोमं न पिबंति। पुनर्भक्ष्यौंऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै साँन्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्साँन्नाय्यं पिबंति। अपुनर्भक्ष्यौंऽस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापिं दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ईं स्यात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण् वाऽपिं दधाति। तिष्के सदेवम्। उद्नबद्भवित। आपो वे रेक्षोघ्रीः। रक्षंसामपंहत्ये। अदंस्तमिष् विष्णांवे त्वेत्यांह। यज्ञो वे विष्णांः। यज्ञायैवेनददंस्तं करोति। विष्णां हृव्य १ रेक्षस्वेत्यांह् गृप्त्यै। अनिधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये॥२७॥ असीत्यांह धृत्ये यजंमाने वधात्यजीमित्वाय स्थापयित दृहे दृहिन दृष्णदोगीति वधीत्यांह स्याध्यावयित्

पर्श्व च॥------[३]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यैं। यज्ञस्य वे सन्तंतिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तायन्ते। यज्ञस्य विच्छिंतिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरसि यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पशूना सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥ २८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणयिति। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणयिति। आपो वै रक्षोष्ठीः। रक्षंसामपंहत्यै। अपः प्रणयिति। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरित॥२९॥

अपः प्रणयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां पुवाऽऽरभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषांय त्वेत्यांह। वेषांय ह्यंनदादत्ते। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। धूर्सीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्युं च यजमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वित तं धूर्व यं वयं धूर्वाम् इत्याह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वित। यश्चैनं धूर्वित। तावुभौ शुचाऽर्पयति। त्वं देवानांमसि सम्नितम् पप्रितम् जुष्टंतम् वहितमं देवहूतंम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धान्मित्याहानाँत्यैं। द १ हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यैं। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमां संविंक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वै किं च् वातो नाभि वातिं। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवारुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंसुव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनौर्वाहभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवेनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यजुषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। स एवमेवानुंपूर्व रह्वी रिष् निर्वपति॥३३॥

ड्दं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह् गृत्यै। तमंसीव वा पृषोंऽन्तश्चंरित। यः पंरीणहिं। स्वंर्मि वि ख्येषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रं ज्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषि गृहीत उदंवेपेताम्। द॰हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यै। उर्वन्तरिक्षमन्विहीत्यांह् गत्यै। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवैनंदुपस्थे सादयित। अग्ने ह्व्य॰ रंक्षस्वेत्यांह गुप्त्यै॥३४॥

युज्ञो वा आपो धार्म प्रणीय प्रचंरत्यतीयादेतद्वाहुभ्यामित्यांह हुवीर्षय निर्वपति गत्यै चृत्वारि च॥[४]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यृज्ञियु सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भेरूप उत्पुनाति। या एव मेध्यां यृज्ञियाः सदेवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पुनात्वित्यांह। सिव्तृप्रमूत एवेना उत्पुनाति। अच्छिंद्रेण पवित्रेणेत्याह। असौ वा आदित्योऽच्छिंद्रं पवित्रम्। तेनैवेना उत्पुनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणेरेव प्राणान्थ्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। स्वितृप्रंसूतं में कर्मास्विति। स्वितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्षमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं युज्ञं नंयताग्रे युज्ञपंतिमित्याह। अग्रं एव युज्ञं नंयन्ति। अग्रे युज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र॰ हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रिरे। संज्ञामेवासामेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवेनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यायं कर्मणे देवयुज्यायां इत्याह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधृत् रक्षोऽवंधृता अरांतय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्याह। इयं वा अदिंतिः॥३९॥

अस्या पृवैनृत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विर्ध्यवहन्तिं। युज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पृत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवेनंत्करोति। प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तुनूरसीत्यांह। अग्नेर्वा पृषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्ति। अथ वाचं विसृजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पृशिमं शिमुष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हविष्कृदेहीत्यांह। य पुव देवाना ई हविष्कृतः। तान् ह्वंयति। त्रिर्ह्हंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनौं श्रृद्धादेवस्य यजंमानस्या-सुर्प्री वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुर्ग् यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाशृंण्वन्। ते पराभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येंऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्वदंता-मुपशृण्वन्ति। ते परां भवन्ति। उ्चैः स्माहंन्त् वा आंह् विजित्यै॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृंद्धमिस् प्रतिं त्वा वर्षवृंद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृंद्धा इषीकाः समृंद्धौ। यज्ञ र रक्षाः स्याप्ट्यं प्राविंशन्। तान्यस्रा पृशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूतः रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषेंरेव रक्षा १सि निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्तित्यांह। प्वित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्केन्दन्ति। ये शूर्पांत्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फलीकर्त्वा आहा। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥ इभ्यामुत्यंनात एक्सयां नयुन्त्यत्रं युज्जपति युजोऽदिविरस्कंन्दाय गृह्णमीत्यांह वृदेत्यांह विजित्या अपंहत्या करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनं-ग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पशवो मेधमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहंकाः। यज्ञो देवेभ्यो

अदित्यास्त्वगसीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनत्त्वचं

अवंधूत १ रक्षोऽवंधूता अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै।

निलायत॥४६।

कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमहूर्वेता शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भिनरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्व वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यैं। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रति त्वा दिवः स्कम्भिनवेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योविर्यंत्यै॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रम्व इत्यांह प्रमूंत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यज्ञंषो वीर्येण॥४८॥ यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न

पिश्षाणूनिं कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

क्षित्रं विश्वे विश्वे विश्वे विश्वे क्ष्ये क्ष्

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिँ होके

ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दुर्हेत्याह। पृथिवीमेवैतेनं दरहित।

हि तदस्ति। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोति। प्राणायं त्वाऽपानाय् त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दिन्ति। यानि दृषदंः। देवो वः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती

धूर्तमंस्यन्तिरिक्षं हुर्हेत्यांह। अन्तिरिक्षमेवैतेनं हरहित। धुरुणंमिस् दिवं हुर्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं हरहित॥५१॥ धर्मास्मि दिशों हुर्हेत्यांह। दिशं एवैतेनं हरहित। इमानेवैतैलोकान्हर्रहित। हर्रहेन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पुशुभिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्रें कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। एक्मग्रें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्रें कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणि। अथं चृत्वारि। अथाष्टौ। तस्मांदृष्टाकंपालं पुरुंषस्य शिरंः। यदेवं कृपालान्युपदधांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिक् सङ्स्कंरोति। आत्मानंमेव तथ्सङ्स्कंरोति। तक्ष सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुर्ष्मिं ह्योकेऽनु परैति। यद्ष्टावृंपदधांति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्द्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्योकानंनुपूर्वं दिशो विधृत्ये द १ हति। अथाऽऽयुः प्राणान्य्रजां पृशून् यजमाने दधाति। सजातानंस्मा अभितो बहुलान्करोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवेनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कृपालान्युपचिन्वन्ति वेधस इति चतुंष्यदय्चा वि मुंश्चति। चतुंष्पादः पृश्चवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥५५॥

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामि-

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

त्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यै। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत् समोषंधयो रसेनेत्याह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मादेवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आप ओषंधीः पृश्चन्। तानेवास्मां एकधा स्॰्सृज्यं। मधुंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समुद्धिः पृंच्यध्वमितिं पर्याष्ट्रांवयति। यथा सुवृष्ट इमामन्विसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्मृहयंन्ति। ताह्येव तत्। जनयत्ये त्वा संयौमीत्याह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्याह व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरोऽसीत्याह। यज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुरोडाशंः। तस्मादेवमाह॥५८॥

घुर्मोऽसि विश्वायुरित्याह। विश्वमेवायुर्यजमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजमानमेव प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैनु सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्वचा मार्सं छुन्नम्। घुर्मो वा पृषोऽशौन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईंश्वरो

यर्जमान १ शुचा प्रदहंः। पर्यंग्नि करोति। पृशुमेवेनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यंग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि यृज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्ये। अन्तरित रक्षोऽन्तरिता अरांतय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षाईस्य-जिघारसन्। दिवि नाको नामाग्नी रंक्षोहा। स एवास्माद्रक्षाड्र-स्यपांहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्याह। सिवतृप्रंसूत एवैनई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्निस्तं तन्तुं माऽतिधागित्याहाऽनंतिदाहाय। अग्ने ह्व्यर रंक्षस्वेत्यांह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतित् वाचं विसृंजते। युज्ञमेव ह्वी इष्यंभि-व्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्त्यं करोति। मस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभिं वासयैत्। आविर्मस्तिष्कः स्यात्। अभिवांसयति। तस्माद्गुहां मस्तिष्कः। भस्मनाऽभिवांसयति। तस्मान्मा स्सेनास्थिं छुन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलिति-भावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडार्शः। स नायुजुष्कंमभिवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः पुशर्वः। प्राणैरेव पुशून्थ्सम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजमानो वै पुरोडाशः। प्रजा पुशवः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां पृशुभिः समर्थयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह इति। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जंनियध्यामि। यस्मिन्मुक्ष्यध्व इतिं। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्त्र्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इतिं। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमभ्यंपातयत्॥६५॥

ततौँ द्वितौऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततिस्र्तौ-ऽजायत। यद्न्योऽजायन्त। तदाप्यानामाप्यत्वम्। यदात्मभ्यो-ऽजायन्त। तदात्म्यानामात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वमृजत। आप्या अमृजत सूर्यौभ्युदिते। सूर्यौभ्युदितः सूर्याभिनिमुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्र-दिधिषौ। अग्रदिधिषुः पंरिवित्ते। परिवित्तो वीरहणि। वीरहा ब्रह्महणि। तद्भह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तुर्वेदि निनंयत्यवंरुद्धै। उल्मुकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥ अया जिन्वत्यत् विमुल्येवमाहाशांन्त आहु गुर्वं खुन्नं ब्रह्मांब्रवीह्निर्वाम्-यंपातयुष्सूर्याभिनिमुक्ते देवाः॥८]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति स्फामादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः श्वततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा

इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोंऽबिभेत्। युज्ञेनं मा देवा अभिभेविष्युन्तीतिं। स पृथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभेवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्ं। तस्य लोहिंतं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभेवत्। पृथिंवि देवयज्जनीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवेनां देवयजंनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्शसे वे ब्रजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्मैं ब्रजं गोस्थानं करोति। वर्षतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्थे। बधान देव सवितः परमस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुमौ बंध्नाति पर्मस्यां परावतिं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नुत्त्वै। अरुक्वें नामांसुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपंम्नुप्तोऽशयत्। तं देवा अपहतोऽरुकः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपाँघ्नन्। भ्रातृंव्यो वा अरुकः। अपहतोऽरुकः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपंहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीतिं। तमुररुंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यवाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अररुंः। अररुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपंहन्ति। द्वितीयर्थं हरति॥७२॥

अन्तरिक्षादेवेनमपंहन्ति। तृतीय ई हरति। दिव पुवेनमपंहन्ति। तृष्णीं चंतुर्थ ईरति। अपंरिमितादेवेनमपंहन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंद्देवानांम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीति॥७३॥

क्यंत्रो दास्यथेति। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेति। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणृतः पर्यंगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसुंभिर्दक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्ञः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंत्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। पृथिव्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदींचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देवयजंनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्य सावुन्नंयित। आहुवनीयंस्य परिंगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिंगृहीत्यै। अथों मिथुनृत्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥ देवयर्जनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

अंतितिष्ठद्रक्षा्र्स्यनूत्पंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फानं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा्र्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनित॥७७॥ प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्मांचतुरङ्गुलं खेयां। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुलं ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठाये खनित। यज्ञमानमेव प्रतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। यज्ञमानमेव प्रतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति।

मूर्लं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूर्लं छिनत्ति। मूलं वा

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं पृशुभिः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। एतावंती वै पृथिवी। यावंती वेदिः। तस्यां पृतावंत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृत्सदंनमस्यृत्श्रीर्सीत्यांह। यथा-यजुरेवैतत्॥७९॥

क्रूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोति। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्याह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरिपश्वित्तत्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामैरंयं चन्द्रमंसि स्वधामिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयर्जनीं कृत्वा॥८०॥

यददश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तदस्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इ्ध्माब्र्हिरुपंसादय। सुवं च सुचंश्च सम्मृंड्वि। पत्नी र् सन्नह्य। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोघ्रीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। उवाच हासिंतो दैवलः। एतावंतीर्वा अमुष्मिं ह्लोक आपं आसन्। \_\_\_\_\_यावंतीः प्रोक्षंणीरितिं। तस्माद्बह्वीरासाद्याः। स्फ्यमुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायित्। शुचैवैनमर्पयति॥८२॥ वे बायुरांह परावतीत्याहाहं द्वितीयरं हर्रतीतिं परिगृह्वन्तिं देवयर्जनीं करोति भवन्ति खनत्यकरेतत्कृत्वा

वज्रो वै स्फाः। यदन्वश्चं धारयेंत्। वज्जेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यर्श्वं धारयति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेंणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाधराचंश्च। स्फोन वा एष वज्रेंणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनत्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयित युक्त्यैं।

यज्ञस्यं मिथुनृत्वायं। अथों पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तंरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुंपसादयैत्। अन्यत्रांऽऽहृतिपृथादि्ध्मं प्रति-पादयेत्। प्रजा वै बर्हिः। अपराध्रुयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपृथेन्धमं प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव बर्हिषां प्रजानां प्रजनंनमुपैति। दक्षिणिम्धमम्। उत्तरं बर्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा बर्हिः। प्रजा ह्यात्मन् उत्तरेतरा तीर्थे। ततो मेधमपुनीयं। यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयित। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिध्मः पश्चं च॥————[१०]
तृतीर्यस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वै पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहन्थ्सोऽपोऽवंधृतं धृष्टिर्देवस्येत्यांह सं

तृतायस्या प्रस्थान्वपृषु या य पूपशुः फनण पानन्त्रा पृत्रमहुन्यताऽपाऽपर्त् वृष्टपुपस्यत्याह् स वंपामि देवस्य स्फामा देदे वज्रो वै स्फाो दशं॥१०॥ ततीर्यस्या यज्ञस्यानितरेकाय पवित्रवत्यध्वर्यं चांधिपवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामन्तरिक्तये हो वाव पर्नपौ

तृतीयंस्यां युज्ञस्यानितरेकाय पुवित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामुन्तर्हित्ये द्वौ वाव पुरुषो यदुदशुन्द्रमंसि मेध्यं पश्चाशीतिः॥८५॥

तृतीर्यस्यां यजमानः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्व्स्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्माष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्श्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोपभृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः सुचंः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ ह्योकानं नुपूर्वं केल्पयति। ते तर्तः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदे। यदि कामयेत् वर्षुंकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रुतः सम्मृज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिष्टाथ्सम्मृंज्यात्। मूलतोऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचीमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमव् ह्यन्नेमुद्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तात्प्रतीचीम्। दण्डम्तम्तः। मूलेन् मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मादर्त्नौ प्राञ्चुपरिष्टाङ्कोमानि। प्रत्यञ्चधस्तात्॥४॥ सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्न ए सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भृत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन् ए शुभयित। तस्मांथ्स्रुवमेवाग्रे सम्मांष्टि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भृत्वा। आत्मानमन्नं माविश्वति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवित। य पृवं वेदं॥५॥ जुहुर्म्ज्याद्भव्याति प्रत्यक्ष्प्यस्तांमाष्ट्रि पर्व च॥————[१]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामिस स्वाहेतिं सुख्सम्मार्जनान्युग्रौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रई सुख्सम्मार्जनानि॥६॥

श्रुख्समाजनाानादा

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तिन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभियंजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरब्धस्य युज्ञियंस्य कर्मणः सर्विदोहः॥७॥

यद्येनानि पृशवोऽिम् तिष्ठेयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मार्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यृज्ञियंस्य कर्मणो-ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता १ हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यदुद्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्कुरे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनानि तद्गंमयति॥८॥

प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य

वा पृतद्रूपम्। यथ्सुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बृशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्यंषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वै जरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नृवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवो रमन्ते॥९॥

नवदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो ह वै नंवदावः

पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरंन्ति। तस्मांदेतान्युग्नोवेव प्रहंरेत्। युत्रस्मांन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यै। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिच्रो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि स्सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्ममार्जनान्युग्नौ प्रहंरित। एषा वा एतेषां योनिः। एषा प्रंतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्। स्वां

वेदस्याग्रहं सुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पृथवां रमन्ते हिरसीः पर चं॥——[२] अर्यज्ञो वा एषः। योऽपृक्षीकः। न प्रजाः प्रजायिरन्। प्रत्यन्वांस्ते। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञातिर रुन्थ्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

प्रतिष्ठां गमयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१०॥

स्मदंन्दधीत। देशाँदक्षिण्त उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनो गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमित्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयति। अग्नेरनुंब्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किमत्यांह। एतद्वै पित्रंये व्रतोपनयंनम्॥१२॥ तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न।

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पत्निया

योक्रमेव युंते। यम्न्वास्तै। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्तै। स क्षेमः॥१३॥ योगक्षेमस्य कृष्ट्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता

इतिं। आशिषः समृंद्धै। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं एवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्थो वा एष आत्मनंः। यत्पत्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वय सप्पत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तिन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजात्ये। महीनां पयोऽस्योषधीना रस् रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मिहिमानं व्याचेष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आमेवैतामा शास्ते॥१५॥

कुरोति व्रतोपन्यमं क्षेमो यजमान शास्ते॥

[31

घृतं च वै मधुं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्वांसीत्। ततः

प्रजा अंसृजत। तस्मान्मधुंषि प्रजनंनमिवास्ति। तस्मान्मधुंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। युज्ञो वा आज्यम्। युज्ञेनैव युज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्यवेंक्षते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नी यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वार्म्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्केरोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आह्वनीयंम्भ्युद्दंवति। यज्ञस्य सन्तत्यै। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज् आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि रसायै। स्फ्यस्य वर्त्मंन्थ्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुर्वेवतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञंषयजुषे भ्वेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्राभ्यामेवोत्पुंनाति। यजमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्राणापानौ स्अरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजो-ऽसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। त्रिर्यजुंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामास्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वाये। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामुपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण् हर्रण्यं पेश्नुलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पृषा हि विश्वेषां देवानां तुनः। यदाज्यम्। तत्रोभयोंमीमा्र्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यजुषाऽप उत्पुनीयात्। छन्देसाऽप उत्पुनात्यजांमित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। स्वितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। स्वितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नंयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यजंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्य्विंस्त्वाऽर्विषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांस्या अनंन्तरायाय॥२१॥

ईक्षत् आहु शास्त्रे लोका देवतां भवति पद चं॥———[४] देवासुराः संयंत्ता आसन्। स पुतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमं-पश्यत्। तेनावैक्षत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः। य पुवं

पश्यत्। तेनावैक्षत्। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यदाज्येनान्यानि ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाऽऽज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषाँऽन्धो भविंतोः। यश्चक्षुषा-ऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावैक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यंं गृह्णाति॥२३॥ छन्दा रेसि वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चृतुर्जुह्वां गृंह्वाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावुंप्भृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्वं दधाति। चृतुर्भुवायांम्॥२४॥

चतुंष्पादः पृशवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयों गृह्णीयात्। अष्टावृंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे सुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृति। तस्मांदृष्टाशंफा। चृतुर्ध्वायाँम्। तस्माचतुः स्तना। गामेव तथ्स इस्करोति। साऽस्मै स इस्कृतेषृमूर्जं दुहे। यञ्जूहां गृह्णाति। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृति। प्रयाजान्याजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्णते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥ अभि्षार्यित गृह्णाते प्रवाजान्याजेभ्यस्तदे वं॥—————[५]

आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासांमेतन्महि-मानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्याह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपो वन्ने। आपो हेन्द्रं वन्निरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥ तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविंशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठो ऽग्नये त्वा स्वाहे-त्याह। अग्नयं पृवैनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदि-रसि ब्रहिषे त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा वै ब्रहिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयित। ब्र्हिरंसि सुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। यजंमानः सुचः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्ये त्वेतिं ब्र्हिरासाद्य प्रोक्षंति। प्रभ्य एवैनंश्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह सुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षति। प्रजा वै ब्र्हिः। यथा सूत्यें काल आपः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्ध इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनंयित सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदं। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वध्यंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धै। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षति। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृंथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मात्पृथिव्या ऊर्जा भुंञ्जते। ग्रन्थिं वि स्रश्रंसयति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राञ्चमुद्गूढं प्रत्यञ्चमा यंच्छति। तस्मात्प्राचीनुश्रं रेतीं धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

युज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पुतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। तस्मिन्यवित्रे अपि सृजति। यजमानो वै प्रंस्तरः। प्राणापानौ पवित्रें। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णाम्मदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथा-यजुरेवैतत्। स्वासस्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंथ्स्वासस्थं करोति॥३३॥

बुर्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै बुर्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्वः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्वं करोति। धारयंन्प्रस्तरं पंरिधीन्परिं दधाति। यजमानो वे प्रस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं पंरिधीन्परिं दधाति। गृन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावर्रुणौ त्वोत्तर्तः परिंधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावर्रुणौ। प्राणापानावेवास्मिन्द-धाति। सूर्यंस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पाति॥३५॥

वीतिहों त्रं त्वा कव इत्याह। अग्निमेव होत्रेण समर्धयति। द्युमन्तु ५ समिधीमहीत्याह समिद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्याह वृद्धौं। विशो यन्ने स्थ इत्याह। विशां यत्यैं। उदीचीनांग्रे नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूंना रु रुद्राणांमादित्याना र सदंसि सीदेत्याह। देवतानामेव सदेने प्रस्तुर सादयित। जुहूरीस घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुह्ः। अन्तरिक्षमुपभृत्। पृथिवी भ्रुवा। तासांमेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्याह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयति। ता विंष्णो पाहीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञस्य धृत्यैं। पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्याह। यज्ञाय यजमानायाऽऽत्मनै। तेभ्यं एवाऽऽशिषमाशास्तेऽनांत्र्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीर्णुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयति पट्

अग्निना वै होत्रां। देवा असुरानभ्यंभवन्। अग्नयं समिध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। एकंवि शाति-मिध्मदारूणिं भवन्ति। एकवि शो वै पुर्रुषः। पुर्रुषस्याऽऽह्यैं। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश वा अर्धमासस्य रात्रंयः।

अर्धमासुशः संवथ्सर आप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परि दधाति॥३८॥ ऊर्ध्वे सुमिधावा दंधाति। अनुयाजेभ्यः सुमिधमति शिनष्टि।

जुष्य सामधावा देधाता अनुयाजम्यः सामधमात शिनाष्टा षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयंः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमांघारमा घारयित। युज्ञो वै प्रजा-पंतिः। युज्ञमेव प्रजापंतिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापंतिः सर्वा देवताः। सर्वा पुव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्तिः सं मृड्ढीत्यांह। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। पुरिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्ं। त्रिस्तिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये। आसीनो-ऽन्यमांघारमा घांरयति॥४१॥

तिष्ठं नृत्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदेष्वर्युर्यज्ञं युंनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस् वि प्रथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजमानं प्रजयां पृश्भिः प्रथयति। अग्ने यष्टरिदं नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव

नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वंयति देवयुज्याया इत्यांह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्रयुप्भृत्। ताभ्यांमेवेने प्रसूत् आदेत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रिमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पुश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमति। विजिंहाथां मा मा

सन्तौप्तमित्याहाहि ५ सायै। लोकं में लोककृतौ कृणुतमित्यांह।

आमेवैतामा शाँस्ते। विष्णोः स्थानंम्सीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुः।
पृतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥
इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो
दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौं। आघारमांघार्यमाणमनुं समारभ्ये।
पृतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति।
अथो समृद्धेनैव युज्ञेन यजंमानः सुवर्गं लोकमेति।

अहुंतो युज्ञो युज्ञपंतेरित्याहानांत्र्ये। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह।

इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्स इंस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। अस इंस्पर्शयन्नत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणं दंधाति। पाहि माँऽग्रे दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥ तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृतं दुश्चेरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्चेरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृताद्दुश्चेरितात्पाति। ऋजुक्रमें सत्ये सुचेरिते भजति। तस्मदिवमा शास्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्यं ध्रुवाः समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्रांणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंश्र्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सञ्च्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मा उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्य लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

लाकस्यानुख्यात्य॥४८॥ परिदर्शात प्राणं दंशाति हि युज्ञो घारयति नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह् भा इत्यांह भुजेत्यांह ध्रुवैवास्मिन्दशाति त्रीणि च॥————[७]

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्धृह्मा। यद्धोताँ। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्थ्सङ्कं-र्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमपुगृह्य सश्चंरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक १ शि १ षिति। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कंर्षित। न प्रमायंको भवति। पुरस्तांत् प्रत्यङ्कासीनः। इडाया इडामा दंधाति। हस्त्या १ होत्रें। प्रशवो वा इडां। प्रशवः पुरुषः। प्रशुष्वेव प्रशून्प्रतिं-ष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजातिं यर्जमानोऽनु प्र जायते। द्विरङ्गलावनिक्त पर्वणोः।

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घारयति। चृतुः सम्पंद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावानिव पशुः। तमुपंद्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्नयेत। सम्मुखानेव पृश्नुपं ह्नयते। पृशवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येंनौ ह्नयंते होताँ। इडांयै देवतांनामुपहुवे। उपहृतः पशुमान्भविति। य एवं वेदं॥५२॥

यां वै हस्त्यामिडांमादधाति। वाचः सा भांगुधेयम्। यामुंपृह्वयंते। प्राणाना स् सा। वाचं चैव प्राणा स्थावं रुन्धे। अथ् वा एतर्ह्यपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहि्षदों मीमा स्सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्वपेति। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यंब्रवीत्॥ ५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुंरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वषंद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। ब्रहिषदं करोति॥५४॥

यजमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बुर्हिः। यजमानमेव प्रजासु

प्रतिष्ठापयति। तस्मांदुस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रंतितिष्ठंन्ति। मार्-सेनान्याः। अथो खल्वाहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यान्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुंरोडाशंं बर्हिषदंं करोतीतिं। चतुर्धा करोति। चत्वारो ह्येते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इद॰ होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदमृग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्यें ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तै। तादगेव तत्। अग्नीधे प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्धिं यजंमान ऋभ्नोति। स्कृद्ंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिंहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता युज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ् कामंमृन्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्धोताँ। मृध्यत एव युज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवैं। प्रतिष्ठा वा पृषा युज्ञस्यं। यदंध्वर्युः। तस्माद्धविर्युज्ञस्यैतामेवाऽऽवृत्मनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीथ्सकृथ्सं-कृथ्सं मृड्डीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्रहें युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर् इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। भुद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः सूक्तवाकार्य सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आमेवैतामा शास्ते। स्वगा दैव्या तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

होर्तृभ्य इत्यांह। यज्ञमेव तथ्स्वगा कंरोति। स्वस्तिर्मानुंषेभ्य इत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्यांह। शुंयुमेव बांर्हस्पृत्यं

अथु सुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहिति। प्रतिष्ठा वा

अंनुष्टुक्। अन्नं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूंहति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जनिष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोद्धं सपन्नान्

यर्जमानः। अस्मिँ लोके प्रति तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रस्तरमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिक्तः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनिक्तः। वियन्तु वय इत्याहः। वयं एवैनं कृत्वाः। सुवृगं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायैं गोपीथायं। आप्यायन्तामाप् ओषंधय् इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रंस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रंस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ध्रुवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। यं पंरिधिं पर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायजुरेवैतत्। अग्नें देव पणिभिर्वीयमाण् इत्यांह। अग्नयं एवेन् जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समित्मित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ठ्ये॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नावयित। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सुङ्स्रावभागाः स्थेत्याह। वसंवो वै रुद्रा आदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भांगुधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदंने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव प्शूनात्मन्यंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेऽदब्धायो-ऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ट्ये पाहि दुर्रद्यन्ये पाहि दुर्श्वरितादित्याह। आमेवैतामा शांस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनि्ड् स्वाहेतींध्मसंवृश्चनान्यन्वाहार्यपर्चनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-माम्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जांयते विश्वदानिरिति पुरस्तांथ्स्तम्बयज्ञुषो वेदेन् वेदि्र सम्मार्ष्ट्यनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रृणि। यद्वेदः। पित्रिया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेदश्होताऽऽहंवनीयाँथ्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्धमासात्। तश्सन्तंत्मुत्तंरेऽर्धमास आर्लभते॥७०॥ तं कालेकांलु आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीतिं। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्यांह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पश्भिर्यजमानः॥७१॥

यो वा अयंथादेवतं युज्ञमुंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यांमि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवैनां मुश्चति। सवितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥ ७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीया-भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्याह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्याह। आत्मनंश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सुन्त्वायं। समायुंषा सं पुजयेत्यांह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पत्नियै पूर्णपात्रे भवति। अस्मिँश्लोके प्रतिं तिष्ठानीतिं। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिथुनम्। आपो रेतः प्रजनंनम्। एतस्माद्वै मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तुनयंन्वर्षति। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रंजनयन्। यद्वै य्ज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नी स्हाप उपंगृह्णीते शान्त्यें। अञ्चलौ पूर्णपात्रमा नंयति। रेतं एवास्यां प्रजां दंधाति। प्रजया हि मंनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभ्थस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥ स्विव्ह्रम्तते यथादेवतं प्रजयेत्वाह सिश्चमृष्ट एकं चा—[१०]

परिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दतें परिवेष्टारम्। तमुत्करे। यं देवा मनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यंमिहा कुंरु। उपवेषोपं विट्कि नः॥७६॥

प्रजां पुष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंप-गान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवस्यन्ति। स्थृविमृत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इति॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। स्पत्नो यः पृंत्न्यति। निर्बाध्येन ह्विषाँ। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जनार् अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावंत्। सूर्यो असंद्विव। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥ इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्धा एष वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। श्रुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोंऽसाववंधिष्मामुमित्यांह् स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्यृष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चे देवासुराः स पुतिमन्द्र आर्पो देवीरिग्नना धिर्ष्णिया अथ् स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकोदश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ पुषा हि विश्वेषां देवानामूर्जा पृथिवीमथो रक्षेसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकोले नवंसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राजन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्कंरम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्पने क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुङ्श्चलूम्। अतिकुष्टाय मागधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाच्रम्। नुर्मायं रेभम्। नरिष्ठाये भीमुलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायैं रथकारम्। धैर्यायु तक्षाणम्॥२॥

श्रमाय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

स्न्थयें जारम्। गृहायोपप्तिम्। निर्ऋंत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। प्वित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृंत्ये पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

नुदीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्ट्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गुन्धुर्वाफ्सुराभ्यो ब्रात्यम्। सुर्पदेव- ज्नेभ्योऽप्रतिपदम्। अवैभ्यः कित्वम्। इर्यताया अर्कितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानैभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्सादेभ्यः कुङाम्। प्रमुदे वामनम्। द्वार्भ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्धम्। अधर्माय बधिरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्चिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्चिनम्। मुर्यादायै प्रश्चिववाकम्॥६॥

ऋत्यै स्तेनह्रंदयम्। वैरंहत्याय् पिशुंनम्। विवित्त्यै क्षत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधाय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाहारम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभि-षेक्तारम्। ब्र्प्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये व्धायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागद्वम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। जुवायांश्वपम्। पुष्ट्ये गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इराये कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तुधम्। अध्यक्षायानुक्षुत्तारम्॥९॥ मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलुविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुंषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यमुसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवृथ्सरायं पर्यारिणींम्। परिवृथ्सरायाविजाताम्। इदावृथ्सरायांपुस्कद्वंरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वंरीम्। वृथ्सराय विजंजराम्। संवृथ्सराय पर्तिक्रीम्। वनांय वनुपम्। अन्यतोरण्याय दावुपम्॥११॥

सरोभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नृङ्खलाभ्यः शोष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमभ्यो मैनालम्। स्वनेभ्यः पर्णकम्। गृहाभ्यः किरांतम्। सार्नुभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवृष्मम्। आकृन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्परायं शङ्खुष्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीमथ्सायै पौल्कुसम्। भूत्यै जागर्णम्। अभूँत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपगुल्भम्। सुर्श्वरायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुश्क्षलूमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रांमृण्यं पाणिसङ्घातं नृत्तायं। मोदांयानुक्रोशंकम्। आनुन्दायं तलुवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदि-नवदर्शम्। द्वाप्रायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यः सैलुगम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्रस्लम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शनिर्तिनम्। दिवे खंलुतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्लं पिङ्गलम्। रात्रिये कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

बाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनंश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्ं। प्रजा-पंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिहस्वमितिदीर्घम्। अति-कृशुमत्यर्भसलम्। अतिशुक्कमितिकृष्णम्। अतिश्वक्षणुमितिलोमशम्। ब्रह्मणे कुमारीम्॥

अतिंकिरिट्मतिंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिर्मतिंमेमिषम्। आ्रायौं जामिम्। प्रतीक्षायौं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय अमाय सन्धर्ये नदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्ये भाया अमेंभ्यो मृन्यवे युग्यें दर्शदश् सरौभ्यो द्वादेश प्रतिश्रुत्काये बीभृथ्साये दर्शदश् हसाय सुप्ताक्षंगुजाय त्रयोदश् भूम्ये दर्श वाचे षडथ नवेकात्रविश्वरतिः॥१९॥ ब्रह्मणे यम्ये नवंदश॥१९॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां त्नुवमनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्येन् वर्ज्जेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं कामामि। यो उस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अग्र आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्सि बुर्हिषिं। तं त्वां सुमिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासित। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमा १सि दर्शतः। सम्ग्निरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। त१ ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा वृयं वृषन्ं। वृषाणः समिधीमहि॥३॥

अग्ने दीद्यंतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेंदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्वः हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्वः हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रुण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वस्नुं सुषणुनानि सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः

सदां नः॥४॥

शुवार्व्यमिश्रमृहसिं सुप्त चं॥——[२] अर्गे प्रतार असि बाहाण भारत। असावसीं। टेकेटो प्रतिदः।

अग्नें मृहा र अंसि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विंद्धः। ऋषिंष्ठतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मसरशितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। रथीरंध्वराणाम्। अतूर्तो होतां। तूर्णिर्हव्यवाट। आस्पात्रं जुहुर्देवानाम्॥५॥

चुम्सो देवपानः। अरा १ ईवाग्ने नेमिर्देवा १ स्त्वं पेरिभूरेसि। आ वंह देवान् यर्जमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोमुमावंह। अग्निमावंह। प्रजापेतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवा १ औंज्यपा १ आवंह। अग्नि १ होत्रायाऽऽवंह। स्वं महिमानमावंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयर्जां च यज जातवेदः॥६॥

देवानामिन्द्रमा वेह् पद चं॥———[३]

अग्निरहोता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो स्रुचमास्यस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडामहै देवा ईडेन्यान्। नुमस्यामं नमस्यान्। यजाम युज्ञियान्॥७॥

अप्रिरहोता नर्व॥——[४]

स्मिधों अग्नृ आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्नृ आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्नृ आज्यंस्य वियन्तु। बुर्हिरंग्नृ आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहेँन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा ४ औज्यपान्। स्वाहाऽग्नि४ होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

अग्निर्वृत्राणिं जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययां। सिमंद्धः शुक्त आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व सोमासि सत्पंतिः। त्व राजोत वृंत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रवेन जन्मंना। शुम्भानस्तनुव् स्वाम्। क्विविंप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गींभिंष्ट्वां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु॥९॥

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्रसि जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि पिर ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् स मातरम्। स सूनुर्भुवथ्स भुवत्पुनंर्मघः। स द्यामौर्णोद्नतिरिक्ष् स सुवंः। स विश्वा भुवों अभव्थ्स आभंवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूंती वनतिङ्गरः। सन्देवत्रा बंभूवथुः। युवमेतानिं दिवि रोचनानिं। अग्निश्चं सोम सर्ऋत् अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् अतं गृभीतान्। इन्द्रांग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वांश्वेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहुरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सानसि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतीनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पर्जन्यो वृष्टिमा इंव। स्तोमैव्ध्सस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मिद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृतः कुर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा उंशतो यविष्ठ। विद्वा ऋतू रुर्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्व र होतृंणामस्यायंजिष्ठः। अग्नि स्वष्टकृतम्। अयांडग्निरग्नेः प्रिया धामानि। अयाद्थ्सोमंस्य प्रिया धामानि॥१४॥

अयांडुग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांडुग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांडेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हितः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हितः। यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वह यविष्ठ या ते अद्या१५॥
अस्वप्रतः प्रवि चंरणण्याः सोमंस्य प्रिया धामानिषः पदं॥———[७]

उपंहूत रथन्तर सह पृंथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृंथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपो अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृंतुमुपंहूतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावरी। देवी देवपुत्रे। उपंहूतोऽयं यजमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूतः। दिव्ये धामृत्रुपंहूतः। इदं में देवा हिवर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूतः॥१८॥

महर्रुपंभा इयत्पुपंहूतः हिव्षकरेण उपंहृतशृत्वरि च॥———[८]

देवं बर्हिः। वसुवनें वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशश्संः। वसुवनें वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविंणा मन्द्रः कविः। सत्यमन्मायजी होतां। होतुर्होतुरायंजीयान्।

वस्वन वस्धयस्य वतु। द्वा आग्नः स्वष्टकृत्। सुद्रावणा मन्द्रः क्विः। स्त्यमंन्मायजी होताँ। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्द्वानयाँट्। या अपिंप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। ता स्संसनुषी होताऽभूँः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व॰ सूक्तवागंसि। उपिश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शङ्गये जीरदांन्। अत्रंस्रू अप्रवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शुम्भुवौं मयोभुवौँ। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चर्णा चं स्वधिचर्णा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद॰ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत॥ २१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायौऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायौऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽक्रत। अग्निर्होत्रेणेद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधृद्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सजात्वनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयो हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिविषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनते। व्यम्ग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावापृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिर्वामस्येदं चं। नमो देवेभ्यः॥२४॥ अभ्यं कृतांवकृत्।श्रिर्दर हिवरंज्ञपत महेन्द्र इदर हिवरंज्ञपत सजातवनस्यामा शाँस्ते वीतं च शीणं च॥

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषुजम्। शं

नो अस्तु द्विपदैं। शं चतुंष्पदे॥२५॥

आप्यायस्व सन्तै। इह त्वष्टारमग्रियं तन्नेस्तुरीपम्। देवानां

पत्नीरुशतीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामपिं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्रीः। इन्द्राण्यंग्राय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी र्श्वणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद जिनमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यजिष्ठः स प्र यंजतामृतावाः। वयमुं त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अर्कर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूरि णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नुस्तेर्जसा सर्शिंशाधि॥२७॥

उपंहत रथन्तर सह पृंथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृंथिव्या ह्वंयताम्। उपंहृतं वामदेव्यः सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपहतं बृहथ्सह दिवा। उप मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रौं ह्वयन्ताम्। उपहूता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥ २८॥

उपंहतो भक्षः सर्खां। उपं मा भक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपों अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतमुपंहतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं यजंमाना। इन्द्राणीवां-ऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हविष्करंण उपंहूता। दिव्ये धामृन्नुपंहूता। इदं में देवा ह्विज्ञुंषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहृतस्योपंहूता॥३०॥

सहर्षभा ह्रयतामुपंहतर सुपुत्रा पर्दु॥—————————[१३]

मुत्यं प्रबोऽग्नें महानुग्निरहोतां सुमिथोऽग्निर्वृज्ञाण्यग्निर्मूर्थोपहूतं देवं ब्रुहिपिदं द्यांवापृथिवी तच्छं योरा प्यायस्वोपेहतन्त्रयोदश॥१३॥

सत्यं वृयङ् स्यांम वृष्टिद्यांवा त्रि<u>र</u>्शत्॥३०॥ ———-

सत्यमुपंहृता॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मधुंना दैव्यंन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्णंन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तौत्। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सिनंता यदिक्षिभिः। वाघद्भिर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्य हेसो नि केतुनां। विश्व समृत्रिणं दह। कुधी नं ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्नाँम्। सम्रयं आ विद्ये वर्धमानः। पुनिन्त् धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्ँ। युवां सुवासाः परिवीत् आगाँत्। स उ श्रेयाँन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय् उन्नयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमंत्र्यः। घृतिनिर्णिख्स्वांहुतः। अग्निर्य्ज्ञस्यं हव्यवाद्। तर स्वाधो यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंक्रुर्ग्निमृतयेँ। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंर्धन्ति मृतिभिर्विसिष्ठाः। त्वे वस् सुषणनानि

सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥
मुबीरं दुवः स्वांहुतोऽष्टो चं॥

होतां यक्षद्ग्नि स्मिधां सुष्मिधा सिमंद्धं नाभां पृथिव्याः

संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मतनूनपांतमिदंतेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यो देवयानांन्पथो अनक्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षम्नराश्यसं नृश्यस्रं नृश्ः प्रंणेत्रम्। गोभिवंपावान्थ्रस्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिम्ड ईडितो देवो देवा अवंक्षदूतो हंव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्रहिः सुष्टरीमोणंम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथता स्वास्थं देवेभ्यः। एमेनद्द्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्दुरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहेतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृश्ः पितंभ्यो योनिं कृण्वाने। स्श्रूस्मयंमाने इन्द्रेण देवैरेदं ब्र्हिः सीदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा मुन्द्रा पोतांरा क्वी प्रचेतसा। स्विष्टमुद्यान्यः कंरिदुषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सर्तवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसामपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांरुमचिंष्टुमपांक रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपमकांमकर्शनः सुपोषः पोषैः स्याथ्सुवीरों वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार ५ शुशमुन्नरं। स्वदाथ्स्विधितर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्गेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहां स्तोकानाः स्वाहा स्वाहांकृतीनाः स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा ४ औज्युपान्थ्स्वाहाऽग्नि ४ होत्राञ्जुंषाणा अग्नु आज्यंस्य वियन्तु होतुर्यजं॥५॥

भ्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरं वीरेवेंत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनॄनपातृत्रगुषाश्संमृग्निमिड ईंड्रितो बुर्हिर्दुरं उषासानका देव्यां तिस्रस्त्वष्टार्यं वनुस्पतिमृग्निम्। पश्च वेत्वेको वियन्तु द्विर्वीतामेको वियन्तु द्विर्वेत्वेको वियन्तु होत्यर्यजं॥)॥————[२]

सिमिद्धो अद्य मर्नुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः कविरंसि प्रचेताः। तर्नूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां सम्अन्थ्स्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमुन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशश्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ञतस्यं युज्ञैः॥६॥

ते सुकर्तवः शुचेयो धियन्थाः। स्वदेन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वान् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होतां। स एंनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अह्रांम्। व्युं प्रथते वितुरं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींद्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यों भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ञते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्के। अधि श्रियर् शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होतांरा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यजंध्ये॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु का्रू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्ताः। आ नों युज्ञं भारती तूयंमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बुर्हिरेदङ् स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जनित्री। रूपैरपि श्रद्भवंनानि विश्वाः। तम्द्य होतरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमह यक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्त्मन्यां सम्अन्। देवानां पाथं ऋतुथा ह्वी १ षि। वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुना घृतेनं। सद्यो जातो व्यंमिमीत युज्ञम्। अग्निर्देवानां मभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्युतस्यं वाचि। स्वाहांकृत १ ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥ युज्ञेः स्योनं यज्ञीये विद्वानृष्टो चं॥——[३]

अग्निरहोतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं

युज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्युग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजपितः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दध्द्रत्नांनि दाश्षे॥११॥

अर्प्रिरहोतां नो नवं॥——[४] अर्जैदग्निः। असंनद्वाजन्नि। देवो देवेभ्यों हव्यावाँट्।

प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कल्पंमानः। यज्ञस्यार्युः प्रतिरन्। उप प्राष्ट्रं होतः। ह्व्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरतः। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीना अस्य पदो निधंतात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छांतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥

श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवाश्सां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रोकपंर्णाष्ठीवन्तां। षड्विश्रेशतिरस्य वङ्कंयः। ता अनुष्ठ्योच्यांवयतात्। गात्रं गात्रम्स्यानूनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्ना रक्षः सश्सृजतात्। वृनिष्ठुमंस्य मा राविष्ट॥१५॥ उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रविंतारवंच्छमितारः। अधिंगो शमीध्वम्। सुशमिं शमीध्वम्। शुमीध्वमिधिगो। अधिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना श्रीमृतारौँ। ताविमं पुश्र् श्रीपयतां प्रविद्वा स्तौं। यथांयथाऽस्य श्रपण्नतथांतथा॥१६॥ धताद्वाह मा राविष्ट तथांतथा॥————[ह]

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवफ्संरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसनि। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्य। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्यई स्तोका घृंतश्चतंः। अग्ने विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिम्ध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भव। तुभ्यई श्लोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कविश्वस्तो बृंह्ता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृंतम्। प्र ते वयं देदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंह॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिभः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युवर राधोभिरकंविभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्त्मेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वपाया मेदंसः। जुषेतार्र ह्विः। होत्यंजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रांग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्मम्। स वां धियं वाज्यन्तींमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हितः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्याय। हिविष्मंन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्रहिरंग्ने। अहाँन्यस्म सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षद्ग्निम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

गीर्मिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा सुबज्ञा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म र्श्मीशरिति नाधंमानाः। पितृणाश शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्रीं धिषणाया उपस्थै। अग्निश् सुंदीतिश सुदृशं गृणन्तः। नृमस्यामस्त्वेङ्यं जातवेदः। त्वां दूतमंरितश हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वत्रमृतंस्य नाभिम्॥२१॥ जातवेदः। हे व्यवाहम्। देवा अंकृण्वत्रमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

त्वः ह्यंग्ने प्रथमो मनोताँ। अस्या धियो अभवो दस्महोताँ। त्वः सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नरंः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्ते बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिं जांगृवाःसो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तमृग्निं दंर्शतं बृहन्तम्ं। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवाःसम्।

पदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रवस्यवः श्रवं आपन्नमृंक्तम्। नामांनि चिद्दिधिरे यिज्ञयांनि। भृद्रायां ते रणयन्त् सन्दृष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तंरणे चेत्योऽभूः। पिता माता सदिमन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सपूर्येण्यः स प्रियो विश्वंग्निः। होतां मुन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां व्यं दम् आ दीदिवा सम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां व्य स्पृधियो नव्यं मग्ने। सुम्रायवं ईमहे देवयन्तंः। त्वं विशों अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वंतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतींषणि मिषयंन्तं पावृकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्वतः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतंः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने सुमिधोत ह्व्यैः। वेदींसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्रायाः सुमृतौ यंतम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ् रोदंसी विभासा। श्रवीभिश्व श्रव्स्यंस्तरुत्रः। बृहद्भिविजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्तरं वि भाहि। नृवद्वंसी सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषीं बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भुद्रा सौश्रवसानिं सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार् सन्तिं।

अग्ने वसुं विधते राजंनित्वे॥२६॥ जागृवारसो अनुगम्नमानुषाणाश्चर्षणीना यंतेमाश्यान्द्वे चं॥——

आभंरतर शिक्षतं वज्रबाह्। अस्मार इंन्द्राग्नी अवतर शचींभिः। इमे नु ते रश्मयः सूर्यस्य। येभिः सपित्वं पितरीं

न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य हविष आत्तांमद्य। मध्यतो मेद उद्भेतम्। पुरा द्वेषोैभ्यः। पुरा पौर्रुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः श्तरुंद्रि-याणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उंथ्साद्तः। अङ्गांदङ्गादवंत्तानाम्। करंत पुवेन्द्राग्नी। जुषेता १ हिवः। होतर्यर्ज। देवेभ्यों वनस्पते हवी १षिं। हिरंण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां नियूयं। ऋतस्यं वक्षि पथिभी रजिंष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पतिम्भिहि। पिष्टतमया रभिष्ठया रशुनयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषंः प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा रेसि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यत्राग्नेर्होतुंः प्रिया धार्मानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोपस्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया श्समिव कृत्वी॥ २९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता १ हिवः। होतुर्यर्ज। पिप्रीहि  ऋत्विज्स्तेभिरग्ने। त्व १ होतॄंणाम्स्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्नि १ स्वंष्ट्रकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गन्स्पतेंः प्रिया पाथा १ सि। अयाङ्ग्वानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यंद्र्येर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। होतर्यजं॥३०॥

न्नमर्थं कृत्वे पाथारंसि सुप्त चं॥———[११]
उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः।
अर्वन्तो न काष्ट्रान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहंवतो नर्स्ते। वनस्पते

रश्नगांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी॰िषं। प्र चंदातारंममृतेषु वोचः। अग्निः स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हिवषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्वनस्पतैः प्रिया पाथा रसि। अयाङ्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामानि। यक्षंद्ग्रेरहोतुंः प्रिया धामानि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता र ह्विः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भूः। ह्व्या वंह यविष्ठ या तें अद्या ३२॥

धामानि भूरेकं च। [१२] देवं बुर्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरेर्वस्तौर्वृज्येताक्तोः

प्रभियेतात्यन्यात्राया बुर्हिष्मंतो मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमेनास्तरुंण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन् युज्ञे प्रयुत्यह्वेतामपि नूनं दैवीर्विशः प्रायांसिष्टा ५ सुप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्ट्री वसुंधिती ययोंर्न्याऽघाद्वेषा ईसि युयवदान्यावंक्षद्वसु वार्याणि यजमानाय वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजे। देवी ऊर्जाहंती इष्मूर्जम्नयावंक्षथ्सिथि सपीतिम्न्या नवेन पूर्वं दयमानाः स्यामं पुराणेन नवं तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभुरद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरंस्वती भारती द्यां भारंत्यादित्यैरंस्पृक्षथ्यरंस्वतीमः रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवो नराशरसंस्त्रिशीर्षा षंडुक्षः शुतिमिदेनरशितिपृष्ठा आदंधति सहस्रमीं प्रवहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृह्स्पतिः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिर्वर्षप्रांवा घृतनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः

पृथिवीमुपंरेणाद्दश्हाद्वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यर्जा। देवं बर्िह्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्युंतीनामप्रच्युतन्निकामधरेणं पुरुस्पार्हं यशंस्वदेना बर्हिषाऽन्या बर्ही इष्यभि ष्यांम वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृथ्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमंन्माऽऽयजी होता होतुंरहोतुरायंजीयानम्ने यान्देवानयाङ्या अपिप्रेये ते होत्रे अमंथ्सत् ता संस्नुषी होता ऽमूंवंसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यर्ज॥३३॥

वस्थियंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वस्वने वसुधेयंस्य वीताम्।

देवी जोष्ट्रीं। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवने वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वृसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वृसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशःसंः। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पितिः। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवं बृर्हिवीरितीनाम्। वृसुवने वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्ट्कृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कविः। स्त्यमन्मायजी

होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांद। या अपिप्रेः। ये तें होत्रे अमंथ्सत। तार संसनुषीर होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं युज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टुकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥

**-**[88]

अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यर्जमानः पर्चन्पक्तीः पर्चन्पुरोडाशंं बध्निन्द्राग्निभ्यां छागर् सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेंदस्तः प्रति-पचताग्रंभीष्टामवीवधेतां पुरोडाशेन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणां नपादवृणीतायं यर्जमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च् शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होतरसिं भद्रवाच्यांय प्रेषिंतो मानुंषः

सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥३७॥

अञ्जन्ति होतां यक्ष्यभिद्धो अद्याग्निरजैद्दैच्यां जुपस्वा वृंत्रहणा गीभिंस्त्वः ह्याभंरतुमुपीह यद्देवं बर्हिः सुंदेवं देवं बर्हिरग्निमद्य पश्चंदश॥१५॥

अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्भिरुपों ह यद्विदर्थं वाजिनंः सप्तित्रर्श्शत्॥३७॥

अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

अग्निमद्यैकम्॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषौंऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यौंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदनिष्ट्वा प्रयायात्। अकामप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामाय येमिर् इति। कामानेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयाँन्ति। तेजस्वी वीर्यावान्भवति। सन्तितिवां एषा यज्ञस्यं। योँऽग्रीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छित्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चमुद्धृत्यं। मनुसोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजा-पंतिः। भूतिंमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपृक्षायंति। यावुच्छम्यंया प्रविध्येत। यदि तावंदपृक्षायेत्। त सम्भरेत्। इदं तु एकं पुर उं तु एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तन्वै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे ज्नित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भरित। सैव ततः प्रायिश्वित्तः। यदि परस्तरामंपक्षायेत्। अनुप्रयायावस्येत्। सो एव ततः प्रायिश्वित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं पृशून्पयः प्रविंशति। यस्यं

हिवषे वथ्सा अपाकृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुद्यात्। यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। यन्न दुद्यात्। यज्ञपुरुरन्तरियात्। वायव्यां यवागूं निर्वपेत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापयिता। स एवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यंर्धयति। ये यजंमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिंमाच्छंति। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं पृवाऽऽरभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुंर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मै स्मीचीं दधाति। पयो वा ओषधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मै ह्विषे वृथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भाग्धेयेन् व्यर्धयति। ये यजमानस्य सायं च प्रातश्चे गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छति॥७॥

ऐन्द्रं पश्चंशरावमोद्नं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निमुखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै हुविषे वृथ्सानुपाकुंर्यात्॥८॥

परस्तुरामोर्षधीरन्यतुरानुभयांनुर्धो वै॥)॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्थो वा पृतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽहृन्पत्र्यंनालम्भुका भवंति। तामंपुरुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्रोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुश्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेतिं। अर्ध पृवेनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥ व्यति यज्ञ उत् एक्थवित कथे क्यांव्च्छत्युपार्व्वात्वित्वि त्वम्षे व (सर्वान् व व व व व

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेंत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्यय्चां वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वृल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयुर्चाऽन्तः परि्धि निनयेत्। द्यावापृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनेरहोत्व्यम्। सैव तत्ः

प्रायंश्चित्तिः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽ्त्मञ्जायेत। किलासों वास्यादंर्श्मसो वाँ। यत्प्रत्येयात्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनाँन्कल्पयित प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चंष्टे। स्त्यायं ह्व्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयित। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्पूर्वस्यामाहृत्याः हुतायामृत्त्राऽऽहृंतिः स्कन्दैंत्। द्विपाद्भिः पृशिभिर्यजमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पृत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनेव यज्ञस्यातां चानांतां चाऽऽहंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाकः स्यात्॥१४॥

यद्दंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाकई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पत्निये च यजंमानाय चाकई स्यात्। यद्दर्छः। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौंऽस्य पृश्वस्यातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रह्नियेत॥१५॥ स्रवस्य बुभ्रेनाभिनिदंध्यात्। मा तमो मा युज्ञस्तम्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमों रुद्र परायते। नमो् यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्रसीर्मुं मा हिर्रसीरिति येन स्कन्दैंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्भो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवाँन्थ्सुप्रतीकः। मा नों हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नों वीरपोषं चं युच्छेतिं। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्वितिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयिति प्रजानन्नभि जुंहुयाथ्रस्यौद्धियेत् जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया् यत्कीटा मंध्यमेन् यदवंबृष्टेन् यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यदंक्षिणा यत्प्रत्यय्यदुदङ्क्ष्॥॥**———[२]** 

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीयेंणध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निर्म्थ्य-मानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायार् होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति॥१७॥

अजस्य तु नाश्जीयात्। यद्जस्याँश्जीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंसृत्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्वाँह्मणं वंसृत्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तं भागधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंसृत्यै नापुरुध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्र्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्र्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतास्वेवास्यांग्निहोत्र हृतं भवित। आपस्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाफ्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तनुवौ स॰ सृंज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्येरिग्निभंर्ग्नयः स॰सृज्यन्ते। अग्नये विविचये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यां चैवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावंतियति। अग्नयें ब्रतपंतये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव ब्रतपंतिक् स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं ब्रतमा लंम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यथ्स्रवैत्। रेतौ-ऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकरित्यांह। रेते एवास्मिन्वाजिनं दथाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र

इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनानार् रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पितिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणेवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्तप्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥ अजाऽम्रावेवास्यांभ्रहोत्र हुतं भवित भवत्यासीत परिचक्षीत कम्भवित द्याति देवानां बृह्स्पितः पर्श्वं च (वि वे यद्यम्जायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तुम्बँऽपस् हॉन्व्यमं।)॥———[3]

याः पुरस्ताँत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाथ्सर्वतंश्च याः। ताभी रिष्मपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंस्स्पतिंना देवेनं। वाताँद्यज्ञः प्र युंज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम आर्भृतः॥२४॥

सोम्पीथाय सन्नयितुम्। वर्कलमन्तरमा देदे। आपी देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायुत्री पंर्णवल्केनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृंह्णामि सुरथं यो मयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहेँ। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिंरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवताँभ्यः। वसूत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सृह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतेने मनीषयाः। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि

गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहत्। पौर्णमास हिविरिदमेंषां मिये। आमावास्य हिविरिदमेंषां मिये। अन्तराउग्नी प्शवंः। देवस सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषया। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवीं विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पितृणामग्निः। अवाँहुव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परि गृह्णामि। अविषन्नः पितुं केरत्। अजेस्रुं त्वा १ संभापालाः॥२८॥

विज्यभाग् सिन्धताम्। अग्नं दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्रदः श्रतम्। अन्नंमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्ररदः श्रतम्। आवस्थे श्रियं मन्त्रम्। अहिंबुंध्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्ग्नि-ज्येष्ठभ्यः। वसुभ्यो युज्ञं प्रब्नंवीमि। इदम्हमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यो यज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदम्हं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यो यज्ञं प्र ब्रंवीमि। पर्यस्वतीरोषधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्ने व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छेकेयं तन्मे राध्यताम्। वायौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

व्रतपत॥३०॥ व्रतानां व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदींचीम्। इष्मूर्जम्भि सङ्स्कृंताम्। बहुपूर्णामशुंष्काग्राम्। हरामि पशुपाम्हम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शतिधा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्परिधी इस्तिस्रः समिधंः। यज्ञायुरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषधयः। देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवानि श्ररदेः श्तम्। अपेरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमचनाहम्। पुनेकृत्थायं बहुला भवन्तु। स्कृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सीदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयों ह्व्यं करोतु मे। इमौ प्राणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वशः। आप्याययन्तौ सश्चरताम्। प्वित्रें हव्यशोधंने। प्वित्रें स्थो वैष्णवी। वायुर्वां मनसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजमानुमिपं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूंतां पोतांरौ। पुवित्रें हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। त्वयां युज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिंद्रं युज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिः शोऽसि तन्तूंनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवेय र र प्रुंरिभ्धानीं। अघ्वियामुपं सेवताम्। अप्रस्न र साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां पंरिवेषमंधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शुग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिर्ः प्वित्रमितनिताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिव्तत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गां दौहपिवत्रे रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चेरन्ति मधुंमृद्दुहानाः। प्रजावतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बृह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजािम। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यजंमानाय द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमती १ सुवर्विदम्। तदिन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमानममृतृत्वे दंधातु। कामंधुक्षः प्र णौं ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानाम्। मनुष्याणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यों मनुष्यैभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंति-रिस। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमिस विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिरेक्तेन पात्रेण। याः पूताः पंरिशेरंते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमिषं गच्छतु॥४०॥

पूर्णवृत्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना १ हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्य १ हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृश्रून्॥४१॥ अर्थत इम गृंह्हामे पूर्वंस्ताः पूर्वः परिगृह्हामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेश्य आदित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पूंनातु गहि नो विश्वरूपा दथातु पूर्नंगच्छतु पृश्न् (याः पुरस्तांदिमामूर्जीमृह प्रजा इह पृश्वोऽयं पितृणामृतिः।)॥———[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद॰ शंकेयं यदिदं करोमिं। आत्मा करोत्वात्मनैं। इदं करिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमृह॰ सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भाहि। मृहृत इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्ष त्वचंमङ्का। सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। ब्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्स्नाति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वित्स्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छु सुवर्विन्द् यजमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तमन्तरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश् श्रान्तम्। स्वश् हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमी संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भुरतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवदास्यामि। नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकार्षमात्मनः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यायतां पुनः। अज्यायो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्धः स्विष्टमिद॰ हुविः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावर्रणसमीरिताम्। दक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवद्याम्येकृतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां कृप्तिरिस। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्तां मे दिशां॥४८॥

दैवींश्च मानुषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। संवृथ्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागो-ऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पाहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद १ ह्विः॥५०॥

सोम्याना रे सोमपीथिनौम्। निर्भृक्तो ब्रौह्मणः। नेहा ब्रौह्मणस्यास्ति। समंङ्कां ब्रुहिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसृंभिः सं मुरुद्भिः। सिमन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभौ गच्छतु यथ्स्वाहा। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥
उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्।

यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिंर्जरमा रंभेताम्। दशंते तनुवों यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयाः प्रशिष्मीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भाग शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहै। अहं देवाना १ सुकृतां मस्मि लोके। ममेदिमिष्टं न मिथुं भवाति। अहं नारिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाँ भ्यामिन्द्रो अदंधाद्वाग्धेयम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् युज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्भं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स् सुवीर्यम्। रायस्पोष स् सहस्निणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहाँ। अमावास्यां सुभगां सुशेवाँ। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स् सुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्निणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्याये स्वाहाँ। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयाना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य ब्रुप्ने॥५४॥

अभीत्वर्षे करोमि क्रमीत्युवाऽऽत्मनं एक्तो संखां मे दिशोऽधंक्षेभ्यो हविगांरहपत्या कल्पय्वश्रांस्तिः सा

परिस्तृणीत परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु।

देवेनं सवित्रा प्रसूत आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सवितरेतं त्वां वृणते। बृहस्पतिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायित्रयै। गायत्री त्रिष्टभैं। त्रिष्टु जगंत्ये। जगंत्यनुष्टभैं। अनुष्टुक्पुङ्की। पङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापितिर्विश्वेभ्यो देवेभ्यः। विश्वे देवा बृहस्पत्ये। बृहस्पतिब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भुवः सुवंः। बृहस्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मंनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हर्म्यं करोमि। यो वों देवाश्चरित ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तपुस्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित् मानुषीषु। चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें। मुर्मृज्यमाना महते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा मंहिमानं पुपोष। ततो देवी वंधयते पया रेसि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्रंरीश्च। यो मां हुदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदंयेनेष्ण्ता

देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्र्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकंस्य पृष्ठे पर्मे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥ सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शुग्मा चैंधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षुत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश् पृष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्त्राद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पृश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

चं। तस्येंन्द्र वज्रेंण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथंमान स्योनम्।

अस्मिन् युज्ञ उप भूय इन्नु मैं। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषा स्मि निरितो नुंदातै। विच्छिनिद्यो विधृतीभ्या स्पलान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्छ्यमाणाः। विशो यन्त्राभ्यां विधमाम्येनान्। अहङ् स्वानामृत्तमोऽसानि देवाः। विशो यन्त्रे नुदमाने अरांतिम्। विश्वं पाप्मान्मितिं दुर्मरायुम्॥६१॥

यन्ने नुदमाने अरांतिम्। विश्वं पाप्मान्ममितिं दुर्मरायुम्॥६१॥
सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती।
प्राणान्मियं धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। प्रशून्मियं धारयतम्।
अयं प्रंस्तर उभयंस्य धृती। धृती प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स
दांधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्स्रुचो अध्या सांदयामि। आ
रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुंराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहें यज्ञ सुदुर्घामिव धेनुम्। अहमुत्तरो भूयासम्। अधेरे मथ्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमृत्तंरो भूयासम्। अधेर् मथ्मपत्नाः। ऋष्भोऽिस शाक्वरः। घृताचीना स् सूनः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदिस सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंिय प्रजयां प्शुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमुत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मथ्सपर्लाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शृतधार उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। युज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भेविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरांवतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरांवतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतंं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्। तेनं देवा अवतोप माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओजः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥ येनासिश्चद्धलुमिन्द्रै प्रजापितः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध् मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्वविन्दत्। गुहां स्तीं गहने गह्वरेष्। स विन्दत् यजमानाय लोकम्। अच्छिद्रं युज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं युज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यज्ञंषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयांतै। अस्मिन् युज्ञे यजमानाय मह्मम्। अप तिमन्द्राग्नी भुवंनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींध्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींध्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्याय। मनो ज्योतिर्जुषतामाज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ समिमं देधातु। बृह्स्पतिस्तनुतामिमं नेः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वामिं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्वत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येंव

प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्गे सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजें त्वा ससृवा॰सम्॥७१॥

वार्जं जिगिवारसम्। वाजिनं वाजितितम्। वाजितित्यायै सम्माजिमं। अग्निमंत्रादमृत्राद्याय। वेदिर्बुर्हिः शृतर हृविः। इध्मः पेरिधयः सुचंः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्याश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नतयो नमन्ताम्। इध्मसन्नहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युर्त्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तर्रं शोचयामसि। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अहर शुंचम्। यज्ञ् नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेन मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेन मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्विमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नर्मः। उपं ते नर्मः। उपं ते नर्मः। त्रिष्फ्लीक्रियमांणानाम्। यो न्युङ्गो अंवृशिष्यंते। रक्षंसां भागुधेयम्। आपुस्तत्प्र वंहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच् शूर्पे। आशिश्लेषं दृषदि यत्कपालै। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजामि। विश्वें देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बृह्धीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जहि। निम्रोचन्नर्धरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य।

## ॥ हृद्रोगघ्न-मन्त्राः॥

उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नुत्तरं दिवम्। हृद्रोगं ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हृरिमाणुं नि दंध्मिस। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा सह। द्विषन्तुं ममं रुन्धयन्। मो अहं द्विषतो रंधम्।

यो नः शपादशंपतः। यश्चं नः शपंतः शपाँत्। उषाश्च तस्मैं निम्रुक्कं। सर्वं पाप॰ समूहताम्॥७७॥

यो नंः स्पत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किञ्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मस्थितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विश। मैषां कञ्चनोच्छिषः॥७८॥ पर्तिः प्रजापंतये तप्स्वी बाचा सौभंगाय पृश्नमे पिन्वस्व दुर्मगुदं देव्यानांनग्रेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तंरो भूयासं प्रजापंतिरसि सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाजुजितं पृथिवी ह्रंयतामृग्निराग्नींप्रादृश्चत ससुवारसर्थं हुते स्योनेनं मे सितंष्ठस्वेतः कृषि दथ्यस्यूहतामृष्टौ चं॥——[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतीरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो वरिष्ठो अक्षभिर्विभाति।

ब्रह्मणो योनिः॥७९॥ ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा

रंभे। श्रद्धां मनसा। दीक्षां तपंसा। विश्वेस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यर्जमानस्य सन्तु। वार्तं प्राणं मर्नसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा जरामंशीमहि। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्रपंद्ये। तान्ते

जर्गतीं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्वरानुष्टुम्ं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर पङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥ तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण

युनज्मि। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुमं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर

छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋत सत्यें ऽधायि। सत्यमृतें ऽधायि। ऋतं चं मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिंरभूव ५ सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्रध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौदीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चन्द्रमां

दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। दौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्व रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्लौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितेह सींद। देवाना रे सुम्नो मंहते रणांय। स्वासस्थस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सत्यं मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥ तपों मे प्रतिष्ठा। सवितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव् योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुकुञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतीकः पुरस्तात्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थस्थस्थे अध्युत्तरस्मिन्॥८८॥

विश्वें देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। चृत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वा-ऽन्वेतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। सप्त सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। सर्खायः सप्तपंदा अभूम। सुख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते पृथिवी पादंः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरक्षं पादंः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादंः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पादंः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न् इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेर्जं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिंमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु १ सुदुघामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुमती १ रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येंत्। देवस्यं सिवतुः सवे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यै। तस्यारं सुपूर्णाविध् यो निविष्टो। तयोदिवानामिधं भागुधेयम्। अप जन्यं भयं नुंद। अपं चुक्राणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्म्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

यदस्य पारे रजंसः। शुक्रं ज्योतिरजायत। तन्नः पर्षदित द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मी्दुषें। उद्ग्रंस तिष्ठ् प्रति तिष्ठ् मारिषः। मेमं युज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यजमान् हे हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषा-ऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञांस्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मी्दुषें॥९४॥

य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतन्प्रियसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहुंतस्य च। अहुंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्नी अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंगिमं पिबात। सङ्संष्टमभूरं कृतम्॥१५॥

प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। सः सृष्टमुभयं कृतम्॥ ९५॥
कृषि मीद्वपेऽहंतस्य च सम चं॥————[८]
अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रंण प्रेषिता उपं। वायुष्टे

अस्त्व श्र्भाभूः। मित्रस्ते अस्त्व श्र्भाभूः। वर्रुणस्ते अस्त्व श्र्भाभूः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। वृग्गुनेन्द्र ह्रं ह्रयत। घोषेणामीवा श्र्श्वातयत॥ ९६॥ युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः।

पुन्त्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्थस्यात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ स्नेभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आस्षववुः। सम्रे रक्षाः स्यवधिषुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बर्लं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ररा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा त्नूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽसि शृतं कृंतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यम्ं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मयि

त्यदिन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकूत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य अविवेश भुवंनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती एषि सचते स षोंड्शी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियंः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्र ते महे विद्ये शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्र ते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चारु सेचेते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमसि। अधिपतिं माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्घरंणश्च राजां। तो ते भृक्षं चंक्रतुरग्रं एतम्। तयोरनुं भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजा-पंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनों देवं यज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित तर हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बुलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्यथो अंनृणा आक्षीयेम। इदमून श्रेयोऽवसानमा गंन्म। शिवं नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोमृद्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरेरनु सश्चरेम। अर्कः पवित्र रजसो विमानः। पुनाति देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपींने। प्वित्रंमको रजसो विमानः। पुनाति देवानां भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशो महत्। अशीमहि गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥ चाव्यत् श्रेणांताः सत्यमहुरंशामहि गणे कृष् विद्वरंणे पितृयणां अर्को रजसो विमानकीणि चा[९]

उदंस्ताम्फ्सीथ्सिवृता मित्रो अंर्यमा। सर्वान्मित्रांनवधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहां उन्तरिक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्नोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्नया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्तैं द्रुफ्सो यस्तं उद्रुषः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ट्ये स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो युज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दार्रसि निविदो यजूर्रषि। अस्यै पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापतेर्वर्तनिमनुं वर्तस्व। अनुवीरैरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजयाऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों युज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षृत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिं तिष्ठामि भव्ये। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तदन्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकर्मणे। पृथिव्ये चांकरं नमंः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमिह। ये देवा येषांमिदं भाग्धेयं बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वरुंणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मितिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांमस्मद्रपंः। अप स्निधंः। शम्भ्रिर्म्निभंस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यंः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मंवे। अपश्चाद्द्यवने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि॥११०॥ उद्रुष इंन्ड्रियेण गा मृतिरंरुण अंगात्रीणि च॥ [१०] ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञाना र्थं हिविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यर्च हीनम्। युज्ञः

हावषामाज्यस्य। आतारक्तं कमणा यच हानम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहृंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वषंद्वृतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मं रुतस्तिन्निधेतन। तृतं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथांय शस्यते। अय संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समुंतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्स्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नां अग्ने स त्वन्नां अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि। मैषान्नुंगादपरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु श्ररदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं देधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषुडिनिष्टेभ्यः स्वाहां। भेषुजं दुरिष्ठ्ये स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहां। दौरांर्ध्ये स्वाहा दैवींभ्यस्तनूभ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋद्धे स्वाहा समृद्धे स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृधि। मर्घवञ्छुग्धि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधीं वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अंभयङ्करः। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनांज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनंसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां क्रतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा १ ऋतुशो यंजाति॥११५॥ द्वाशिष्ठं तृत्भ्यः स्वाहोनं पुरुषसम्मितोऽशे तदंस्य कल्पय पश्चं च॥——[११]

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकुमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचा-ऽनृतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकुम। कुरोतु मामनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वः संरस्वति। ऋतान्मां मुञ्जताः हंसः। यद्न्यकृंतमारिम। सृजात्शः स्सादुत वां जामिशः सात्। ज्यायंसः शः सांदुत वा कनीयसः। अनांज्ञातं देवकृंतं यदेनंः। तस्मात्त्वमस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥

शिश्ञैर्यदनृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः।

यद्धस्तांभ्यां च्कर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुमुंपृजिघ्नंमानः। दूरेपृश्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंपम्सरसावनुंदत्तामृणानिं। अदीं व्यन्नृणं यद्दहं च्कारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्जगारा जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे सित॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पिता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि रसितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यद्न्तरिक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि रसिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकुमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति क्रामामि दुरितं यदेनः। जहामि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र यन्तिं सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अपस् जाताः। या जाता ओषधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपः। ता नः शुन्धन्तु शुन्धनीः। यदापो नक्तं दुरितं चराम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमं में वरुण् तत्त्वां यामि। त्वन्नो अग्ने स त्वन्नो अग्ने। त्वमंग्ने अ्यासिं॥१२१॥

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्विधता परूर्षे। तथ्मन्यथ्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमथ्मङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवुः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतां तत्तें। निष्ट्यांयतां देव सोम। यत्ते त्वचं विभिदुर्यच् योनिम्ं। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज् सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्विरं आवृणानः। अनांगास्तुनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वंहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या १ समु चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त आस्थित १ शमु तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमंने पथीनाम्। एतं जानीतात्परमे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छांत्पथिभिर्देवयानैंः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविरस्मे। अरिष्टो राजन्नगृदः परेहि। नमस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्रं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रह्या भर्जति मानवेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपने नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिर्हेतिः। उग्रा श्रतापांष्टा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

लगा जायंमानोऽस्य द्यत्यश्रं च॥

[१३]

यिद्देविक्षे मनंसा यचं वाचा। यद्वाँ प्राणैश्चक्षंषा यच् श्रोत्रंण। यद्वेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अन्द्र्यो लोका देथिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचनीः। आपो विमोक्कीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। यद्वचा साम्ना यज्ञंषा। पृशूनां चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोंभिरोषंधीभिवनस्पतौँ। अन्द्र्यो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन् राजां। विश्वें देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अन्द्र्यो लोका दिधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषधीनार् रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम र ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना र रसः। सोमंस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम र ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना र रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानाँ प्रियतम र ह्विः स्वाहाँ। व्यर सोम व्रते तवं। मनंस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युरमृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पृणं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नः शीयता र र्यिः। सर्चतां नः शचीपतिः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजा र रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसान्मागंन्म। यद्गोजिर्छन्जिर्दश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नः शीयता र र्यिः। सर्चतां नः शचीपतिः॥१३०॥ वनस्पतंत्र्यो लोका देथिर तेर्ज इद्भियं प्रामांशीमहीवाभिनः शीयता र रिवर्क च॥——[१४] सर्वृत् यद्विष्णेन वि वे याः प्रस्तादेवां देवेषु परिस्तृशीत् सक्षेदं यदस्य परिंजगम्

उदस्ताम्पसीद्वहां प्रतिष्ठा यहेवा यत्ते ग्राव्णा यहिंदीक्षे चतुर्दशाश४॥
सर्वान्भूतिंमेव यामेवापस्वाहृति ब्रतानां पर्णवृत्कः सोम्यानांमुस्मिन् युज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः पुरोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हपत्यश्चिश्शदुंत्तरशृतम्॥१३०॥
सर्वाञ्छचीपतिंः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतेत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता स् सङ्गृह्णानीति। द्वादंशारत्नी रशना भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौजी भवति। ऊर्ग्वे मुजाः। ऊर्जमेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षेत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहुन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समृष्ठौ। केश्रश्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। दतो धांवते। स्नातिं। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गृत्यौ। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य समृष्ठौ॥२॥ कर्मं पक्षे पक्षं पक्षं पक्षं पक्षः प्राप्तिः।

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रृं वा आपंः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रृं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मोदनं पंचति। रेतं पृव तद्दंधाति॥३॥

चतुः शरावो भवति। दि्रक्ष्वेव प्रति तिष्ठति। उभयतोंरुक्मौ भवतः। उभयतं एवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धरित शृतत्वायं। अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

ज्योतिंषि जुहोति। चत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती इष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नशुनान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। रेत आज्यम्ं। यदाज्ये रशनान्युनर्त्ति। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयति। दुर्भमयीं रशुना भंवति। बहु वा एष कुंचुरों मेध्यमुपंगच्छति। यदर्श्वः। पवित्रं वै दर्भाः॥५॥

यर्द्भमयीं रशना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनं मेध्यमा र्लभते। अर्श्वस्य वा आर्लब्यस्य महिमोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विंजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विंजः प्राश्ञनितं। महिमानमेवास्मिन्तद्वंधित। अश्वस्य वा आलंब्यस्य रेत उदेकामत्। तथ्सुवर्ण १ हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण १ हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्धाति। ओदने दंदाति। रेतो वा ओदनः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतों दधाति॥६॥ द्धाति रुन्धे दुर्भा अभवुष्यद् चं।

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नातिं। आ देवताँभ्यो वृश्चते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताँभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति। यदार्ह। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमिति। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मंण एव देवेभ्यंः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नाति॥७॥

न देवताँभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसुव इति रश्नामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताँम्। पृष्णो हस्ताँभ्यामित्यांह यत्यैं। व्यृंद्धं

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

हि देवानांमध्वर्य आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। व्यृंद्धं वा पृतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्ये-त्यिषं वदित् यजुष्कृत्ये। यज्ञस्य समृंद्धो॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोंदशार्त्नी(३)-रितिं। ऋष्मो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्म एष युज्ञानाम। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्मस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंर्त्निः रंशनायामुपा दंधाति॥९॥

यथंर्ष्भस्यं विष्टपर्श्त सङ्स्क्ररोतिं। ताद्दगेव तत्। पूर्व आयुंषि विद्येषु कृव्येत्याह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिमेवोपावर्तते। ऋतस्य सामन्थ्सरमारपन्तीत्यांह। सत्यं वा ऋतम्। सत्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनम्सी-त्यांह। भूमानंमेवोपैति। यन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धर्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धर्ताऽसीत्यांह। धर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवेनं वश्वान्रे जुंहोति। सप्रंथस्मित्यांह॥११॥
प्रजयैवेनं पृश्भिः प्रथयति। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं

पुवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धूर्ताऽसि धूरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमाय त्वा रूप्ये त्वा पोषाय त्वेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पुवेन ई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। यस्यां पुव देवतांया आलुभ्यतें। तयैवेन इ समर्थयति॥१२॥

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसति तम्भ्यंमीति वर्रुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। पुरो

मर्तः पुरः श्वेति शुनेश्चतुरुक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः।

पाप्मानेमेवास्य भ्रातृंव्य र हिन्ते। सै्भ्रुकं मुसेलं भवति॥१३॥
कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौ्ड्श्चलेयो हंन्ति। पुड्श्चलवां
वै देवाः शुचुं न्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर्र हिन्ति। पाप्मा वा

पुतर्मीप्सतीत्यांहुः। यौऽश्वमेधेन् यर्जत् इतिं। अश्वंस्याधस्पदम्-पास्यित। वृज्जी वा अश्वः प्राजापत्यः। वर्ज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामित। दृक्षिणाऽपं प्लावयित॥१४॥ पाप्मानंभेवास्माच्छमंलमपं प्लावयित। ऐषीक उंदहो

पाप्मानमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधति। अमृतं वा ड्षीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतुसुशाखोपसम्बंद्धा भवति। अफ्सुयोनिर्वा अर्थः। अफ्सुजो वेत्सः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तौत्प्रत्यश्चेमुभ्युदूहिति। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्युमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहन्नितिं ब्रह्मा यर्जमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरधुज्मन्नित्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्यै॥१५॥

भवति प्रावयति मिमीते पः

चुत्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चतसृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रैः सुहाध्वर्युः। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजां वृत्रं वंध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्युः। क्षत्र॰ राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। शतेनां राजभिरुग्रेः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्योक्षंति। अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाँप्रतिधृष्यौँ ऽस्त्विति। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलेंनैवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनार्श्वन मेध्येनेष्ट्वा। अयर राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंह्शायें बह्वजाविकायें। बहुब्रीहियवायें बहुमाष-तिलायैं। बहुहिर्ण्यायैं बहुहस्तिकांयै। बहुदासपूरुषायैं रियमत्यै पुष्टिंमत्यै। बहुरायस्पोषायै राजास्त्विति। भूमा वै होताँ। भूमा सूंतग्रामण्यंः। भूम्रेवास्मिन्भूमानं दधाति। शतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तरतो दक्षिणा तिष्ठन्प्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ठा। अयर राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषेवास्मिन्नायुंदिधाति। श्वतरशंतं भवन्ति। श्वायुः पुरुषः श्वतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः श्वता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यन्निक्तमनां लब्धमुथ्मुजन्तिं। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वृहुतं मेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्त्र हि तत्। यद्भुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रं सम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीतः। अपरिमिता अन्वाहः। अपरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्याः स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्याः आपः। ता अवं रुन्धे। अस्यां जुहोति। इयं वा अग्निर्वैश्वानुरः॥२१॥

अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु

वा अहमंश्वमेध स्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थिंतेन चरामीति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमायेवैनं जुहोति। सवित्रे स्वाहेत्यांह। सवित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध्र एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवेनं जुहोति। वरुणाय स्वाहेत्यांह। वरुणायैवेनं जुहोति। एताभ्यं एवेनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशांक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। प्र वा एषों उस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहंतीर्जुहोति। पुनः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। एता ह वाव सौं ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कंन्दाय। अस्कंन्न ह ह तत्।

यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥
अभिजित्ये वैश्वान् संवित्र एवेर्न ज्ञहोति व्यववे एवेर्न ज्ञहोति व्यववे पद चं॥——[६]
प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति।
प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति।

तस्मादर्श्वः पश्नामंत्रादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेति दक्षिणतः।

**-**[り]

इन्द्राग्नी वै देवानामोजिंष्ठौ बलिंष्ठौ। ओजं एवास्मिन्बलं दधाति। देवानांमाशुः सोरसारितंमः॥२५॥

जवमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशुः सारसारितंमः। विश्वेंभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युंत्तरतः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं पुवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यंशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्युधस्तांत्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनां त्विषिमान् हरस्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथियौ त्वेत्याह। एभ्य एवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽज्ञ्यस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यत्प्रांजापत्योऽर्श्वः। अथ कस्मांदेनमन्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वार्यत्ताः। तं यद्विश्वेंभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति प्रोक्षति। देवता एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवता अन्वायंत्ताः॥२७॥ सारसारितमोऽपंचिततमः प्राजापत्योऽश्वः पश्चं च॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षिंतमनांलब्धमृथ्मृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सुर्वृहुतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कंन्नु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृंताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चुर्तैरेवेनु समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानिं। नैता होंतृव्यां इतिं। अथो खल्वांहुः। होतृव्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानंश्वमेध र सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँ द्वोतृव्यां इतिं। बहिर्धा वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥ २९॥

यस्यांनायत्नैं उन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः पुरस्तां थ्रिकष्टकृतः। आहुवनीयें उश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याऽऽहुंतीर्जुहोति। नास्मे भ्रातृंव्यं जनयति। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रृप्त्यैं। सुवृर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभियंजंमानं व्यंधंयेत्। अवं सुवृगिश्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थ्स्यादितिं। स्कृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यंधंयति। अभि सुंवृगं लोकं जंयित। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणिं जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जागृतोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धै।

मित्रमेव भंवतः॥३३॥

एक् मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥
अर्थपृत् जन्यति खल्बाहुर्जगंति शिष्टं च॥———[८]
विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ
पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वोऽसि हयोऽसीत्यांह।
शास्त्येवेनंमेतत्। तस्माँच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्योऽसीत्यांह।
तस्मादश्वः सर्वांन्यशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूनाः श्रेष्ठ्यं

गच्छति॥३२॥
प्रयशः श्रेष्ठ्यंमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवांऽिस् सितंरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवेनं नामधेयेनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्रा चेद्ध्वयेते।

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयति। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरेसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजित सर्वृत्वाय। देवां आशापाला एतं देवेभ्योऽश्वं मेधाय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वै तल्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं एवैनं परि ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह

रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेतिं चतृषु पृथ्सु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रं खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्य्र् रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ् य उद्दं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलौं-ऽश्वमेधेन यजंते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य यज्ञः। चृतुः शृता रक्षन्ति। यज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥

गुच्छति भुवतः पृथ्म जुहोति न गर्च्छन्ति नवं च॥\_\_\_\_\_[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेति। स तपोऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स पुतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्ध। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजमानोऽवं रुन्धे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणि वैश्वदेवानिं जुहोति। चत्वार्यौद्भहुणानिं। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शींर्ष्ण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंवि श्वातिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंवि श्वातिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावदित्य एंकवि॰्शः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैर्व्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वध्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्धहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां क्रस्यै। अप वा एतस्मौत्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे। पूर्णाहुतिमृत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठति॥४१॥

जूरपान्य प्रात तिश्वति॥००० हिश्चे प्राणान्येक्षामनं रूथ उच्यते कामन्ति तिश्वति॥———[१०]
प्रजापतिरश्वमेधमसजत। त॰ सष्टं न किञ्चनोदंयच्हरत

प्रजापितरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोतिं। यज्ञस्योद्यंत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहां। स्वाहाऽधीतं मनसे स्वाहां। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहां। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजापृत्ये मुख्यें भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनंं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यै स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या पुवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये बृह्त्यैं स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहत्याह। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रप्थयाय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहत्यांह। पृष्णे वे पूषा। पृष्ठितेनमुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाहा त्वष्टे तुरीपांय स्वाहा त्वष्टे पुरुरूपांय स्वाहत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषं दधाति। अथो रूपेरेवेनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहत्यांह। यज्ञो वे विष्णंः। यज्ञायैवेनमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं क्ये सयत्वायं॥४३॥ पृष्क्षंय प्रवह्त्यांहा वे॥————[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायत्रियाश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्नोति। गायत्रीं छन्दंः।

स्वित्रे प्रसिवित्र एकांदशकपालं मृध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्ठुप्। त्रैष्टुंभुं मार्ध्यं दिन् सर्वनम्। मार्ध्यं दिनादेवैन् स् सर्वनात्रिष्ठुभुश्छन्द्सोऽधि निर्मिमीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनांऽऽप्नोति। त्रिष्टुभं छन्दंः। स्वित्र आसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्वे। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवेनं जगंत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथों तृतीयसवनमेव तेनाँ ऽऽप्नोति। जगंतीं छन्दंः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पराँ परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहंतीर्जुहोति॥४५॥

चतंस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भंवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वों रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

त्रिष्टुभुष्क-दुसोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥——[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दंधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्री धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दंधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्री धेनुरंजायत। वोढांऽनुङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मांत्पुरा वोढांऽनुङ्घानंजायत। आशुः सिप्तिरित्यांह। अश्वं पृव जवं दंधाति। तस्मांत्पुराऽऽशुरश्वों-ऽजायत। पुरेन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युंवतिः प्रिया भावंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥ यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूँववयसी। स स्भेयो युवाँ। तस्माद्युवा पुमाँन्प्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतनं य्ज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिकामे नः पूर्जन्यो वर्षित्यांह। निकामेनिकामे हु वै तत्रं पूर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। फूलिन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फुलिन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। योगुक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते॥४९॥ अनुक्कानित्यांह जायते वर्षित सुम वं॥———[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों युज्ञान्त्यादिशत्। स आत्मन्नश्वमेधर्मधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव युज्ञः। यदश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृतानन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोतिं॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुना जुहोति। मृह्त्यै वा एतद्देवतायै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोतिं॥५१॥

मृह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोति। वसूनेव तत्प्रींणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोति। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बौः। यत्करम्बैर्जुहोति॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा पृतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा पृतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तंभिर्जुहोति॥५४॥

प्रजांपतिमेव तत्प्रींणाति। म्सूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतां प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियङ्गां हु वै नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा विराद। विराद्धृथ्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धै॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंजुंहोति सक्तिंभिर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलेर्जुहोतिं च्त्वारिं च (अन्न्रहोमानाऽऽज्येनाभ्रेमधुंना तण्डुलेः पृथुंकैर्लाजेः क्रम्बैर्धानाभिः सक्तिंभर्मस्यैः प्रियङ्गुतण्डुलेर्व्शान्नानि द्वादेशा ॥————[१४]

प्रजापंतिरश्वमे्धमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा ईस्यजिघा॰सन्।

स पुतान्प्रजापंतिर्नृक्त होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षाुं स्यपाहन्। यन्नंक्त होमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षाुं स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाः स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपर्दं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्धे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धे। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपंहत्ये। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभ्यतं एवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तांचोपरिष्टाच। एकंस्मे स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्या्ड् स्वाहेत्यांह। अमुिष्मेन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्या्ड् स्वाहेत्यांह। अमुिष्मेन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मिड्श्चामुिष्माड्श्च। श्वताय् स्वाहेत्यांह। श्वतायुर्वे पुरुषः श्वतवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। सर्वस्मे स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्थे॥५८॥
पृव युज्ञाद्वशाङ्क्ष्यपंहत्यन्तो जुहीति श्वाय स्वाहेत्यांह स्व चं॥———[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंफ्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यर्जत् इतिं। अथों आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याङ् स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्ये। शताय स्वाहेत्यांह। शतायुर्वे पुरुंषः शतवींर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुर्ताय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय् स्वाहेत्याह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय् स्वाहेत्याह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवे रुन्थे। सुमुद्राय् स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्यांय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाऽऽप्नोति। अन्तांय स्वाहेत्यांह। अन्तंमेवाऽऽप्नोति। प्राधीय स्वाहेत्यांह। प्राधीय स्वाहेत्यांह। प्राधीय स्वाहेत्यांह। प्राधीये स्वाहेत्यांह। रात्रिवी उषाः। अह्र्व्युंष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्थे। अथी अहोरात्रयोरिव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीदिवां वा नक्तं वा जुहुयात। अहोरात्रे मोहयेत। उषसे स्वाहा व्युष्ट्ये स्वाहोदेष्यते स्वाहौँ यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पुको्च्रं जुहोति प्रयुताय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहृव्युंष्टिः सप्त चं॥———[१६]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नाम्धेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्जंहोति। सर्वमेवैनमस्कंन्नः सुवृगं लोकं गंमयति। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्जंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६३॥

पृथिव्ये स्वाह् । इति स्वाहेत्येकि विश्वानीं दीक्षां जुंहोति। एकं विश्वाति देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकि विश्वाः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। भुवो देवानां कर्मणेत्यृतदीक्षा जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयित। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्ये॥ ६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै। भूतं भव्यं भविष्यदिति पर्यांप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्यांप्त्यै। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्यै। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधींताय स्वाहेति समंस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समंस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६५॥

द्न्यः स्वाह् हनूँभ्या् स्वाहत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गेअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मन्स्तेनं मुश्चति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहत्यंश्वरूपाणि जहोति। रूपेरेवैन् समर्धयति। ओषंधीभ्यः स्वाहा मूलेंभ्यः स्वाहेत्योषिधहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेंभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेंभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्थे॥६६॥

वन्स्पितेभ्यः स्वाहेति वनस्पितहोमाञ्चहोति। आर्ण्यस्या-त्राद्यस्यावंरुद्धो। मेषस्त्वां पचतेरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाऽद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ जुहोति। अपसु वा आपः। अत्रं वा आपः। अद्यो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥ पूर्ववीक्षा जुहोति पूर्व पृव द्विपन्तं आत्रंव्यमितं काम्त्यनंन्तिरत्ये कामिति रुन्धे जायंत् एकं चा[१७]

अम्भार्शसे जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शसे। तस्य वस्वो-ऽधिपतयः। अग्निज्यीतिः। यदम्भार्शसे जुहोतिं। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार् सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योति्रवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्श्स जुहोतिं। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्थे। महा १सि जुहोति। असौ वै लोको महा १सि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा रेसि जुहोतिं। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना र् सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्धे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेतिं यव्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावं रुद्धे। मृयोभूर्वातों अभि वांतूस्रा इतिं गव्यानिं जुहोति। पृश्नामवं रुद्धे। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमार्श्वहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्ये॥७०॥

स्ताय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथा-यजुरेवैतत्। दृत्वते स्वाहांऽदन्तकांय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्चंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तिते परिधीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये॥७१॥

यः प्रांणतो य आंत्मदा इतिं महिमानौं जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजंमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समंस्तानि ब्रह्मवर्चसानिं जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे। जिज्ञ् बीज्ञिमितिं जुहोत्यनंन्तरित्ये। अग्नये समंनमत्पृथिव्ये समंनम्दिति सन्नतिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्ये। भूताय स्वाहां भविष्यते स्वाहेतिं भूताभ्व्यौ होमौं जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे। यदक्रन्दः प्रथमं जायंमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनौऽऽप्नोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ र रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स पृतान्य्रजा-पंतिर्नक्त रहोमानंपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षा इस्यपाहन्। यन्नं क रहोमा अहोति। युज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा इस्यपहिन्त। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहेत्यंन्ततो जुंहोति। सुवृर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये॥ ७४॥

वै नभार्रसि सूर्यो ज्योतिः सन्तंत्यै समध्ये भूतं यज्ञेत नवं च॥———[१८]

पृक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। पृक्विद्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपां भवन्ति। राज्जंदाल एकंविरशत्यरिवरश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समंध्ये। नान्येषां पशूनां तेंजन्या अंवद्यन्तिं। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेजनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षुशाखायांमुन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेतस्शाखायामश्वंस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेतसः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३) ग्राम्यान्पश्त्रियुअन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पशूनां व्यावृंत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशू कॅर्भन्ते। प्रारण्यान्थ्सृंजन्ति। पाप्मनो-ऽपंहत्यै॥७६॥

अर्श्वस्य व्यावृत्त्यै त्रीणि च॥• <u> [</u>88] राज्जुंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहत्याया अपंहत्यै।

पौतुंद्रवावभितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्धस्यावंरुद्धै। भ्रूणुहत्या-मेवास्मादपहर्त्यं। पुण्येन गुन्धेनोंभुयतः परि गृह्णाति। पङ्कैल्वा भंवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। पद्बांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोमपीथस्यावंरुद्धै। एकंवि॰शतिः सम्पंद्यन्ते। एकंवि॰शतिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असार्वादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। शतं पशवों भवन्ति॥७८॥

शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। सर्वं वा अंश्वमेध्याप्रोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमितस्यावंरुद्धै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्मत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तरतोऽश्वस्येति। वारुणो वा अर्थः॥७९॥

एषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शुतुदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नावधिं वैतसे कटे-ऽर्श्वं चिनोति। अपसुर्योनिर्वा अर्श्वः। अपसुजो वैतुसः। स्व एवैनं योनौ प्रतिंष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिंनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्चौ दधाति। अर्थं तूपरं गोमृगमिति

सर्वहुतं एताञ्चंहोति। एषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मांनमेवेन् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं श्लोके भंवति। य एवं वेदं। अथो वसों रेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इंलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरोदेव परिवथ्सरादायुरवं रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं

लोकमेति॥८१॥ तज्ञसोऽवंरुखे भवन्त्यश्चौ गोमृगर्मिलुवर्देश्वत्वारि च॥=

पुकवि शौँ ऽग्निर्भवति। पुक्वि श्वाः स्तोमः। एकं-विश्वतिर्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षभा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्।

पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुंरन्ते। यदेंकिविश्वाः। ते यथ्संमृच्छेरन्। हुन्येतांस्य युज्ञः। द्वाद्वा पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्वाः स्तोमं:॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशाँऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यदश् यूपा भवंन्ति। दशाँक्षरा विराट। अन्नं विराट। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥ दुह पुवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्याँद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। ताहक्तत्। एकविश्श पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शाः स्तोमः। एकविश्शितिर्यूपौः। यथा प्रष्टिंभिर्याति। ताहगेव तत्॥८४॥
यो वा अंश्वमेधे तिस्रः ककुभो वेदं। ककुद्ध राज्ञाः भवति।

पुक्वि १ शोँ ऽग्निर्भवित। पुक्वि १ शः स्तोमंः। एकंवि १ शित्र्यूपाँः। पुता वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभंः। य पुवं वेदं। क्कुद्ध राज्ञाँ भवित। यो वा अंश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाण् वेदं। शिरों ह राज्ञाँ भवित। पुक्वि १ शोँ ऽग्निर्भवित। पुक्वि १ शः स्तोमंः। एकंवि १ शिरों ह राज्ञाँ भवित। पुक्वि १ शोँ ऽग्निर्भवित। पुक्वि १ शोँ । एकंवि १ शिरों ह राज्ञाँ भवित॥ द वा अंश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणें। य पुवं वेदं। शिरों ह राज्ञाँ भवित॥ ८ ५॥

बाव १ स्तोमः म पुव तिष्वरं ह राज्ञाँ भवित पद चं॥ [२१]

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवृगं लोकं न प्राजांनन्। तमश्वः प्राजांनात्। यदेश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवृगस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। न वै मंनुष्यः सुवृगं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवृगं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञो-ऽन्येनं पृथा प्रंतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रुध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽञ्जंसा नयंति। एवमेवेनमश्वंः सुवृगं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंम्न्वा रंभन्ते। सुवृगस्यं लोकस्य समष्ठौ। हिं करोति। सामैवाकः। हिं कंरोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथो ऋख्सामयोरेव प्रति तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मृंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥ वस्य उपाकंति वालारं वा [२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापितः। यदश्वे प्रशून्नियुअन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुक्के। अर्श्वं तूपरं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आर्लभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्मौद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आृग्नेयं कृष्णग्रीवं पुरस्तौक्षलाटैं। पूर्वाग्निमेव तं कुंरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चमैं। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावंकः। आग्नेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्माँद्राज्न्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाृष्ट्रौ लोमशस्क्थौ सक्थ्योः। सक्थ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्माँद्राज्न्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथों क्वचें एवैते अभितः पर्यूहते। तस्माँद्राज्न्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोद्रम्धस्ताँत्। प्रतिष्ठामेवैतां कुरुते। अथों इयं वै धाता। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्मांद्रथ्सेधं भ्ये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथा निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूगंह प्रजापंतिरकामयताश्वमे्धेनं प्रजापंतिनं किश्चन सावित्रमा ब्रह्मन्युजापंतिर्देवेन्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीपसित विभूरंश्वनामान्यम्भाःश्रंस्येकयूपो राञ्चंदालमेकविश्शो देवाः पुरुषुस्रयोविश्शितः॥२३॥ साङ्ग्रहण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राज्ञन्यं एकंनवितः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

## हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥नवमः प्रश्नः॥

## ॥तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टा-द्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमाध्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुन्ध। यदंष्टा-द्शिनं आलुभ्यन्तें। युज्ञमेव तैराखा यजंमानोऽवं रुन्धे। संवथ्स-रस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टादशिनंः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तैं। संवथ्सरमेव तैराष्ट्रवा यजंमानोऽवं रुन्धे। अग्निष्ठैंऽन्यान्पशूनुंपाक्ररोति। इतंरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंनवालंभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदार्ण्यैः सर्इस्थापर्यंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रौ। व्यध्वानः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजायेरन्। तदाहुः। अपेशवो वा एते। यदारण्याः। यदार्ण्येः सर्इस्थापर्यंत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृतर हरियुः। अरेण्यायतना ह्यार्ण्याः पृशव इति। यत्पशून्नालभेत। अनेवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मृजेत्॥३॥

युज्ञवेशसं कुर्यात्। यत्पशूनालभेते। तेनैव पुशूनवं रुन्धे। यत्पर्यम्निकृतानुथ्सृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पुशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेश्वसं भवति। न यजमानुमरण्यं मृतः नवमः प्रश्नः (अष्टकम् ३) हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयति। एते वै पशवः नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वानः क्रामन्ति। समन्तिकं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ भंवतः। नक्षींकौः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्कंरा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुथ्मुजेथ्स्यंतस्त्रीणिं च॥ प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एता-नुभयाँन्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरण्याङ्श्चं। तानालंभत। तैर्वे स उभौ लोकाववारुन्ध। ग्राम्यैरेव पशुभिरिमं लोकमवारुन्ध।

आरण्यैरमुम्। यद् ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्थे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्याहः। य इतर्इतश्चातुर्मास्यानि संवथ्सरं प्रयुङ्क इति। पुतावान् वै संवथ्सरः। यचांतुर्मास्यानिं। यदेते चांतुर्मास्याः पशवं आलभ्यन्तैं। प्रत्यक्षेमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्धे। वि वा एष प्रजयां पुशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्का। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापराभ्नोति। प्रजा वै पशर्व एकादशिनीं। यदेत ऐंकादशिनाः पशर्व आलभ्यन्तैं। साक्षादेव प्रजां पुशून् यर्जमानो-उवं रुन्धे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजतं। सा सृष्टाऽश्वेमेधं प्राविशत्। तान्दशिभिरनु प्रायुंङ्का तामाप्रोत्। तामाप्त्वा दशिभिरवांरुन्ध। यद्दशिनं आलभ्यन्तें॥७॥

विराजंमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। एकांदश द्शत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्ठुप्। त्रैष्ठुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवो भवन्ति। अश्वंस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पृशवः समृद्धौ॥८॥

अर्प्याक्षेके दृष्यां आलुन्यन्ते नानांरूपाः पृशवे हे चं॥————[२]

आर्ण्याँश्चेको दृशिन आलुभ्यन्ते नानांरूपाः पृशवो हे चे॥————[२] अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पृशव् आलुभ्यन्ते। अमुष्मा

अस्म व लाकाय श्राम्याः पुराव आलम्यन्ता अमुष्मा आरुण्याः। यद्गाम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदारुण्यान्। अमुं तैः। उभयान्पशूनालभते। गाम्याङ्श्चारुण्याङ्श्चं। उभयोर्लोकयोरवंरुद्धे। उभयान्पशूनालंभते॥९॥

ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयंस्यान्ना द्यस्यावं रुद्धे। उभयाँन्प्रशूनालंभते। ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयेंषां पश्नामवं रुद्धे। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मां ध्सत्यात्॥१०॥

अस्मिँ छोके बहवः कामा इति। यथ्समानीभ्यो देवताँभ्यो-ऽन्येंऽन्ये प्रावं आलुभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तछोके कामाँन्दधाति। तस्माद्स्मिँ छोके बहवः कामाँः। त्रयाणां त्रयाणाः सह वपा जुंहोति। त्र्यावृतो व देवाः। त्र्यावृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां क्रस्यै। पर्यग्निकृतानार्ण्या-नृथ्मुं जन्त्यिहः साये॥११॥ युअन्तिं ब्रुध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्र्ध्रः। आदित्यमेवास्मैं युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मैं युनक्ति। चरंन्त्मित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मैं युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्मैं लोकान् युनिक्तः। रोचन्ते रोचना दिवीत्याह। नक्षत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षत्राण्येवास्मैं रोचयति। युञ्जन्त्यंस्य काम्येत्याह। कामानेवास्मैं युनिक्तः। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मैं युनिक्तः॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे प्वास्में युनिक्ता एता प्वास्में देवतां युनिक्ता सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिं। कृतुं कृण्वन्नकृतव् इति ध्वजं प्रतिमुश्चिता यशं प्रवेन् राज्ञां गमयित। जीमूर्तस्येव भवित प्रतींकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजित्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपाकृंतोऽन्यत्र वेद्या एतिं। एतङ्स्तोतरेतनं पृथा पुनुरश्वमावंतयासि न इत्यांह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्दधात्यावृंत्त्ये। यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यदंस्योपाकृंतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमांन्येवास्य तथ्सम्भंरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुव्रितिं प्राजापृत्याभिरावंयन्ति। प्राजापृत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावातां। सुव्रितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजित्ये। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिर्ण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चेवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप् वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमिन्ति। यौऽश्वमेधेन् यजति। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण् छन्दसेति महिष्यभ्यंनिक्तः। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्ट्रंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्धे। आदित्यास्त्वां-ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृश्नवं रुन्धे। प्रत्येयोऽभ्यंअन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं कामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोंमुमाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वांयोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्धे प्रजापत् इत्याह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नावजिप्रेत। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान्ं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्तें पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुंमन्नयते। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियो भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥ परितृस्थुष् इत्याहुमे एवास्में युनक्त्वभिजित्ये भरन्त्यश्वमुंधो रूपे रूपि व्राणि वा [४]

तेजंसा वा एष ब्रंह्मवर्चसेन् व्यृंद्धते। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणत आंयतनो वे ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधौं ब्रह्मवर्चसितरः। उत्तरतो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्त आंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्त्रोऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यजमानदेवत्यों वै यूपंः। यजमानमेव तेजसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। किङ् स्विंदासीत्पूर्वित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्थे। कि इस्विंदासीद्बृहद्वय इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्थे। कि इस्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिर्वे पिंशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्थे। कि इस्विंदासीत्पिलिप्पिले-त्यांह। श्रीर्वे पिंलिप्पिला। अन्नाद्यंमेवावं रुन्थे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंरतीत्याह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उंस्विज्ञायते पुन्रित्याह। चुन्द्रमा वै जांयते पुनंः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निवै हिमस्यं भेषुजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पुच्छामिं त्वा परमन्तं पृथिव्या इत्यांह। वेदिर्वे परोऽन्तंः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अर्श्वस्य रेतः। सोमपीथमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं वाचः परमं व्योमत्याह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे॥२४॥

होतां भवति वै वृष्टिः पूर्वचित्तिरन्नाद्यंमेवावं रुन्धे महदित्यांह् सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्वत्वारिं च॥[५]

अप वा एतस्मांत्प्राणाः क्रांमन्ति। योंऽश्वमेधेन यजंते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान आहंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्प्राणा अपंत्रामन्ति। अवन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वां प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति ई हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्धंवते॥२५॥

अर्थो धुवन्त्येवैनम्। अर्थो न्येवास्मै ह्रवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यंः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये युज्ञे धुवंनं तुन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानयिति। अह्वंतैवैनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं एवैनामुपंनयित। सुवर्गे लोके सम्प्रोण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृशूनात्मन्थंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कृत्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्यै। गायत्री त्रिष्टुज्जगृतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यो भवन्ति। अयस्मय्यो रज्ता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्धशा रंज्ताः। ऊर्ध्या हरिण्यः। दिशं पुवास्मे कल्पयति। कस्त्वा छ्यति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रंसाय॥२९॥ हुवते कामन्त्यूण्वांथामित्याह जगुतीत्याह कल्पय्योकं च॥———[६]

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं क्रांमित। योंऽश्वमेधेन यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहति। अथास्या मध्यंमेधतामित्याह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातं पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विश्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। न पुष्टं पुशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पुशूत्र पुष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वैशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विश्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमश्वमेधः। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहल्मिति सर्पतीत्याह। तस्माँद्राष्ट्राय विशंः सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस् इत्यांह। विश्वे गर्भः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्मौद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीर्वे वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसृंलामीति ते पिता गुभे मुष्टिमंत १ सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्वं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञे ऽपूंतं वदंन्ति। दिधेकाळणों अकारिष्मिति सुरिभमतीमृर्चं वदन्ति। प्राणा वै सुंर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवाऽऽत्मानं पवयन्ते॥३४॥ गुष्ट्रस्य मध्यं पुष्यति गर्भो रूथे दक्षते चुलारि च॥——————[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदितिं। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आर्ध्रवन्। योंऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुषमालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुर्रुषः। विराजमेवार्लभते। अथो अन्नं वै विराट्। अन्नमेवावं रुन्धे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवावं रुन्धे। गामार्लभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञम्वालंभते। अथो अत्रुं वै गौः। अत्रृंमेवावं रुन्धे। अजावी आलंभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवावं रुन्धे। पर्यम्निकृतं पुरुषं चार्ण्या इक्षोथ्सृंजन्त्यिहि सायै। उभौ वा एतौ पृश् आलंभ्येते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तैं उस्योभये युज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिहुंता भवन्ति। नैनं दृङ्कावंः पृशवों युज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिहुंता हि सन्ति। यों ऽश्वमेधेन यज्ञते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

लुभुते गामालंभते पर्मौंऽष्टौ चं॥———[८]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरे-हन्। एकविष्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविष्शात्प्रतिष्ठायां ऋतून्नवारोहति। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहति। शक्कंरयः पृष्ठं भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्दंः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव् आर्लभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरुण्याः। अहंरेव रूपेण समेर्धयति। अथो अहं एवैष बुलिर्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चारुण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गुव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहुं नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पृशूनवं रुन्थे। प्राजापुत्या भंवन्ति। अनंभि-जितस्याभिजित्यै। सौरीनवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तत एव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। सोमाय स्वराज्ञेऽनोवाहावंनुङ्गाहावितिं द्वन्द्वनंः पृशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजित्यै। पृशुभिर्वा एष व्यृंध्यते। यौंऽश्वमेधेन यज्ञंते। छुगुलं कुल्माषं किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पृशूना लंभते। पृशुभिरेवाऽऽत्मान्श् समर्थयति। ऋतुभिर्वा एष व्यृंध्यते। यौंऽश्वमेधेन यज्ञंते। पिशङ्गास्त्रयो वासन्ता इत्यृंतुपृशूनालंभते। ऋतुभिरेवाऽऽत्मान्श् समर्थयति। आ वा एष पृशुभ्यो वृश्यते। यौंऽश्वमेधेन यज्ञंते। पर्यग्निकता उथ्मंजन्त्यनांवस्काय॥४०॥ लुभ्यन्ते लुभुते त्वाष्ट्रान्पशूनालंभतेऽष्टौ चं॥

प्रजापंतिरकामयत मुहानंत्रादः स्यामितिं। स एतावंश्वमेधे

मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंन्नादों-ऽभवत्। यः कामयेत महानंन्नादः स्यामितिं। स एतावंश्वमेधे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवान्नादो भंवति। यजमानदेवत्यां वै वुपा। राजां महिमा। यद्वपां मंहिम्रोभयतंः परियजीति। यजंमानमेव राज्येनोंभयतः परिंगृह्णाति। पुरस्तांध्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवरुध्यन्ते। यद्भुपां महिम्रोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयाँन्प्रीणाति॥४१॥

परियजंति षद्वं॥=

वैश्वदेवो वा अर्श्वः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिंभागाः। ता भांगधेयेन व्यर्धयेत्। देवताम्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्रांभ्यां मण्डूकां जम्भ्येंभिरितिं। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रंतिसङ्ख्यायमाह्तीर्जुहोति। या एव देवता अपिंभागाः। ता भागधेर्येन समर्धियति। न देवताँभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमासशः संवथ्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयंः स्विष्टकृतंः।

अश्वंस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंतुमुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्वंष्टकृद्ध्यो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रौऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशून्नर्त्दंधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतैं। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्यफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्ट्रकृत्। रुद्रादेव पृश्नूनन्तर्दथाति। अथो यत्रैषा- ऽऽहुंतिर्हूयतैं। न तत्रं रुद्रः पृश्नूनभिमंन्यते। अयुस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयाम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः।

रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमन्यते॥४५॥ व्यात्यभवसम्यवे प्रजा अन्तर्दधाति हे चं ॥————[११]

अर्थस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंत्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-

मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनमालंभते। आज्येन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहुती॥४६॥

बार्हताः पुशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पुशूनेव मात्रया

समर्धियति। तायद्भयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रया व्यर्धयेत्। षद्गिर्श्शतं जुहोति। षद्गिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुर्रुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुर्रुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्माँद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामृत्तंग्माहंतिं जुहुयात्। यदन्यामृत्तंग्माहंतिं जुहुयात्। प्र प्रतिष्ठायांश्च्यवेत। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रति-ष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सोंऽस्माथ्मृष्टोऽपांकामत्। तं यंज्ञ-कृतुभि्र-वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभि्र्मान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभि्र-वैंच्छत्। तिमिष्टिंभि्र-वेंविन्दत्। तिमिष्टिंभि्र-वंविन्दत्। तिदिष्टींनामिष्टित्वम्। यथ्संवथ्स्रमिष्टिं-भि्र्यजंते। अश्वमेव तदिन्वंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृप्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पर्रां परावतं गन्तौः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्यै धृत्यैं॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्ये धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। तस्माद्दिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेनमन्विंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवासमें योगक्षेमं कंत्पयति॥५१॥

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं क्रांमित। योंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणो वींणागाथिनो गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियमेवास्मिन्तद्धंतः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियमश्जुते। वीणांऽस्मै

प्रभःशुंकास्माच्छ्रीः स्याँत्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणौंऽन्यो गायेँत्। राजन्यौंऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षुत्रः राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षुत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपौस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इति। यदा खलु वै राजां कामयंते। अथं ब्राह्मणं जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गायेत्। नक्तर्रं राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभयतो राष्ट्रं परिंगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इति ब्राह्मणो गायैत्। इष्टापूर्तं वे ब्राह्मणस्यं॥५४॥

ङ्ष्टापूर्तेनेवेन् स् समर्थयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहित्रिति राजन्यः। युद्धं वे राजन्यंस्य। युद्धंनेवेन् स समर्थयित। अक्रुंप्ता वा एतस्यर्तव इत्याहः। याँऽश्वमेधेन् यजंत् इतिं। तिस्रोंऽन्यो गायंति तिस्रोंऽन्यः। षट्थ्सम्पंचन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्मै कल्पयतः। ताभ्या स् स् स्थायांम्। अनोयुक्ते चं शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति॥५५॥ गायंताङ्कामद्वाष्ट्यं कल्पयत्ववार्ति च॥ [१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोंक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोंके मृत्युर्विन्दित। यद्मुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्वंथ्स् अक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिं लोके मृत्युः॥५६॥

अ्शनया मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं श्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं।

यद्भूणहत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्ने भेष्जं कंरोति। एता ह व मुंण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण हिन्ति। सर्वस्मे तस्में भेषजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो व जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवयजते। खुलुतेर्विक्किधस्यं शुक्कस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वे वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रुणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं जुंहोति हे चं॥——[१५]

वारुणो वा अर्थः। तं देवतया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं क्रोति। नमो राज्ञे नमो वरुणायेत्याह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतया समर्धयति। नमोऽश्वाय नमः प्रजापंतय इत्याह। प्राजापृत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्याह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिं मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन र समानानां करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। उपाकृंताय स्वाहेत्युपाकृंते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥ प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमांश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्ये। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षत्रमिन्द्रः। यदैंन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे प्रवावं रुन्धे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धे। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रति तिष्ठति। अग्नयेऽ १ होमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविष्मिष्टिं निवंपति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। अग्नेमंन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इति याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥ अधिपत्य इत्यंहाभिजत्या ऐन्ह्यां भवंति रुन्धे व॥———[१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चुरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना र राजाः। याभ्यं पुवैनं विन्दतिं॥६३॥

ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनं भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णां चुरुं निर्वपेत्। यदि श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥ रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदि मह्ती देवतांऽभिमन्यंत। एत्द्देवत्यों वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालुं निर्विपेन्मृगाखुरे यदि नाऽऽगच्छैंत्। इयं वा अग्निवैश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रेहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अर्श्हंसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येति। यदर्श्होमुचे निर्वपंति। अर्श्हंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रेतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्चो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रेतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवेन् स् समर्धयित। यजमानो वा अश्वः। गर्भैवां एष व्यृध्यते। यस्याश्चो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भैर्वेन् स समर्धयित। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायश्चित्तः क्रियतें। इष्ट्वा वसीयान्भवित॥६७॥ विन्दत्वश्चांणो हैव भवत्वधीयाहंध्यते गर्भेर्वेन् स समर्धयित हे वं विन्तत्वश्चांणो हैव भवत्वधीयाहंध्यते गर्भेर्वेन् स समर्धयित हो वं विन्तत्वश्चांणो हैव भवत्वधीयाहंध्यते वर्षां स्वायाहंध्यते स्वयां स्वायाहंध्यते स्वयाहित हो वर्षां स्वयाहित हो स्वयाहित

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्सः स्थिते निर्वपेत्। द्वाद्शिभवेंष्टिं-भिर्यजेतेतिं। यदिष्टिंभिर्यजेंत। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यात्। पापींयाः स्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दाः सि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयुंश्चीतेतिं। सर्वा वै सः स्थिते युज्ञे वार्गांप्यते॥६८॥

साप्ता भविति यातयाँम्री। कूरीकृतेव हि भवत्यर्रुष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहः। द्वादंशैव ब्रह्मौदनान्थ्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजा-पंतिर्वा ओदनः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं यज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादेश भवन्ति। द्वादेशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति॥६९॥

एष वै विभूनीमं युज्ञः। सर्व र ह वै तत्रं विभु भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रभूर्नामं युज्ञः। सर्वर्५ ह वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर्धं ह वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेनु यर्जन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं यज्ञः॥७०॥

सर्व ह वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेन यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नाम यज्ञः। सर्व ५ ह वै तत्र विधृंतं भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै व्यावृत्तो नामं युज्ञः। सर्वर्५ हु वै तत्र व्यावृत्तं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं यज्ञः। सर्वर् ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतेन यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै तेंजस्वी नाम यज्ञः। सर्वर्५ ह वै तत्रं तेजस्वि भंवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्चसी नामं यज्ञः। आ ह वै तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। पृष वा अंतिव्याधी नामं युज्ञः। आ हू वै तत्रं राज्न्योंऽतिव्याधी जांयते। यृत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। पृष वै दीर्घो नामं युज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यृत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। पृष वै क्रुप्तो नामं युज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यृत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते॥७२॥

पर्यस्वात्रामं युज्ञः प्रतिष्ठितं भवित् युज्ञैतनं युज्ञेन् यर्जन्ते पद्गं (एष वे विभूः प्रभूरूर्जन्वान्पर्यस्वान् विधृतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्षस्यतिव्याधी दीर्घः क्कुप्तो द्वार्दशः॥॥————[१९]

तार्प्यणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन्र् समर्थयन्ति। यामेन् साम्नां प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। युमुलोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वै पंशूनार रूपम्। रूपेणेव पुशूनवं रुन्धे। हिर्ण्युक्शिपु भंवति। तेजसोऽवंरुख्ये॥७३॥

रुक्मो भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वो भवति। प्रजापंतेरास्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिंरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजा-पंतेरर्श्वः। इममेव लोकं तार्प्येणांऽऽप्नोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासनं। दिवर् हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुकोणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। पुतासांमेव देवतांनार सायुंज्यम्। सार्षितार्र समानलोकतांमाप्नोति। योऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥ अवंरुप्या आप्रोत्युष्टौ चं॥———[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुव्रगे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्चः श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तैंऽब्रुवन्। यन्नो नैंष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वः सव्येत्याह्वंयन्ति। तस्मादश्वे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्श्वयदरुरासीत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजाँ-थ्सम-जंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेयोनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुप्वपंति। योनिमन्तमेवनमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाँम्। यदंकिश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाँम्। यदंकिश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधैंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोति। तावंकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अथो अर्काश्वमेधयोरेव प्रति तिष्ठति॥७८॥
नामं करोति सूर्योऽग्नेयांनिरायतंनश्वारि च॥—————[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। तमालभ्योपावसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इतिं। एकं वा एतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आर्लभ्यते। यत्प्रजा-पंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादर्श्वः। यथ्सुद्यो मेधोऽभवत्॥७९॥

तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वमाशुं भवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्बोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानिं सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौंऽश्वम्धेन् यजंते॥८०॥

य उं चैनम्वं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। यज्ञम्व। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। काम्प्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतुत्वमंकामयन्त। तेऽमृतुत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तौत्प्राजापत्यमृष्मं तूंपरं बंहरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्याऽऽध्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनौऽऽ-प्रोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन् यज्ञेते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥ मधोऽभंव्यज्ञंत एति वेदं॥——[२२]

यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्सायं प्रांतर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पुदे वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। दर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंर्शपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य पदेपंदे जुह्नित। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नित॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जुहोत् त्रीणं च॥\_\_\_\_\_[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मे युञ्जन्ति तेजसाऽपंप्राणा अपश्रीरूष्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञकृतुभिरपृश्रीश्रांह्मणौ सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्ताप्र्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितरं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शतिः॥२३॥

प्रजापंतिरुस्मिंक्ष्रोक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत मुहान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर्र हु वै तत्रु पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चृत्वार्यशीतिः॥८४॥

प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

## हरिं: ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

## ॥ प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यीं अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभूर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देवहिंतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्वस्करिर्द्विया। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वः। देवीः पंजन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपार्श्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्यंष्णिम्पा रघम्ं। अपाँघामपं चावर्तिम्। अपंदेवीरितो हिंत। वर्ज्रं देवीरजींताङ्श्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

8]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादत्ते। सर्वस्माद्भवंना-द्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं कालविशेषंणम्। नदीव् प्रभवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सोरुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सरङ् श्रिंताः। अणुशश्च मंहश्रश्च। सर्वे समवयन्त्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः सन्न निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्भिश्च। सुमारूढः प्रदृश्यते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यते। पटरों विक्लिधः पिङ्गः। एतद्वंरुणुलक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यते। सहस्रं तत्रु नीयते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्रं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तेनिद्रयाणि। जुल्पितं त्वेव दिह्यंते। शुक्रकृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामंयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजुतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रिह रातिरस्तिविते। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृषावंः। नाऽऽदित्यः संवथ्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवथ्सरस्य प्रियतंम र रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुंरुष्वेति। तमाहरंणं द्यात्॥७॥

۶]

साक्ञानारं सप्तथंमाहुरेक्जम्। षडुंद्यमा ऋषंयो देवजा इतिं। तेषांमिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेंजन्ते विकृंतानि रूपशः। को न् मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदींषते। यस्तित्याजं सखिविद्र सखांयम्। न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदीरं शृणोत्यलकरं शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमांनः। विनंनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्रकृष्णौ च् षाष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्रदंक्षः। वसन्तो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सवितुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चे परि रक्षेतः। पृता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतं दुप्द श्यंते। पृतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तित्रबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणां ऽऽवर्तते संह। निजहंन पृथिवी स्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासार्साः

आदित्यानां निबोधंत। संवथ्सरीणं कर्म्फलम्। वर्षाभिर्दंदतार् सह। अदुःखो दुःखचंक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दृश्यंते। शीतेनांव्यथंयन्निव। रुरुदंक्ष इव दृश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रंड्श्यन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रंड्श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

₹]

अक्षिंदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्द्रणं नास्ति। ऋभूणां तित्रुबोधंत। कनकाभानिं वासार्सा। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। शरद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो म्रुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैवंस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कप्दिनः। अनुद्धस्य योथस्यंमानस्य। नुद्धस्यंव लोहिनी। हेमतश्चश्चंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवंलोकेषु। मृनूनांमृद्कं गृंहे। एता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वत्पसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्मं सप्रथा आवृंणे॥१४॥

[8]

अतिताम्राणि वासार्सि। अष्टिवंजिश्तिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रंहर्न्ति। अग्निजिंह्वा असश्चंत। नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धर्नुरार्त्निः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्निरूपेण। धृनुज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदेन्द्र्धनुं-रित्युज्यम्। अभवंर्णेषु चक्षते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्ब्विः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृग्योंऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृग्येणं यज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिरुः प्रतिद्धाति। नैन र् रुद्र आरुंको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं ने वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानभिवहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्श्शुमतीमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः। आवर्तमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् पंरिवृश्चति। पृथिंव्युर्शुमंती। ताम्नववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यांन्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मैं द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वंर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलांन्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर संनिर्वचनाः॥१९॥

अारोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषीमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमातपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यपोऽष्टमः। स महामेरुं न जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिर्ल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कलं चित्रभांन्। यस्मिन्थ्सूर्या

अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमृति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्चो-तिर्लभुन्ते। तान्थ्सोमः कश्यपादधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृंदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पञ्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेंरुं गृन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवेर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजुहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्रितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहाति्रिंतपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तानन्वेति पथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमातपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

सप्त होतार ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये सप्त। तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भ्राज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्मावं इन्द्र ते शत॰ शतं भूमीः। उतस्युः। नत्वां वज्रिन्थ्सहस्र॰ सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिंता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

केदमभ्रं निविशते। कायर् संवथ्सरो मिथः। काहः केयं देव रात्री। क मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्रुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविशन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्रौण्यपः प्रेपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये सुमाहिता। अनवर्णे इंमे भूमी।

इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तरा भूतम्। येनेमे विंधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंथ्सस्य वेदंना। इरांवती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों म्यूखैंः। किं तिद्वष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एकों युद्धारंयद्देवः। रेजतीं रोदसी उभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीपिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यमंमायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते येमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽसतो गृहान्॥३०॥

कृश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्घन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्दे-शेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्रवैः। तेऽशरीराः प्रपद्यन्ते। यथाऽपुण्यस्य कर्मणः। अपाण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमापद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तें वास्वैः। अपैतं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। स खल्वैवंं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वांसवाः। रोहंन्ति पूर्व्यां रुहंः॥३२॥

ऋषिर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरिति। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भृयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नर्यापाश्च। पङ्किरांधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति। यथर्त्वेवाग्नेरर्चिवंणंविशेषाः। नीलार्चिश्च

पीतकाँचिंश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीकस्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिनुस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्वर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम र हुन्ति॥३५॥ य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिबिम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूर्यवर्चाः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च मंहादेवाः। रश्मयश्च देवां गरगिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिमाय सलिलान् तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुक्रंमिष्यामः। व्राहवंः स्वतुपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽ-शिमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तभिवां तैरुदीरिताः। अमूँल्लोकान-भिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जुमदंग्निमकुर्वत। जुमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरैः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नेः प्रदिशो दिशेः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञाये। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नों अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

 $[\, eta \,]$ 

सहस्रवृदियं भूमिः। पुरं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनासृत्या। विश्वस्यं जगृतस्पती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। सुरमां इति स्रीपुमम्। शुक्रं वामुन्यदांजतं वामुन्यत्। विषुरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वां पूषणाविह रातिरंस्तु। वासांत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौं। द्यावांभूमी चरथंः स्थ सर्खायौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवं मे। शुभस्पती आगतर्थ सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेषे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूंहथुर्नोभिरात्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षपुद्भिरपोदकाभिः॥४२॥

तिसः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गैः। समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैंः शतपिद्धिः षडिश्वैः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चैव। सविता-रेपुसोऽभवत्। त्य सुतृप्तं विदित्वैव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृफ्सुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रुक्षसांनन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थों अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहुर्गर्भं द्याथे॥४४॥

तयोर्तौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविसृष्टो। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तौ वृथ्सौ। अग्निश्चांऽऽदित्यश्चं। रात्रेर्वथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्योऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेय रात्रीं गृर्भिणीं पुत्रेण् संवंसति। तस्या वा एतदुल्बणम्। यद्रात्रौं रृष्मयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्। एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजयिष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृथ्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

प्वित्रंवन्तः परिवाज्मासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षिति व्रतम्। महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सुद्ये

ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षेत्रैः शङ्कृतोऽवसन्। अथं सिवतुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निर्हितास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुर्हचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षेत्रमेति। तथ्संवितुवरिण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ सर्वधातमम्। तुर् भगस्य धीमहि। अपागूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्था सम्भंविष्यामः। नाम नामैव नाम मे॥५०॥

नपुरसंकं पुमा्ड्स्र्यस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षतः। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यहं विभुः। स्त्रियः सृतीः। ता उंमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वात्रविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमंनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनंः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादिंतिः। हसित र रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवृलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव् विद्धिं तत्। अतृष्युङ्स्तृष्यंध्यायत्। अस्माज्ञाता में मिथू चरन्नं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतंनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिह्नो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने र्थं तिष्ठ। एकाँश्वमेक्योजनम्। एकचर्न्नमेक्धुरम्। वातध्रांजिगृतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षों यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंता इश्वाग्नेः। रथे युंका-ऽिधतिष्ठंति। एकया च दशभिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये वि श्रित्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिश्रेशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यंगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यते॥५६॥

एवमेतं निंबोधता आ मृन्द्रैरिन्द्र हरिभिः। याहि मयूरेरोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। दुधन्वेव ता इहि। मा मृन्द्रैरिन्द्र हरिभिः। यामि मयूरेरोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। निधन्वेव तां (२) इमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरसमायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृन्नैः। इन्द्राऽऽयांहि सहस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवृथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचेरास्त्व। सुब्रह्मण्यो स्पुब्रह्मण्यो स्पुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वेस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथा-ऽसिताः। दण्डहस्ताः खादग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्तः स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वस्त्पेरिहाऽऽगंताम्। रथंनोदक्वर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्ध्स च। कालावयवानामितः प्रतीच्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्थसां चुक्रे। तस्यैषा भवति। वाश्रेवं विद्युदिति। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण उपस्तरणमिस। ब्रह्मण उपस्तरणमिस। ब्रह्मण उपस्तरणमिस।

[85]

## [अपंक्रामत गर्भिण्यंः]

अष्टयोनीमृष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्नीमिमां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्न्तिरक्षिम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीमृष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्नीमुमूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीम् षु। अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्नः परि। देवां उपंप्रैथ्सप्तभिः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रैरिदंतिः। उपुप्रैत्पूर्व्यं युगम्। प्रजायै मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरदिति। तानन्कीमध्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चौर्यमा चे। अर्शश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वा ईश्चेत्येते। हिर्ण्यगुर्भो हर्सः शुंचिषत्। ब्रह्मजज्ञानं तदित्पदमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथ पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गंर्भिण्यः]

योऽसौं तुपन्नुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा मैं प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौंऽस्तुमेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायास्तमेतिं। मा मैं प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायास्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योंऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानौं प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत मोथ्सृंपत॥६५॥

ड्मे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। अय संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपंति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपंति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुंन रिबुम्॥६७॥

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतां-मिभुन्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम॥६८॥

-[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुंन र रीढ्वम्॥६९॥

[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीकृस्य। प्रभाजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः

रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि॥७०॥

अवपतन्तानार रुद्राणार् स्थाने स्वतेर्जसा भानि। रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वास्किवैद्यतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजताना रुद्राणीना इस्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणा । रुद्राणीना इंस्थाने स्वते जंसा भानि। श्यामाना । रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितीना रुद्राणीना इस्थाने स्वतेजंसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अवपतन्तीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युतीना र रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीह्नम्॥७१॥

[evs]

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीद्वम्॥ ७२॥

**-**[१८]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आयस्मिन्थ्यप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

2]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोंजवसो वः पितृभिदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमा व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपेरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पंश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तिरक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमा दिक्षु। नक्षत्राणि स्वलोके। पृवा ह्येव। पृवा ह्यंग्ने। पृवा हि वायो। पृवा हींन्द्र। पृवा हि पूषन्। पृवा हि देवाः॥७४॥

-[२०]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्वस्क्रिष्या। वाय्वश्वां रिष्म्पतंयः। मरींच्यात्मानो अद्गुंहः। देवीर्भुवन्सूवंरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वंः॥७५॥ देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजींता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैं स्तुष्टुवा स् संस्तृन्भिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्वातधां हि। स्माहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमुडीका सरंस्विति। मा ते व्योम सन्दिशि॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भविति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भविति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भविति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भविति। योंऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥ आपो वै वायोग्यतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपा-मायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य पृवं वेदं। योंऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पृवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतेनम्। आयतेनवान् भवति। य पुवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवृथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पृवं वेदं। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥ ड्मे वै लोका अपस् प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसन्। सूर्ये शुक्रर समार्भृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समार्भृताः। जानुद्ग्नीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्ग्नम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि-हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पस् ह्ययंं चीयतें। असौ भुवनेऽप्यनाहिताग्निरेताः। तम्भितं पृता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्विति। पृतद्धे स्मृ वा आंहुः शिष्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। सृंवृथ्स्रं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्यत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्रिं चिनुते। इममां रुणकेतुकम् ग्रिं

चिंन्वान इतिं। य एवासौ। इतश्चाऽमुतंश्चाऽव्यतीपाती। तमितिं। यौंऽग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्भवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्भवति। य एवं वेदं॥८९॥

२२]

आपो वा इदमांसन्थ्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकंः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तर्मनंसि कामः समंवर्तत। इद स्रंजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तद्वेषाऽभ्यनूँक्ता। काम्स्तदग्रे समंवर्त्ताधि। मनसो रेतंः प्रथमं यदासीत॥९०॥

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनी्षेति। उपैनन्तदुपंनमति। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुह्वा। शरींरमधूनुत। तस्य यन्मा ५ समासींत्। ततोंऽरुणाः कृतवो वातंरशुना ऋषंय उदंतिष्ठन्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखानुसाः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गाः सम्भूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्ं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपं:॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्न इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इति॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुत्तरत उपादंधात्। एवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूषन्नितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथां रुणः केतु रुपिरंष्टा दुपादंधात्। एवा हि देवा इतिं। ततों देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धवां प्रस्परस्श्रोदंतिष्ठन्। सोर्ध्वा दिक्। या विप्रुषो विपरांपतन्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा रेसि पिशाचाश्रोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते परांभवन्। विप्रु झ्रो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९६॥

आपों हु यह्नंहृतीर्गर्भमायत्रं। दक्षं दर्धाना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त् सर्गाः। अद्भो वा इदश् समभूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविंशत्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानिं। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च।

प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवुरुद्धां। तदेवानुप्रविंशति। य एवं वेदं॥९८॥

विद्युत्। स्तनयिनुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति।

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चुत्वारि वा अपार रूपाणि। मेघों

ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वै ब्रंह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त पृव ब्रंह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रंह्मवर्चसितंरः॥९९॥ कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिणृत उपंदधाति। पृता वै तेंज्ञस्विनीरापंः। तेजं पृवास्यं दक्षिणृतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणो-ऽर्थस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा प्रता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूजंतीरिव धावंन्तीः। ओजं एवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अत्रृं वा आपंः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रृं जायंते। तदवंरुन्थे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरशुना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥ तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा १ शत्रापं हि। सुमाहितासो सहस्रधायंसमिति। श्तरांश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतमग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[8]

जानुद्धीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संर्वत्वायं। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधुमवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य समेध्ये। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मा-दितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्वस्क्रर्स्बया इति। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्च-चित्रंय उपदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तं चिन्ते। लोकं पृंणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वे विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतमृग्निं चिन्ते। य उंचैनमेवं वेद॥१०६॥

अग्निं प्रणीयोपसमाधाये। तम्भित पुता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चातुर्मास्येषुं। अथौ आहुः। सर्वेषुं यज्ञऋतुष्वितिं। अथं ह स्माहारूणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कमृग्निं चिन्ते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। सावित्रम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। नाचिकेतम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। चेश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। वैश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कमभिं चिंनुते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। इममांरुण-केतुकम्भिं चिन्वान इतिं। वृषा वा अग्निः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हृन्येतौस्य यज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयते। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषौँऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावाँन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। सुंज्ञानुं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव सुंज्ञानेऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिंन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरेति। अभिचर ईश्चिन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहंरति। स्तृणुत एनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकांमः स्वर्गकांमश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्तिं। तदवंरुन्धे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षंति न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तरित्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुंर्यात्। न निष्ठींवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषौंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुंष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठेतं। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनं-मोद्कानि भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

२६]

ड्मानुंकं भुंबना सीषधेम। इन्द्रंश्च विश्वं च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवृता तुनूनाम्। आप्नंवस्व प्रप्लंबस्व। आण्डीभंवज्ञ मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखिन्धनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरीचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयन्। ते ते देहं कंल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वंप्त। अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः। सूर्येण सयुजीषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंत्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्रयोध्या। तस्यार्र हिरण्मयः कोशः। स्वर्गी लोको ज्योतिषाऽऽवृतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मैं ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजंमाना ५ हरिणीम्। युशसां सम्प्रीवृंताम्। पुर ५ हिरण्मंयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिंता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमा्री मृन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अश्वतांसः श्वेतासश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेक्षन्ते। इन्द्रंमृग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्तिं। रृश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोका-दंमुष्माच। ऋषिभिरदातपृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातंः। येऽत्र स्थ पुंराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यंक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च् कृष्टंजाः। कुमारीषु कुनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु शुरदः॥११९॥

अदो यद्वह्मं विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। कामप्रयवंणं मे अस्तु। स ह्येवास्मि सुनातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहित॥१२०॥

विशींष्णीं गृध्रंशीष्णीं च। अपेतों निरुऋति १ हंथः। परिबाध इ श्वेंतकुक्षम्। निजङ्घ ५ शबुलोदेरम्। सु तान् वाच्यायया सुह। अग्ने नाशंय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चे दीधिरे। रथेन कि श्रुकावंता। अग्ने नाशंय सन्दर्शः॥१२१॥

पूर्जन्याय प्रगायत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नो यवसंमिच्छतु।

इदं वर्चः पुर्जन्याय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तर्नतद्युयोत। मयोुभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पुला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गवांं कृणोत्यर्वताम्। पर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥ पुनंमामेत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भंगंः। पुनर्ब्राह्मणमेतु

मा। पुनुर्द्रविंणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्। यदोषंधीरप्यसंरद्यदापंः। इदं तत्पुनरादंदे। दीर्घायुत्वाय वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म् आजायते पुनः। तेनं माम्मृतं कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥

अद्धस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोंऽधेहि सपत्नान्नः। ये अपोऽश्नन्ति केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्ववणः। रथर् सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋर सहंस्राश्वम्। आस्थायायांहि नो बलिम्। यस्मैं भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनुं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिभृतोऽन्नंमुखीं विराजम्ं। सुदुर्शने चं क्रौश्चे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगमृन्ता। सुर्हार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोंऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलिर् हरैत्। हिरण्यनाभयें वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि॰ हृत्वोपंतिष्ठेत। क्षृत्रं क्षृत्रं वैष्ठवणः। ब्राह्मणां वयुङ् स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुञ्जीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्ये सीदेति। अथ तमग्निमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्भुवः स्वः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हृतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुञ्जीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्था नं सिद्धान्ते। यस्तें विघातुंको भ्राता। ममान्तर्हृदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रुपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मयि

स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामांय महाम्। कामेश्वरो वैश्ववणो दंदात्। कुबेरायं वैश्रवणायं। महाराजाय नर्मः। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा १ शतथां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पर्शी। चतुर्थकालपानेभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरग्निं परिचरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमित्येतेनानुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभि-रद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापतये। चन्द्रमसे नक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संबंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवृर्यवंदादेशः। अरुणाः काँण्डऋषयः। अरण्येऽधी-यीरन्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वें जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक ए सं इस्पर्श्य। तमाचौर्यो दुद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमपवुर्गे। धेनुर्दक्षिणा। करसं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्कम्। यंथाशक्ति वा। एव इस्वाध्यायं धर्मेण। अरण्यें ऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाुक्षभिर्यजन्ताः। स्थिरैरक्नैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यी अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ ॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्व्यये नमः पृथिव्ये नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुंराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां व्यक्ष् स्वृगं लोकमेंष्यामा वयमेंष्याम् इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमृह्यक्ष्रस्ते न प्राजांनुक्ष्रस्ते पराऽभवन्ते न स्वृगं लोकमायन् प्रसृतेन् वै युज्ञेनं देवाः स्वृगं लोकमायन्न प्रसृतेन् वै युज्ञेनं देवाः स्वृगं लोकमायन्न प्रसृतो ह् वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मांद्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजयेद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासो वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमिति यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीतः संवीतं मानुषम्॥१॥

रक्षारंसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिविरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधयुष्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तर् ह वा तानि रक्षार्शस्यादित्यं योधयन्ति यावदस्तमन्वंगात्तानि ह वा पुतानि रक्षारंसि गायत्रियाऽभिमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदं ह

वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सुन्ध्यायाँ गायत्रियाऽभिमित्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपों वुन्रीभूत्वा तानि रक्षा रेस मन्देहारुंणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रंदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानमवंधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राँह्मणो विद्वान्थ्सकर् भद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

यद्देवा देवहेळेनं देवांसश्चकृमा वयम्। आदिंत्यास्तस्मांन्मा

मुश्चतर्तस्यर्तेन मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंतमूदिम। तस्मान इह मुंश्रत विश्वे देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन त्वर संरस्वति। कृतान्नः पाह्येनंसो यत्किं चार्नृतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणौ सोमों धाता बृहस्पतिः। ते नों मुश्चन्त्वेनसो यद्न्यकृतमारिम। सुजातुशुरुसादुत जामिशुरुसाज्यायंसः शरसादुत वा कनीयसः। अनाधृष्टं देवकृतं यदेनस्तस्मात् त्वमस्माआंतवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्मार् शिश्रैर्यदनृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्रतु चकृम यानिं दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अर्जहादरातीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आक्षि। यत्कुसीद्मप्रतीत्तं मयेह येनं यमस्यं

रायोऽनुंमार्षु तुन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

निधिना चरामि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष यद्नतिरिक्षं यदाशसातिकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने त्वमंग्ने अयासि॥४॥
——[३]

यददींव्यन्नृणमहं बभूवादिंथ्सन्वा सञ्जगर जनेंभ्यः। अग्निर्मा

तस्मादिन्द्रंश्च संविदानौ प्रमुंश्चताम्। यद्धस्तांभ्यां चुकर्

किल्बिषाण्यक्षाणां व्युम्पिजिघ्नमानः। उग्रं पृश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंप्रस्पसावनंदत्तामृणानिः। उग्रं पृश्ये राष्ट्रभृत्किल्बिषाणि यद्क्षवृत्तमनुंदत्तमृतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्समानो यमस्यं लोके अधिरञ्जरायं। अवं ते हेळ उद्त्तमिम्ममं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्रे स त्वं नो अग्रे। सङ्कंसको विकुंसको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूराद्रूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमस्मे प्रसुंवामिस। दुःशुर्सानुशुर्साभ्यां घृणेनानुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमस्मे प्रसुंवामिस। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंनमिह मनसा सर शिवेन। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यमुग्निवरिण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति

जरंदिष्ट्रियंथाऽसंत्। अग्र आयूर्षेष पवस् आ सुवोर्ज्ञिमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाम्। अग्रे पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्वियं मिय् पोषम्॥६॥
अग्निर्ऋषिः पवंमानः पाश्चंजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपलान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपलान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व।

अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमांनो वय इस्याम् प्रणुंदा नः सपत्नान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सिति। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह वस्वस्मभ्यमार्भर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च

निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपिं दध्मसि॥७॥

परायक्ष्म रं सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने हविषों जुषाणो

घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं

पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों

वरुण स॰शिंशाधि। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वें देवा

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात। उषाश्च तस्मै निम्रुक् सर्वं पाप॰ समूहताम्। यो नः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेंषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा्ड्स्तानंग्ने सन्दंह या इश्वाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्साँच सर्वाङ्स्तान्मंष्मषा कुंरु। सर्शितं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्। सर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाह् अंतिरमुद्वर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म आगात्पुनश्चक्षः पुनः श्रोत्रं म आगात्पुनः प्राणः पुनराकूंतं म आगात्पुनिश्चित्तं पुनराधीतं म आगात्। वैश्वानरो मेऽदंब्धस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वां॥८॥

वैश्वानराय प्रतिवेदयामो यदींनृण संङ्गरो देवतांसु। स एतान्पाशांन् प्रमुचन् प्रवेद् स नों मुञ्जातु दुरितादवद्यात्। वैश्वानरः पर्वयात्रः पवित्रैर्यथ्संङ्गरमभिधावाँम्याशाम्। अनांजानन्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्सुंवामि। अमी ये सुभगें दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामृतद्वंद्वकुमोचनम्। विजिंहीर्ष्व लोकान्कृंधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वांन् पथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिंगृभ्णीत विद्वान्प्रजापतिः प्रथमजा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं जुरसंः पुरस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्तु येषां दत्तं पित्र्यमार्यनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छाद्वातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वाँ पूर्तं परिविष्टं यदुग्रौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती सर्रभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनेसो गार्हंपत्य उन्नो नेषद्दुरिता यानि चकुम। भूमिर्माताऽदितिर्नो जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षमभिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायांम्। अुश्लोणाङ्गेरह्रंताः स्वुर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदाँस्यन्नुत वां करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्प्रिम् तस्मांदनृणं कृणोतु। यदन्नमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मांदनृणं कृणोतु। युन्मयां मनसा वाचा कृतमेनः कदाचन। सर्वस्मात्तस्मान्मेळितो मोग्धि त्व १ हि वेर्त्थं यथातथम्॥१०॥ वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रमणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयो-

वातंरशना हु वा ऋषंयः श्रमणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयो-ऽर्थमाय् इस्ते निलायंमचर् इस्तेऽनुप्रविशुः कूश्माण्डानि ता इस्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषीं नब्रुवृत्रमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धाँम्नि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्यवित्रं नो ब्रूत येनारेपसंः स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यदेवा देवहेळेनं यददीं व्यञ्चणम्हं बुभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंर्वाचीन्मेनौं भूणहृत्यायास्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुह्यात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डैर्जुंह्याद्योऽपूंत इव मन्येंत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चति यदंर्वाचीनमेनौ भ्रूणहत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनों दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतित जुंहोति संवथ्सरं दींक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मार्स दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्वि शाति र रात्रींदीक्षितो भंवति चतुर्वि १ शतिरर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवा ८ ऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भंवति द्वादंश मासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्रात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवाऽऽत्मानं पुनीते न मा॰समंश्रीयात्र स्नियमुपेयात्रोपर्यासीत जुगुंफ्सेतानृंतात्पर्यों ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवागू राजन्यंस्याऽऽमिक्षा वैश्यस्याथी सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः

सक्तूंन् घृतमित्यनुंब्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

अजान् ह वै पृश्नीई्स्तपुस्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषंयोऽभवन्तदधीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकामास्त एतं ब्रंह्मयज्ञमंपश्यन्तमाहंरन्तेनांयजन्त यदचोऽध्यगीषत ताः पर्यआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजू ५ षि घृताहुंतयो यथ्सामांनि सोमांहृतयो यदर्थवाङ्गिरसो मध्वांहृतयो यद्ग्रांह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशुर्सीर्मेदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुर्थं पाप्मानमपाँघ्रन्नपंहतपाप्मानो देवाः स्वुर्गं लोकमायुन् ब्रह्मणुः

सायुंज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते महायुज्ञाः संतति प्रतायन्ते सतित सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पिंतृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदुग्रौ जुहोत्यपि सुमिधुं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा कुरोत्यप्यपस्तित्पंतृयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बुलि॰ हरित् तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्रौह्मणेभ्योऽन्नं ददांति तन्मंनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वौध्यायमधीयीतैकामप्यृचं यजुः सामं वा तद्बंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यज्रंषि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्गौह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराशृष्ट्सीर्मेदंसः कूल्यां अस्य पितॄन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्द्योऽधीते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवार्ध्स्तंपयिति यद्यजूरंषि घृताहुंतिभिर्यथ्सामानि सोमाहुतिभिर्यदथंवाङ्गिरसो मध्यांहुतिभिर्यद्वाँह्यणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराशृष्ट्सीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवार्ध्स्तंपयिति त एनं तृप्ता आयुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

ब्रह्मयुज्ञेनं युक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उंपवीयोंपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेहिः पंरिमृज्यं सकुद्पस्पृश्य शिरश्चक्षंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजू ५ षि यथ्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसौ ब्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशरसीः प्रीणाति दर्भाणां महद्रुपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना ५ रसो यद्दर्भाः सर्रसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यर्जुस्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पंरममक्षरं तदेतद्दचाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरें परमे

व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा

| द्वितीयः | प्रश्नः | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |  |
|----------|---------|------------|-----------|--|
|          |         |            |           |  |

[१३]

केरिष्यिति य इत्ति द्विदुस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायुंङ्का भूर्भुवः स्विरित्यांहैतद्वे वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छोंऽर्धर्चशोऽनवानः संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातयैव प्रतिपदा छन्दाः सि प्रतिपद्यते॥१५॥

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आह्रिय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंन्नुत व्रजंन्नुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयींतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यों भवति य एवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥१६॥

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्राँह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वरुंणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षः सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च

ददांति सा दक्षिंणा॥१७॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्षः हिवः स्तंनियुवर्षंषद्वारो यदंवस्फूर्जिति सोऽन्वंषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तन्यंत्यवस्फूर्जिति पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपों हि स्वाध्याय इत्युंत्तमं नाकरं रोहत्युत्तमः संमानानां भवित यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वगं लोकं जंयित तावंन्तं लोकं जंयित भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्युं जंयित ब्रह्मणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

8]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽश्चिर्यदेशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्महारात्र उपस्युदिते व्रज्ङ्स्तिष्ट्वा-सीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां ह्योका अंयति सर्वां ह्योकानं नृणो ऽनुसर्श्वरित् तदेषा न्युंका। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिङ्स्तृतीयें लोके अंनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पिंतृयाणाः सर्वांन्पथो अंनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपाप्नाहातीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिर्दक्षिणानां ब्राह्मणेनं ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दंसा स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽन्थमुजत्यभांगो वाचि भवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्युंक्ता। यस्तित्याजं सखिविद सखायं न तस्यं वाच्यपि

| द्वितीयः | प्रश्नः | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |  |  |  |
|----------|---------|------------|-----------|--|--|--|
|          |         |            |           |  |  |  |

भागो अस्ति। यदी र शृणोत्यलक र शृणोति न हि प्रवेद सुकृतस्य पन्थामिति तस्माँथ्स्वाध्यायोऽध्येत्व्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अर्वाङ्कृत वा पुराणे वेदं विद्वार संम्भितो वदन्त्यादित्यम्व ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च ह्रसमिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेद्विदि ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँद्वाह्मणेभ्यो वेद्विद्यो दिवे दिवे नमंस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

[१५]

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा

त्रिरात्रं वा सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वर स्पृणोत्यात्मा हि वरं:॥२०॥——[१६]
दुहे ह् वा एष छन्दा से से यो याजयंति स येन यज्ञकृत्नां याजयेथ्सोऽरंण्यं परेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवैन्मधीयत्रासीत तस्यानश्नं दीक्षा स्थानम्प्रसद आसंनर सुत्या वाग्जुहूर्मनं उपभृद्धृतिर्भ्रवा प्राणो हिवः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः

कृतिधावंकीणीं प्रविशतिं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों

मरुतंः

प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

गृह्णातिं याजियंत्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्विः स्वाध्यायं वेदमधीयीत

ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्यायाः रात्र्यामग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कार्माय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कार्माय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंमुमृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते हुत्वा प्रयंताञ्जलिः कर्वातिर्यङ्काग्निमभिमंत्रयेत सं मांऽऽसिश्चन्तु मरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयमग्निः सिश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रति हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरथ्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरित त्रिरभिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येंत स इत्थं जुंह्यादित्थमभिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मानमायुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरः॥२२॥

प्राणैरिन्द्रं बलेन बृह्स्पितं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायेश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नाव्पश्यंति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेजंसा कश्यंपस्य यस्मै नमस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हनुंर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्ह्रदंय संवथ्सरः प्रजनंनमश्विनौ पूर्वपादांव्ति विष्रो मित्रावरुणावपर्पादांवि शिः

पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत् इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभंयं चतुर्थः स वा एष दिव्यः शाँकुरः शिशुंमार्स्तः ह् य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित् जयित स्वर्गं लोकं नाध्विन प्रमीयते नाफ्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नान्पत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवित ध्रवस्त्वमंसि ध्रवस्य

क्षितमस् त्वं भूतानामधिपतिरस् त्वं भूताना् श्रेष्ठोऽस् त्वां भूतान्युपं पूर्यावर्तन्ते नमस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥————[१९] नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां पृतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमे उध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्राये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नों अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बर्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतमग्निः। वार्क्यातिरहोताः। मनं उपवक्ता। प्राणो हविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेर्म ते नामं। विधेस्त्वमस्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंं पिबत्। आऽस्मास्ं नृम्णन्थाथ्स्वाहाँ॥१॥

्र अध्वर्युः पश्च च॥ पृथिवी होतां। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रोंऽग्नीत्। बृहस्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मै। वाचस्पतिः सोर्मं पिबतु। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दशं॥. -[२] अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्य पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र

सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहां॥३॥ अग्निर्होताऽष्टौ॥.

सूर्यं ते चक्षुं। वार्तं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा।

-[ξ]

अच्छिंद्रया जुह्वाँ। दिवि देवावृध् होत्रा मेरेयस्व स्वाहाँ॥४॥

स्वं वे नवं॥——[४]

महाहंविर्होताँ। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्।

अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी । शरीरैः। वार्चस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा।

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातों ऽध्वर्युः। आपोऽभिगुरः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भुवः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

वाचीता नवं॥

ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशंः। युज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशंः। भूर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां पृश्न्युष्टिं यशः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुंर्होता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां पृश्न्युष्टिं यशः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पृश्न्युष्टिं यशः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥ चन्द्रमाः षड्ढांता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टुं यशः। ऋतवंश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्ं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौरष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां पृश्न्यृष्टिं यशः। अना्धृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेजस्वी। स में ददातु प्रजां पृश्न्यृष्टिं यशः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इद सर्वम्। स में ददातु प्रजां पृश्न्युष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥ पृत्विष्ठा प्रणार्थं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥————[७]

अग्निर्यजुंभिः। सुविता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थामुदैः। मित्रावरुंणा-वाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियेर्ग्निभिः। मुरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षंणीभिः। ओषंधयो बुर्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेभ्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अह श्रद्धयां॥१२॥ क्षिया पात्रेषे च॥————[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पुत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगंती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतेरनुंमितः।

मित्रस्यं श्रद्धाः स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो

रोहिणीः ऋषीणामरुन्धतीः पूर्जन्यस्य विद्युत्। चर्तस्रो दिशः।

चर्तस्रोऽवान्तरिद्याः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चा
पंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुद्वश्वरकः पर्वः॥———[९]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिंगृह्णामि। राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिर्ण्यम्। तेनांमृतृत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामाय। कामो दाता॥१५॥

कामः प्रतिग्रहीता। कामर् समुद्रमाविश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। पृषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीरुसः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वासः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋंत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हस्तिनम्। गृन्धर्वाप्म्सराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओद्नम्। स्मुद्रायाऽऽपः॥१७॥ उत्तानायाँ क्षीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रव्नथा नाकमारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजां त्वा वरुणो नयत् देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामर् समुद्रमा विंश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषमपंः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥

सुवर्णं घर्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्याऽऽत्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्दद्दशंहोतार्मर्णे। अन्तः

अन्तः संमुद्रे मनसा चरन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मणें। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। शतर शुक्राणि यत्रैकं भवन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवन्ति। सर्वे होतारो यत्रैकं भवन्ति। स्मानसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमुग्निं जगेतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान स् सिवतारं बृह्स्पितिम्। चतुंरहोतारं प्रदिशोऽन् क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर रूपाणि विकुर्वन्तं विपृश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निर्हितं गुहांसु। अमृतंन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शृतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्याऽऽत्मा निर्हितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोरात्मानं कृवयो निर्चिक्युः। रिश्मभ् रेश्मीनां मध्ये तपन्तम्। ऋतस्यं पदे कृवयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभिर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नथं लोकान् विचष्टें। यस्याऽऽण्डकोशभ् शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्रभ् रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कुलां विचंक्षते। पाद् षड्ढांतुर्न किलांविविथ्से। येन्त्रवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्ढा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढांतारमृतुभिः कल्पमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चर्रन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्याऽऽत्मान॰ शत्धा चर्रन्तम्॥२४॥ इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्लंप्तः। परेण तन्तुं परिषिच्यमानम्। अन्तरांदित्ये मनंसा चरन्तम्। देवानाः हृदंयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण् उज्जभार। अर्कः श्लोतंन्तः सिर्रस्य मध्यैं। आ यस्मिन्थ्सप्त पेरंवः। मेहंन्ति बहुलाः श्लियम्। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। स हरिवंसुवित्तंमः। पे्रिरेन्द्रांय पिन्वते। बृह्धश्वामिन्द्र गोमंतीम्। अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। मह्ममिन्द्रो नियंच्छत्। शृत शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रृश्मिरिन्द्रेः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रेः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

पंटरी सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रंः कामव्रं देदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सिर्रस्य मध्यैं। अर्जस्रं ज्योतिर्नर्भसा सपंदिति। स न इन्द्रंः कामव्रं देदातु। सप्त युंअन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययमग्निर्दधातु। हरिंः पतङ्गः

एको अश्वी वहित सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनेर्वम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रैं। तपौ दीक्षामृषयः सुवर्विदंः। ततः क्षत्रं बलमोर्जश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिशमं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्युः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। शत्र सहस्राणि प्रयुतानि नाव्यानाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। परि सर्विमिदं जगत्। प्रजां पृशून्थनानि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमक्तमस्रंरस्य मायया॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचंक्षते। मरीचीनां पदिमंच्छन्ति वेधसंः। प्तङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्ध्वाऽवदुद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापितः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं युजपितिन्तर। ये ग्राम्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषाः सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आंर्ण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्ताः अग्रे प्रमुंमोक्तु देवः। प्रजापितः प्रजयां संविदानः। इडांयै सृप्तं घृतवंचराच्रम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आंर्ण्याः पृशवों

रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥ 

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वती

वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गलम्। पुरुष एवेद सर्वम्। यद्भूतं यच भव्यम्। उतामृतत्वस्येशानः। यदन्नेनातिरोहंति। एतावानस्य महिमा। अतो ज्याया ५श्च पूर्रुषः॥३२॥

पादौं ऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुर्रुषः। पादौँ उस्येहार्भवात्पुर्नः। ततो विष्वङ्क्ष्यंक्रामत्। साशनानशने अभि। तस्माहिराडंजायत। विराजो अधि पूर्रषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भूमिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण हविषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासी-दाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः। सप्तास्यांसन्परिधयः। त्रिः सप्त समिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तन्वानाः। अबेध्रन्पुरुषं पशुम्। तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्मौद्यज्ञार्थ्सर्वृहुतंः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्वेके वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्व ये। तस्मौद्यज्ञार्थ्सर्वहृतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दार्श्स जज्ञिरे तस्मौत्। यजुस्तस्मांदजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर्
तस्मात्। तस्माज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषुं व्यंदधुः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीद्नतरिक्षम्। शीष्णों द्यौः समवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रांत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्सतु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरं। नामानि कृत्वाऽभिवदन् यदास्तै। धाता पुरस्ताद्यमुंदाजहारं। श्राकः प्रविद्वान्प्रदिश्रश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भंवति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। युज्ञनं युज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते ह् नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥ पूर्वः पुर्वेऽज्ञतोऽज्ञायत कृतोऽकल्पयन्नासं हे चं (ज्यायानिष् पूर्वः। अन्यत्र पुर्वः॥॥—[१२]

अद्भाः सम्भूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजान्मग्रें। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥ तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरींचीनां प्दिमिंच्छिन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा असुन्वशें। हिश्चितं लुक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षेत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मनिषाण। अमुं मनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

भूती सन्भ्रियमाणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमाहुः। तं भूतीर् तम् गोप्तारंमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जरंन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आबुभूवं। सुन्धां च या संन्द्धे ब्रह्मणेषः। रमंते तस्मिन्नुत जीर्णे शयाने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वा श्वरन्ति जान्तीः। वृथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्नि हंव्यवाह् सिन्थ्से। त्वं भूर्ता मौत्रिश्वां प्रजानाम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवो म एधि। नमो वामस्तु शृणुत १ हवं मे। प्राणांपानावजिर १ स्थरंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यास्नामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानी। वधार्य दत्तुं तम्हर हंनामि। असंज्ञजान सृत आबंभूव। यं यं जुजान स उं गोपो अंस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। पुरास्यं भारं पुनरस्तंमिति। तद्वै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

हरिष् हर्रन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागांत्। अयंनं मा विवंधीर्विक्रमस्व। मा छिंदो

मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेंनाजनयुन्पुनः। कामेंन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यद्मीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नाधंमानो वृष्मं चंर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

|  | तृतीयः | प्रश्नः | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |
|--|--------|---------|------------|-----------|
|--|--------|---------|------------|-----------|

मृत्यवं वीरारश्र्वारि च। [१५]
त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भासि

रोचनम्। उपयामगृंहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

आ प्यायस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिर्भिः। भवां नः सप्रथंस्तमः॥४८॥

र्ड्युष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तींमुषस्ं मर्त्यांसः। अस्माभिरू नु प्रंतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहञ्च्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

\_\_\_\_\_\_\_[१९]
प्रयासाय स्वाहांऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय
स्वाहोंद्यासाय स्वाहांऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां

तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहाँ ब्रह्महृत्यायै स्वाहा सर्वस्मै स्वाहाँ॥५१॥
——————[२०]
चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तिनंम्ना पशुपति है

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नों अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रुकृद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयुः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वीमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों विदय्ये यशों विदय्ये तपों विदय्ये ब्रह्मं विदय्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदम्पुस्तरंणुमुपंस्तृण उपुस्तरंणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायें पशूनां भूयासं प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मध् वदिष्यामि मध्मतीं देवेभ्यो वाचमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्यैभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रुकृज्यो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म में द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायें पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मध् वदिष्यामि मधुमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास॰ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥ युअते मनं उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृहतो विंपश्चितः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सवितुः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अभ्रिरसि नारिरसि। अध्वर्कहे्वेभ्यः। उत्तिष्ठ

वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायें पशूनां

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सचाँ। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृताँ। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे म॰साथाम्। ऋद्धासंमद्य। मखस्य शिरं:॥३॥

मखायं त्वा। मखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णो। देवींर्वम्रीरुस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋष्ट्यासंमुद्य। मुखस्य शिर्रः॥४॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीृष्णे। इन्द्रस्यौजोऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीृष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुर्धेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मिये धेहि। मधुं त्वा मधुला केरोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पृदे स्थंः। गायुत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मुखस्य रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥
पुते शिरं ऋतावरीर्ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् शिरं शिरोऽसि नवं च॥————[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रणयोर्धुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं महिना दिवम्। मित्रो बंभूव सप्रथाः।

उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणी्धृतंः। श्रवों देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिवतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्यां। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहममुमां मुष्यायणं विशा पशुभिर्ष्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृणद्मि। त्रेष्ट्रभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृणद्मि। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृणद्मि। छृणत्तं त्वा वाक्। छृणत्तु त्वोक्। छृणत्तं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचंरिष्यामः। होतंर्घर्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशाविधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त क् सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैद्वैरनुंमतं मुरुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। सन्ो रुचं धेह्यहृंणीयमानः। भूभृंवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतंर्घर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहाँ। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सिव्ता मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणृतः। इन्द्रस्याऽऽधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्वंतिरुत्तरतः॥१४॥

मित्रावरुंणयोराधिंपत्ये। श्रोत्रंं मे दाः। विधृंतिरुपरिंष्टात्। बृह्स्पतेराधिंपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षुत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिंपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाृष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्रे अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपावसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्तामुजरां अयासंः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

स्ममा अंसि। विमा अंसि। उन्मा अंसि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-

रेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अर्ध ते स्याम। शुक्रं तें अन्यद्यंजुतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भद्रा ते पूषित्रिह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्तं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्जंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रैष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधुं॥१८॥

अनुक्तुंसादीदुत्त्तः पांहि प्रतिमा असि यज्ञतन्तें अन्यञ्जागंतम्स्येकं च॥————[arphi]

दश् प्राचीर्दशं भासि दिक्षणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदींचीः। दशोध्वां भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धृह्यहंणीयमानः। अग्निष्टा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्भिरुत्तर्तो रोचयत्वाऽनुष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वै-रुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मनुष्येषु। सम्राह्वर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगसि। रुचं मयि धेहि॥२०॥

मियं रुक्। दशं पुरस्ताँद्रोचसे। दशं दक्षिणा। दशं प्रत्यङ्घः। दशोदङ्कं। दशोध्वीं भांसि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घुमी रुचीय॥२१॥

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूंचीर्वसानः। आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवेनं सिवता। सर सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य समुग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवृत्रा। स॰ सूर्यणारोचिष्ट। धर्ता दिवो विभासि रजंसः। पृथिव्या धर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धर्ता। धर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥ गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पितेः प्रजानाम्। मितेः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। स॰ सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हि॰सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यंविष्ठ पाह्य॰हंसः। समेद्धार॰ शृत॰ हिमाः। तन्द्राविण॰ हार्दिवानम्। इहेव रातयः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दधांना। वीरं विदेय तवं सन्दिशं। माऽह॰ रायस्पोषंण वि योषम्॥२६॥ रोष्के स्वर्णं विवान हे ब्रिक्णोवा द्यांना हे बं॥———[७]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याँम्। पूष्णो हस्तौभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित् एहिं। सरंस्वृत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं।

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मंयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदत्रंः। सरंस्वित तिमिह धातंवेकः। उस्रं घुर्मं शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शिरषा बृहुस्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनो-पमेहिं। इन्द्रांश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुर्मं पांत वसवो यजंता वट्। स्वाहां त्वा सूर्यस्य रूश्मयं वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु ई

अन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिस् सुवंमें यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिनस्य गृह्णि ववं च॥———[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सुलिलायं त्वा वातांय स्वाहाँ।
अना्धृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ।
अवस्यवेँ त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ।

शिमिंद्वते त्वा वातांयु स्वाहाँ। अग्नयें त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय

त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुंणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

शकेयम्। तेजोंऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हि॰सीः।

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमते विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। यमाय त्वाऽिक्षंरस्वते पितृमते स्वाहां। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयािड्ह। स्वाहांकृतस्य धर्मस्यं। मधोः पिवतमिश्वना। स्वाहाऽग्रयें यज्ञियांय। शं यजुंिर्मिः।

पीपिहि॥३६॥

अर्थिना घुर्मं पांतर हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमरसाताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञम्ममं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्च प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गच्छ। पितृन्धर्मपान्गच्छ॥३५॥ अपदित्यके स्वाहं हार्दिवानं पृथिव्या अष्टो चं॥—————[९]

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युमायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में

न्यस्मे। ब्रह्माणि धारय। क्षुत्राणि धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कुन्दयात्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गेच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों घर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्ज्योंतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योंतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुर्मे दाः। वर्चसा माऔः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

पुषा तें अग्ने स्मित्। तया सिमध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माओः। अग्निज्योतिज्योतिंरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत १ हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रेभ्यः॥४१॥ बृह्यवर्षुसार्य पेपिहि स्कृत्वयांद्रुद्वायं कृद्वहीं स्वाहाऽह्वां मा पाह्युको सुन्न चं॥———[१०]

घर्म या ते दिवि शुक्। या गांयुत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविर्धाने। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ। घर्म या तेऽन्तरिक्षे शुक्। या त्रेष्ट्रंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्रींध्रे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यै। या सदंसि। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुनोऽद्यानुंमतिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य त्नुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षत्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायैं। चक्षुंषस्तुनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वृत्गुरंसि शं यधांयाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च् विश्व परि च् विश्वं। चतुंः स्रिक्तिनीभिर्ऋतस्यं। सदी विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्चम। घर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वर्धिषीमिहं च व्यम्। आ चं प्यासिषीमिहं॥४५॥

रिन्तुर्नामांसि दि्व्यो गंन्ध्रवः। तस्यं ते पृद्वद्वंविधानम्। अग्निरध्यक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। सर रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। अचिंऋदृद्वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरण्युः। महान्थ्स्धस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥ नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तद्नववैत्। इन्द्रों रारहाण आंसाम्। परि सूर्यस्य परिधी॰ रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गन्ध्वों रजंसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या॥४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नंमिवन्द् चरंणे न्दीनाम्। अपांवृणो्द्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासान्मन्थवीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद्दीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य रं स्निम्। गायत्रं नवीयारसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥

याऽऽश्रींध्रे तान्तं एतेनावं यज्ञे स्वाहा धर्मणा श्रं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंत्तो विद्य संन्वष्टौ॥[११] महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीना-

मोषंधीना ५ रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनः सुवर्गम्॥५१॥

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजीने प्राजीने।

| चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्) 544                                   | ļ |
|--|---|
| आ स्कुन्नाञ्जायते वृषां। स्कुन्नात् प्रजंनिषीमहि॥५२॥                       |   |
| <u> </u>   |   |
| या पुरस्ताँद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ। या                 | Ī |
| दंक्षिणतः। या पश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं         |   |
| एतेनावं यजे स्वाहाँ॥५३॥  |   |
| [88]   |   |
| प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा             | ſ |
| श्रोत्राय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहाँ॥५४॥               |   |
| [१५]   |   |
| पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे  | Ī |
| न्रन्धिषाय स्वाहाँ। पूष्णेऽङ्गृणये स्वाहां पूष्णे नुरुणांय स्वाहाँ। पूष्णे | ſ |
| सांकेताय स्वाहाँ॥५५॥   |   |
| [१६]   |   |
| उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नार्त् बिर्भर्ति। भारं पृथिवी न भूमी। प्र            | ſ |
| शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतंष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त                  |   |
| ु २  | • |
|  |   |
| घर्मः शिर्स्तद्यम्ग्निः। पुरीषमस्मि सं प्रियं प्रजयां पृशुभिर्भुवत्।       |   |
| प्रजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५६॥               |   |

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तुनुव ऊर्जो नामं। ताभिस्त्वमुभयींभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सींद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥५७॥

१८]

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवृथ्सरोंऽसि परिवथ्स्रोंऽसि। इद्वावृथ्स्रोंऽसीद्वथ्स्रोंऽसि। इद्वथ्स्रोंऽसि वथ्स्रोंऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पृच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्तयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासाश्चर्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्स्रस्तं कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। प्रजापितस्त्वा

सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवः सींद॥५८॥

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयैं। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हंसः। विधुन्दंद्राणश् समंने बहूनाम्। युवांनुश् सन्तं पिलृतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिहृत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यट्ते चिंदभिश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सुन्धिं मुघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्केर्ता विह्नुंतं पुनंः। पुनंरूर्जा सह रय्या। मा नो घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिरहीडितेभिरस्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ता। मा द्यावापृथिवी हींडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परिंणो वृणक्ता। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्रे स त्वं नों अग्रे। त्वमंग्रे अ्यासिं। उद्व्यं तमंस्स्पिरं। उद्व्यं चित्रम्। वयंः सुपूर्णाः॥६१॥
प्रोवस्रहेविषातार सुपर्णाः॥———[२०]

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्य सुम्नमंशीमिह। तस्य भक्षमंशीमिह। तस्य पुन्नस्य प्रातस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। क्षुच तृष्णां च। अस्रुकानांहुतिश्च। अशुन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमं गंच्का योज्यान्तेष्टिं। यं चं वयं दिष्मः॥६३॥

ताभिरमुं गंच्छ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६३॥ —————————[२२

स्निक् स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नीं सेदिरनिंरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिर्मुं गच्छ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥

| चतुर्थः | प्रश्नः | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |  |
|---------|---------|------------|-----------|--|
|         |         |            |           |  |

|                     |            |         |  |                  | ——[२३]            |
|---------------------|------------|---------|--|------------------|-------------------|
| 7. <del>Cl</del> or | 1-11-1     | 1 -1 -1 | 1- | <del>10000</del> | to the            |
| યુાનશ્ર             | વ્યાન્તશ્ર | অ্নপ্র  | ध्वनय५॑श्च।                              | ାનାଦ୍ୟକ୍ଷ        | <b>ାବାଦ୍ୟ</b> କ୍ଷ |
| विश्चिप:॥६५         | • II       |         |  |                  |                   |

-[૨૪]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तर्श्च ध्वनश्चं ध्वनयर्श्वश सहसह्वाङ्श्च सहंमानश्च सहंस्वा ॥ सहीया ॥ पत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥ ६६॥

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धुमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासाँस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवृथ्सरस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

खट् फड् जुहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥

-[२७]

विगा इंन्द्र विचरंन्थ्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वुपतौंऽस्य प्रहंरु भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यों मृत्युना संवंदस्व। नर्मस्ते अस्तु भगवः। सकृत्ते अग्ने नर्मः। द्विस्ते नर्मः। त्रिस्ते नर्मः। चतुस्ते नर्मः। पुश्चकृत्वंस्ते नर्मः। दुशुकृत्वंस्ते नर्मः। शुतकृत्वंस्ते नर्मः। आसहस्रकृत्वंस्ते नर्मः। अपरिमितकृत्वंस्ते नर्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥६९॥ त्रिस्ते नर्मः सप्त

-[२८]

| चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्) 548   |
|--|
| असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृधंः  |
| सुपुर्णः कुणपुं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भवस्यं चोभयौः॥७०॥   |
| <u></u>  |
| यदेतह्नंकसो भूत्वा। वाग्दैव्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय।   |
| तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥   |
| [30]   |
| यदीषितो यदि वा स्वकामी। भूयेडको वदिते वाचमेताम्।   |
| यदींषितो यदि वा स्वकामी। भयेडेको वदिति वाचेमेताम्।<br>तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्स्मभ्यं कृण्तं गृहेषुं॥७२॥ |
| [38]   |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदिं दक्षिणुतो  |
| वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥   |
| [32]   |
| इत्थादुर्लूक् आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोंमुखः। रक्षंसां दूत  |
| आर्गतः। तमितो नांशयाग्ने॥७४॥   |
| [33]   |
| यदेतद्भूतान्यन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वदसिं। द्विषतों नः परावद।  |
|  |
| तान्मृत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छन्तु। अग्निनाऽग्निः   |
| संवंदताम्॥७५॥  |
| [38]   |
| प्रसार्य सुक्थ्यौ पर्तसि। सुव्यमक्षि निपेपि च। मेहकंस्य  |

| चतुर्थः | प्रश्नः | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |
|---------|---------|------------|-----------|
|         |         |            |           |

चुनामंमत्॥ ७६॥

अथौं श्वेताः। अथों आशातिंका हृताः। श्वेताभिः सह सर्वे हृताः॥७७॥

विश्वावंसोक्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् र राजाः। अप्येषाः स्थपतिर्हृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथो क्षुद्राः। अथो कृष्णा

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन जमदंग्निना।

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भंयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्प्रसिं॥७८॥ ————[३७]

ब्रह्मंणा त्वा शपामि। ब्रह्मंणस्त्वा श्रुपथेंन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूंणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्य त्वा धारया विद्धामि। अधरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥ ———[३८]

्रिट]
उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु प्रवेशय।
मरींची्रुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोंऽमुं
नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥८०॥
[३९]

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यों वायि निधाय्यों वायि निधाय्यों वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

४०]

पृथिवी समित्। ताम्गिः समिन्धे। साऽग्निः समिन्धे। ताम्हः समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् समिन्ताः स्वाहाः। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनन्धे। सा वायुः सिनन्धे। तामहः सिनन्धे। सा मा सिनद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनन्ताः स्वाहां। द्यौः सिनत्। तामांदित्यः सिनन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। तामह सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिन्दिस सपत्रक्षयंणी। भातृब्यहा मेंऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्यः समिन्धे। ताम्हः समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥ वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिन्ता्ड् स्वाहाँ। अन्तरिक्षर समित्। तां वायुः सिनन्ये। सा वायुर सिनन्ये। ताम्हर सिनन्ये। सा मा सिनद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिमंन्ता हु स्वाहाँ। पृथिवी समित्। तामृग्निः सिमंन्थे। साऽग्निः सिमंन्थे। तामृहः सिमंन्थे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् सिमंन्ता्ड् स्वाहाँ। प्राजापृत्या में स्मिदंसि सपल्क्षयंणी। भ्रातृव्यहा मेंऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्मेंऽराधि। वायों व्रतपतेऽग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्मेंऽराधि॥८८॥ स्मिध्सिमेशे वृतं चरिष्याम्यायंण् तेर्जसा वर्षसा श्रिया यर्शसा ब्रह्मवर्षसेना्ष्टी चं॥——[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भंवन्तु नः शर रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्यंच्छतु शमांदित्य उदंतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठासीं प्रतिष्ठावन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्छिथ्समह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं विष्तं। भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्चिथ्रस्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेष्जं वि वांत

वाहि यद्रपंः। त्व॰ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातो वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांतते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषुजम्। ततों नो मह् आवंह वातु आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र ण आयू ५ेषि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहों ऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः सुवः प्रपेद्ये वायुं प्रपुद्येऽनौर्तां देवतां प्रपुद्येऽश्मोनमाख्णं प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोुशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहदग्नयः पर्वताश्च यया वार्तः स्वस्त्या स्वस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणांपानौ मृत्योमां पातुं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टुं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भाजो दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभेः परिपातम्स्मानरिष्टेभिरश्विना सौभंगेभिः। तन्नों मित्रो वर्रुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां नश्चित्र आ भुंवदूती सदावृंधः सखाः। कया शचिष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां म॰हिष्ठो मथ्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षु णः सखीनामविता जंरितृणाम्। शतं भंवास्यूतिभिः। वयंः सुपूर्णा उपंसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषंयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूँणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं च व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच र शमयतु। अन्तरिक्षर शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्त । शुच । शमयत्। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येन शान्ता सा में शान्ता शुच र शमयत्। पृथिवी शान्तिंरन्तरिक्ष शान्तिर्द्यीः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिंश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षंत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोर्षिययः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिंर्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिंमें अस्तु शान्तिं। तयाहर शान्त्या संवंशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिं। एह श्रीश्र हीश्र धृतिश्र तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्रैतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माु श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानिं मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना र रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता र अनुं। तचक्षुंर्देविहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरंत्। पश्येम शुरदः शुतं जीवेम शरदेः शतं नन्दौम शरदेः शतं मोदोम शरदेः शतं भवोम शरदेः शत १ शृणवाम शरदेः शतं प्रब्नेवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदं शतं ज्योक सूर्यं दशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरिरस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनात्। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीचीं भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुंरयाणि सर्वमायुंरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासि भूयिष्ठभाजो अर्थ ते स्याम। ब्रह्म प्रावादिष्म तन्नो मा 

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रुकृज्यो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्) मन्नपतीन्पर्रादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः

शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जर्गत्। शर्म चुन्द्रश्च

सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों विदिष्ये यशों विदिष्ये तपों विदिष्ये ब्रह्मं विदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुप्स्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायें पशूनां भूयासं प्राणांपानो मृत्योर्मां पातुं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टुं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं वदिष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास॰ शुश्रूषेण्यां मनुष्यैभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ

शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तथ्सहासदिति। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्डवो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमुत्तरार्धः। परीणज्ञंघनार्धः। मरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तत्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽवुरुरुथ्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। स्व्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजनमा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्व-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सौंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥

तथ्सम्याकांनाः समयाकृत्वम्। तस्माँद्दीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यै। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इमः रंन्धयाम। यत्र कं च खनांम। तद्पोऽभितृंणदामेति। तस्माद्पदीका यत्र कं च खनंन्ति।

तदपोंऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेंवृत् इ ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् ध् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावापृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ (४) इत्यपंतत्। तद्धर्मस्यं धर्मत्वम्। महतो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीरत्वम्॥५॥

यद्स्याः स्मभंरन्। तथ्सम्राज्ञंः सम्राद्वम्। तः स्तृतं देवतां स्त्रेधा व्यंगृह्णत। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन यजमानाः। नाशिषोऽवार्रुन्धत। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंबूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यामेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषोऽरुंन्धतः। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणितिः। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषो रुन्धे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्कृते होते तंन्दिन महावीर्त्वमंब्रवत्रजयन्थ्यम चं॥———[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति। छन्दार्रसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानिं हृव्यं वंक्ष्याम् इतिं। तेभ्यं पृतचतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतायै वषद्वारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दाईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानिं देवेभ्यों ह्व्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। ह्विर्वे दीक्षितः। यज्ञुंहुयात्। ह्विष्कृंतं यजंमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृंतुं यजंमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुरुन्तरेति। गायुत्री छन्दाङ्स्यत्यंमन्यत। तस्यैं वषद्कारौंऽभ्यय्य शिरौंऽच्छिनत्। तस्यैं द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृश्नुप्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरोऽभवत्। यः पृशून्। सोऽजाम्। यत्खांदिर्यभिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुः॥११॥

तेजंसैव युज्ञस्य शिरः सम्भरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। वर्ज्ञ इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस नारिरसीत्यांह शान्त्यैं॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञ्कृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्येव यज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वै सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरोधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्को हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञनियंः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्धासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीर्ष्ण इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरति॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों युज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थं १ हंरित। अपेरिमितादेव युज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खुनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खुनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्याह। अस्यामेवाछंम्बद्कारं युज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उंपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥ यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्रङ् ह्येतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र पराक्रंमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूर्तीकस्तम्बे पराँकमत। सौंऽद्भियत। सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवंन्ति। यज्ञायैवोतिं दंधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पश्नुग्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भंवन्ति। पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरुः सम्भंरति। यद्ग्राम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽपंयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भंरति। आर्ण्यानेव पश्ञञ्छुचार्पयति। तस्मांथ्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीयाः सः। शुचा ह्यंताः। लोमृतः सम्भरित। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। पृरिगृह्या यंन्ति। रक्षंसामपंहत्यै। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यैं। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कपालैंः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽर्पयेत्। अर्मकपालैः सश्सृंजित। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचार्पयित। शर्कराभिः सश्सृंजिति धृत्यै। अथो शन्त्वायं। अजुलोमैः सश्सृंजित। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा सश्सृंजित। अथो तेजसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सश्सृंजित। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञश् सश्सृंजिति॥२०॥ युज्ञयेषु व जुंहुयादविशृद्धेणुः शान्त्य पृङ्किरांधस्मित्यांह हरित दिहन्ति प्राक्रंम्ताविशत पृज्ञायंमानावाश स्वति शन्त्वायाशै सं॥————[२1

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्निभ प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नीभ प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचापंयेत्। अपहाय् प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्र्यं चाऽऽदित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्त्राय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसै्व तेजः समर्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमांह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्यांह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्ये। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोंभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रसि। वीर्येणैवैनं करोति। यर्जुषा बिलं करोति

व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सिम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सिम्मितम्। इयं तं करोति। पृतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं करोति धृत्यैं। सूर्यंस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकेनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अश्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वः। तस्य छन्दा रंसि निष्पत्॥२५॥

छन्दोंभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाित। वारुणांऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धो त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिव्तोद्धेपत्वित्यांह। सिवितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्धंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्माद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भवोध्वंस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषोंऽन्यो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षेते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वींक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवें त्वा साधवें त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्ष साधा असौ सुक्षितिः॥२७॥ दिशो भूतिः। इमानेवास्मै लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै।

इदम्हम्म्मांमुष्यायणं विशा पृश्भिर्वह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवैनं पृश्भिर्वह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात। विशेवैनं पर्यूहित। पृश्भिरिति वैश्यंस्य। पृश्भिरेवैनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनां च्छुण्णम्॥२८॥

आच्छुंणत्ति। देवत्राकः। अजक्षीरेणाऽऽच्छुंणत्ति। परमं वा

पुतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। पुरमेणैवेनं पयसाऽऽच्छृंणत्ति। यजुंषा व्यावृंत्त्यै। छन्दोभिराच्छृंणत्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दा इस्याच्छृंणत्ति। छृन्धि वाचमित्याह। वाचमेवावंकन्धे। छृन्ध्यूर्जमित्याह। ऊर्जमेवावंकन्धे। छृन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकः। देवं पुरश्चर सघ्यासन्त्वेत्याह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥ स्याचल्लंक्यांभः करोति वीर्यसम्मितं छन्दारेसि निष्मत्भृणेत्याह सक्षितरगांच्छ्णुच्छन्दाइस्याच्छ्ंणत्याह

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतंर्घमम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्हि बृह्स्पतिः। यद्वृह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचरति। आत्मनोऽनांत्यै। यमायं त्वा मखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्श् समर्थयति। मदंन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्यै। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। त्रिष्टुभंः सतीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥ गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानामृत्राद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिंमिता अनुब्रूयात्। परिंमितमवंरुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रवृग्यः। ऊर्ङ्मुश्जाः। यन्मौञ्जो वेदो भवंति। ऊर्जेव यज्ञस्य शिरः समर्थयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजंमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्यांऽनुक्तित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्तः। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँस्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रलवानादीप्योपाँस्यति। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीणांग्रं भवति। एतद्वर्रहिर्ह्येषः॥३४॥

अर्चिरसि शोचिरसीत्यांह। तेजं एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं देधाति। स॰सीदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्येषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजः। ये दंर्शपूर्णमासयोः। अथं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशांस्त इति। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजू्र्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजमान आशिषोऽवंरुन्थे। आर्युः पुरस्तादाह। प्रजां देक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मे स्मीचे दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशति। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मरुतो रश्मयंः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्भिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यश्र्यश्मिमेः पर्यूहित। तस्मादसावांदित्योऽमुष्मिक्षोके रिष्मिभेः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्राम्णीः संजातेः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्य यतः। विकंङ्कतं भा आंच्छित्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्थे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्थे। अस्तिं त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः परिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मासमवंरुन्थे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांहु व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवेनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् बिभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रेष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं ध्वित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजंमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घर्मस्यं प्रियां त्नुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष हु वा अस्य प्रियां त्नुवमाक्रांमति। यित्रेः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता हु वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्माऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्राणि। अव्यतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यतिषङ्गाय क्रुप्त्यै। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। उप्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। स्वती धून्वन्ति। तस्माद्य स्वर्तः पवते॥४२॥ व्यास्थापयंति एस्मर्थे भवन्ति धन्वत्यांह युज्जस्यांहुष उपिरेष्ठादाशीपुन्यो व्यास्थापयंति एसम्यों भवन्ति धन्वत्यांह युज्जस्याम् समष्टि

अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्तौद्रोचयतु गायत्रेण छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्तौद्रोचयति गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शौस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैर्दक्षिणतो रोंचयतु त्रैष्टुंभेन छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन र् रुद्रैर्दक्षिणतो रोचयित् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयेत्याह। आशिषमेवैतामा शास्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसत्याह। वरुण पृवैनमादित्यैः पृश्चाद्रोचयित् जागंतेन् छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वानुष्टुभेन छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्यानुष्टुभेन छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्यानुष्टुभेन छन्दसा। स मां रुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। बृह्स्पतिरेवैनं विश्वेदिवैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिरेवैनं विश्वेदिवैरुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दसा। स मां रुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्यंष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्ममं रुचितस्त्वं देवेष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भूयासमित्यांह। रुचित एवेष मंनुष्येष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भंवति। रुगंसि रुचं मिये धेहि मिये रुगित्यांह। आशिषमेवेतामा शास्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इतिं प्रब्रूयात्। अरोंचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोंचुको यजंमानः। अथ् यदेंनमेतैर्यजुंभी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥

पुश्चाद्रीचयति जागंतेन छन्दंसा पाङ्केंन छन्दंसा स मां रुचितो रोच्येत्यांहाशिषंमेवेतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टौ चंग

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्रंवृग्यः। ग्रीवा उपसदः। पुरस्तांदुपसदां प्रवृग्यं प्रवृंणक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। त्रिः प्रवृंणक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविंरशितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंरशितरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्र् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै युज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव युज्ञः। तस्य शिरः प्रतिद्धाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्देहत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अर्च्युतं च्यावयन्ति। पृष्ठैरेवास्मा अर्च्युतं च्यावयित्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोप्तारं कुरुते। अनिपद्यमानमित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तमित्यांह। आ च ह्यंष परां च प्थिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान् इत्यांह। स्प्रीचीश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु मार्धीभ्यां मधु मार्थूचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतु कंत्पयित। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयित। समृग्निर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यवैषां ऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा समृग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारुदावेवास्मां ऋतू कंल्पयित॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्योकान्थ्सन्दे-धाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयित। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयित। तृपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुविमत्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्धे॥५२॥

गर्भो देवानामित्याह। गर्भो ह्येष देवानाम। पिता

मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयंः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। पतिः प्रजानामित्यांह। पतिर्ह्येष प्रजानाम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रंवर्ग्यं च स॰शांस्ति। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्ं। न वै तेंऽवकाशा भवन्ति। पित्रिये दशमः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

मतिर्ह्येष केवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्टु सः

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अर्न्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। युज्ञस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेक्षन्ते। एता व होत्राः। होत्रांभिरेव युज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजानार् सृष्ट्यै। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे पुर्जन्यो वर्षित। वर्षुंकः पुर्जन्यो भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वे ब्रंह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चिसेनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिरुस्कृत्य यजुंर्वाचयति। प्रजायते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टीमती ते सपेयेत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

कृतवो हि शिरः सर्वपृष्ठे प्रवृण्क्विनिपद्यमानुमित्याह गृतेत्याह शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति रुथे कवीनामित्याह प्राणाः प्रतिदेशति भवन्ति वाचयति चृत्वारि च॥————[६]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इतिं रश्नामादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। आद्देऽदिंत्यै रास्नाऽसीत्यांहु यर्जुष्कृत्यै। इड एह्यदिंत एहि सर्रस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानिं। देवनामैरेवनामाह्वंयित। असावह्यसावह्यसावहीत्यांह। एतानि वा अस्यै मनुष्यनामानिं॥५८॥

मृनुष्यनामेरेवैनामाह्वयित। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनामाह्वयित। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवै-तत्। वायुरंस्येड इत्यांह। वायुदेवत्यों वै वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृजुत्वित्यांह। पौष्णा वै देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजति। अश्विभ्यां प्रदापयेत्यांह। अश्विनौ वे देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं करोति। यस्ते स्तनंः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मः शिर्षोस्रं घर्मः पाहि घर्मायं शिर्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। तादगेव तत्। बृह्स्पित्स्त्वोपं सीद्त्वित्यांह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानेवः

स्थ पेरंव इत्याह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह् व्यावृंत्त्ये। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भांगुधेयेंन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायुत्रोऽसि त्रैष्ठंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वषंद्रियाता इतिं। इन्द्रांश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वषंद्रशिति। अर्थो अश्विनांवेव भागुधेयेन समर्धयति॥६२॥

घुर्मं पात वसवो यजंता विहत्याह। वसूनेव भागधेयेन समर्थयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्वारः स्याँत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षारंसि यज्ञर हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञर रक्षारंसि घन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यंस्य रुश्मयें वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यों रुश्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां पृवैनं जुहोति। मधुं हुविरुसीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यंस्य तपंस्तुपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिंगृह्यामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिंगृह्णाति॥६४॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छति।
न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हति। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो
भर्तुरं शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि वा
एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि
तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा
मां हिश्सीरन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां
हिश्सीरित्याहाहिश्सायै॥६५॥

सुवंरिम् सुवंर्मे यच्छ् दिवं यच्छ् दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। अनंवानम्। प्राणाना सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिर्ः प्रतिंदधाति। अग्नयै त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योंऽग्निर्वसुमान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अफ्सु वै वर्रुण आदित्यवार्न्। तस्मां पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये

त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमते विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। स्वंवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै

यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥
तस्मां पृवैनं जुहोति। पृताभ्यं पृवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशांक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। रौिहूणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। तद्रौिहूणयो रौिहणत्वम्। यद्रौिहूणो भवंतः। रौिहूणाभ्यांमेव तद्यजमानः सुवर्गं लोकमेति। अह्ज्योतिः केतुनां जुषता स्रुज्योतिज्योतिषा स्वाहेत्यांह। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्योतिषा स्वाहेत्यांह। आदित्यमेव तद्मुष्मिं ह्लोकेऽह्नां प्रस्तांदाधार। रात्रिया अवस्तांत्। तस्माद्सावादित्योऽमुष्मिं ह्लोकेऽह्नां प्रस्तांदाधार। रात्रिया अवस्तांत्। तस्माद्सावादित्योऽमुष्मिं ह्लोकेऽह्नां प्रस्तांदाधार। रात्रिया अवस्तांत्। तस्माद्सावादित्योऽमुष्मिं ह्लोकेऽह्नां प्रस्तांदाधार। रात्रिया अवस्तांत्।

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्भांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वेनेत्यांह। अश्विनांवेव भांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहाऽग्रयें युज्ञियांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हविरेवाकंः॥७०॥

अश्विना घुमं पांतर हार्दिवानमहंर्दिवाभिंक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भागधेयेन समर्धयति। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घुमंस्यं युजेति। वर्षद्वते जुहोति। रक्षसामपंहत्यै। अनुंयजित स्वगाकृंत्यै। घर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमो दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवेतत्। दिविधा इमं युज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवेनं लोकं गमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्याह। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पर्श्वं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्षेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्मपान्गंच्छ पितॄन्धंर्मपान्गच्छे-त्यांह। उभयेष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यदंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्रुमुदेश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैता-माशिषमा शाँस्ते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमा शाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मांसि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवेनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वातः स्कृन्दयादिति यद्यभिचरेत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेति ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गमयित। पूष्णे शरेसे स्वाहेत्यांह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवेनं जुहोति। पितृभ्यों घर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वानः। ते पितरों घर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भागधेयेन समर्धयित। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उदंश्चं निरंस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशति मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपीपरो माऽह्वो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया सिर्मध्यस्वायुंर्मे दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्याह। आयुरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्नो मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया सिर्मध्यस्वाऽऽयुंर्मे दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्याह। आयुरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्यीतिज्यीतिरिग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहेत्याह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मिति॥७९॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवित। हुत हिर्वर्मधुं हिविरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोऽसि मा मां हि॰सीरित्याहाहि॰सायै। अश्यामं ते देव घर्म मधुमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोऽशीमहिं त्वा मा मां हि॰सीरित्याहाहि॰सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्यण चरन्ति। प्राश्जंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥ संवथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयम्प्यन्तः। विभ्राजिं सौर्ये ब्रह्मसन्त्र्यंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्ं। तदेतेनैव ब्रतेनांगोपायत्। तस्मादेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजूर्षेष

तस्माद्ताहुत चायम्। तजसा गापाथाया तस्माद्ताान् यजूशाय विभ्राजः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिष्टमभ्य इति प्रातः स॰सादयति। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रेभ्य इति सायम्। पृता वा पृतस्य देवताः। ताभिरेवैन् समर्थयति॥८२॥

अकुरुश्विनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामन्तःपरिधि पिन्वयति धार्येत्यांहु वाचों धर्मपास्तेभ्यं एवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नवित्यांह दधतेऽगोपायथ्सप्त चं॥————[८]

घर्म् या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मतिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत। जिह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्रमुद्वांसयित। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शुफोपय-मान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन् १ सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं श्लोके भविति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

यज्ञ रक्षारंसि जिघारसन्ति। साम्नां प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रक्षोहा। रक्षसामपहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यो रक्षाङ्स्यपहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षसामपहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासयेंत्। पृथिवी श्रुचा ऽपंयेत्। यद्पस्। अपः श्रुचापंयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः श्रुचा ऽपंयेत्। यद्वनस्पतिंषु। वनस्पतीं ञ्छुचापंयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वां सयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं पुवैनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः परिषिञ्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुचरं शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचरं शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

इयं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः।

तस्मदिवमाह। सदों विश्वायुरित्यांह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्यांह् भ्रातृंच्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नमेतत्पुरीष्मितिं द्व्या मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जैवैनंमन्नाद्यंन् समर्थयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्रवं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुंषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ योंऽस्मान्द्वेष्टि यं च व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचित्रदृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्येषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांणस्यान्त्यंन्ति। तदेवास्यैतेना प्याययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसाँ गन्धर्वो अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। एतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पशून्थ्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्यांह। प्रजामेव पृश्रून्थ्सोमपीथमात्मन्धंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सुन्त्वित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्म इत्याह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषौंऽस्माल्लोकाच्यवते। यः प्रवर्ग्यमुद्धासयति। उदुत्यं चित्रमिति सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आदित्यः सुवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनेव सुंवृगां ह्योकान्नेति॥ ९३॥ ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह द्यात्युन्वित्यं रक्षस्मामपंहत्ये वे हिरंण्यमाहार्धयित् ह्यंप गृणात्वित्यांह

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदैंभ्यो न व्यंभवत्। तदग्निर्व्यकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षेरत्। तानि शुऋयजुङ्घ्यंभवन्। शुक्रियाणां वा एतानि शुक्तियाणि। सामुप्यसं वा एतयोर्न्यत्। देवानामुन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यदजायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यर्जुर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समेर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवुग्यं भक्षयति।

यस्यैवं विदुषंः प्रवृग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्वांसयेत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्योतिरुदेति। तत्पश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवर्ग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्रु स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेंश्वानुरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवेनं वैश्वानरेणामि प्रवंतियति। औदुंम्बर्यार् शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्वर्मः॥९८॥

इदम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहति। ताजगार्तिमार्च्छंति। यत्रं दुर्भा उपदीकंसन्तताः स्युः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामंनू ज्झावंर्यो नामं। यद्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदीरयति। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छति। ता आपो नियंता धन्वना यन्ति॥९९॥

गोः पर्ये उत्तरबेदिरांसते स्थापयति घुमीं यंन्ति॥————[१०]
प्राजापंतिः सम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घुर्मः प्रवृक्तः।

मृह्गवीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्र्यंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया रसं यथाना ममुप्चरित। पुण्यौर्ति वै स तस्मैं कामयते। पुण्यौर्तिमस्मै कामयन्ते। य एवं वेदे। तस्मादेवं विद्वान्। घुर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सुम्राडिति नक्तम्। एते वा एतस्य प्रिये तनुवौ। एते अस्य प्रिये नामनी। प्रिययैवैनं तनुवा॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्धयति। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवर्ग्यंणैवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्यंणाऽऽप्रुवन्। यचंतुर्विरशतिकृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणक्ति। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमांप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सर्सन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीय-माने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दमानः। मैत्रः शरों गृहीतः। तेज् उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्हूयमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरंनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रुयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा असृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंमसृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वविषः॥१०५॥ वृद्वि तुनुवा सर्मन्नो ह्यमाने वाय्युको दंधात्येषः॥——[११]

स्विता भूत्वा प्रथमेऽह्नस्रवृंज्यते। तेन् कामार् एति। यद्वितीयेऽहंन्स्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्स्र-

वृज्यतैं। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यतैं। आदित्यो भूत्वा रृष्मीनेति। यत्पेश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षेत्राण्येति॥१०६॥

यत्ष्ष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमेति। यथ्संप्तमेऽहंन्प्र-वृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्ट्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्रंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ श्लोकानेति। यद्दंशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वरुंणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदंकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्धांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ ह्लोका इस्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांद्मुतोऽर्वाङ्मिँ ह्लोका इस्तपंत्रेति। य एवं वेदं। ऐव तंपति॥१०८॥

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



## ॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवाश्सं प्रवतीं महीरन् बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतः सङ्गमंनं जनांनां यमः राजांनः हिवषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृन्नपैतदृह् यिद्हाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बहुधा विबन्धुष्। इमौ युनिज्म ते वही असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनः सुकृतां चापिं गच्छतात्। पूषा त्वेतश्चांवयतु प्रविद्वाननष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतभ्यः परिददात्पतृभ्योऽग्निर्देवभ्यः सुविदन्नभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्माः अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अष्टिणः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इदः ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुंषस्य सयावर्यपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापरः पुरा जरस् आयंति। पुरुंषस्य सयावर्रि वि तें प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती पितृलोकं यदेषि। विश्ववांरा नमंसा संव्यंयन्त्युमौ नो

लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

ड्यं नारीं पतिलोकं वृंणाना निपंचत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यैं प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींष्वं नार्यिमे जींवलोकिम्तासुंमेतमुपंशेष एहिं। हुस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्यं जीनृत्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हु हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मंणे तेजंसे बलांय। अत्रैव त्विमह वय स्पृशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। धनुर्हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायोजंसे बलांय। अत्रैव त्विमह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। मण्डि हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्ट्ये बलांय। अत्रैव त्विमह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम॥३॥

ड्रममंग्ने चम्सं मा विजीह्नरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्।
एष यश्चंम्सो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म्
पिर् गोभिर्व्ययस्व सं प्रोणुंष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां
धृष्णुरहरंसा जरहंषाणो दर्धद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयाते। मैनंमग्ने विदंहो
माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं
क्रवां जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा क्रिसं
जातवेदोऽथेंमेनं परिदत्तात्पितृभ्यः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां
देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं

पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं तें शोचिस्तंपतु तं तें अर्चिः। यास्तें शिवास्तुन्वों जातवेद्स्ताभिवहेम स्कृतां यत्रं लोकाः। अयं वे त्वमस्मादि त्वमेतद्यं वे तदंस्य योनिरिस। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककृञ्जातवेदो वहेम स्कृतां यत्रं लोकाः॥४॥

विद्वान्यावंवृथ्स्वाभिमांतीर्जयम् शरीरेश्चत्वारि च॥

[१]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिविश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे मिह्षो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊत् एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चार्रुरिध प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थे। नाकं सुप्णमुप यत्पतंन्त १ हृदा वेनन्तो अभ्यचेक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य

धेह्यत्तंरमाष्टौ चं॥.

योनौं शकुनं भुंरण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौं चतुरक्षौ श्ववलौं साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्सुंविदत्रा अपींहि यमेन ये संधमादं मदन्ति। यो ते श्वानौं यमरिक्षतारौं चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या राजन्यरिं देह्येन स्वस्ति चौस्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चरतो वशा १ अन्। ताव्समभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुमुद्येह भूद्रम्। सोम् एकेभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता १ श्विदेवापि गच्छतात्। ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूर्यसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता १ श्विदेवापि गच्छतात्। तपंसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवर्गताः। तपो ये चिक्रिरे महत्ता १ श्विदेवापि गच्छतात्। अश्मन्वती रेवतीः स १ रेभध्वमुत्तिष्ठत् प्रतरता सखायः। अत्रां जहाम् ये अस्त्रशेवाः शिवान् वयम्भि वाजान्तरिक्षे। यद्वै देवस्यं सिवृतः पिवत्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनार्तिमार्त्ये तेनाहं मा स्वतंनं पुनामि।

यद्वै देवस्यं सिवृतुः प्वित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनातिमार्त्ये तेनाहं मा स्वितंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मान्नय्या वर्चसा सश्सृंजाथ। उद्वयं तमंस्स्पिर् पश्यन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवन्ना सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्। धाता पुनातु सिवृता पुनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥ क्षीरेणं चोद्केनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनंः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिंके शीतिंकावित् ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्नि श्रमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम् ते सन्तवनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम् ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते सन्तु कृप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥ अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहंतश्चरंति स्वधाभिः।

यन्ते अग्निममंन्थाम वृषभायेव पक्तवे। इमन्तर शंमयामसि

आयुर्वसान उप यातु शेष र सङ्गेच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गेच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः समिष्टापूर्तेनं परमे व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृंणोतु सोमश्च यो ब्राँह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव सम्भंरस्व मेह गात्रुमवंहा मा शरींरम्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छु तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं तु एकं पुर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविंशस्व। सुंवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां परमे सधस्थैं। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व परमे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाकमधिं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तर्मसस्परिं धाता पुनातु।

अस्मात्त्वमधि जातौँऽस्ययं त्वदधिजायताम्। अग्नये वैश्वानुरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥१०॥ अवंशोयतार सुपस्ये पर्श्वं चा————[४]

अवंशीयतार मुधस्ये पर्श च॥———[४] आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्युमो हेवेह प्रयंताभिर्क्ता।

आसींदता स्प्रुयतें ह ब्रिह्यूर्जाय जात्ये ममं शत्रुहत्यैं। यमे इंव यतंमाने यदेतं प्रवाम्भर्न्मानुंषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्थ्ये भंवत्मिन्दंवे नः। यमाय सोमर् सुनुत यमायं जुहुता ह्विः। यम ह र्यं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्ंतो अर्ङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञें ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिन्यः पूर्वजेन्यः पूर्वेन्यः पिथकृज्यः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजांनपरोध्यः। यमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजांनपरोध्यः। येनाऽऽपो नद्यों धन्वांनि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान्ं हिरण्याक्षानयः शुफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो

सुध्रान् हिरण्याक्षानयः श्राफान्। अश्वाननश्यंतो दानं यमो राजाऽभि तिष्ठति। यमो दाधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दशर्षयः। यमं यो विद्याथ्स ब्रूयाद्यथेक ऋषिर्विजानते॥१२॥ त्रिकंद्रुकेभिः पतंति षडुर्वीरकमिद्बृहत्। गायत्री त्रिष्ठुप्छन्दा रस्मि सर्वा ता यम आहिता। अहंरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषुं जगत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजनि विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चाप्चित्यंति। यस्मिन्वृक्षे स्पलाशे देवैः सम्प्यंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति॥१३॥

वैश्वान्तरे ह्विर्दि जुंहोमि साह्स्रमुथ्स श्वतधारम्तिम्।
तिस्मिन्नेष पितरं पिताम्हं प्रिपेतामहं विभर्त्यन्वमाने।
द्रप्सश्चेस्कन्द पृथिवीमन् द्यामिमं च योनिमन् यश्च पूर्वः।
तृतीयं योनिमन् सश्चरंन्तं द्रप्सं जुंहोम्यन् सप्त होत्राः। इमश्समुद्रश्चातधारमुथ्संव्यच्यमानं भुवनस्य मध्यें। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने मा हिश्सीः पर्मे व्योमन्। अपेत् वीत् वि च सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तृभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मे। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामिन्नयाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वेर्त्रा बेध्यन्ताः शुनमष्ट्रामुदिङ्गय् शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंऋथुः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाची सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सुवितैतानि शरींराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदेधे। तेभिरदिते शं भेव। विमुच्यध्वमघ्रिया देवयाना अतारिष्म तमंसस्पारमस्य। ज्योतिरापाम् सुवंरगन्म॥१५॥

इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी॰ रेतसाऽवंति।

प्र वाता वान्तिं पतयंन्ति विद्युत उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः।

यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासांम जीवलोके भूरेयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवतां। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवतंया। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥ अष्टिया अगम सम चं॥ [६] उत्तं तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। पृताः स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादंनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातरं भूमिमेतामुंरुव्यचंसं पृथिवीर सुशेवांम्। ऊर्णम्रदा

युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थें। उष्नेश्चस्व पृथिवि

मा विबंधिथाः सूपायनास्मै भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथां सिचाभ्येनं भूमि वृण्। उङ्गश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासों मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सुन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा ते यमुसादेने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ

सम्बंधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितॄन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यम्राज्यें। मा त्वां वृक्षो सम्बंधिथां मा माता पृंथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यम्राज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रत्रोत्तर॥१८॥

सवितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभ्यंः

पृथिवि शं भंव। षड्ढोंता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छत् वातमातमा द्यां च

गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरींरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नः प्रजा रिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां मे दिशः शृग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मास पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया।

अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नार्कस्य त्वा पृष्ठे ब्र्ध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा

सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्घृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन पृथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। दशाँक्षरा ता॰ रंक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभिन्यतरों पुतास्ते स्वधा अमृताः करोम् यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनः कांमदुधाः करोत्। त्वामर्जुनौषंधीनां पयो ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वा मध्यादादेदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरेतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाः स्तम्बमाहंर रक्षंसामपंहत्ये। य पृतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभवान्युनः। दुर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृण् ता अंस्य सूदंदोहसः। शं वातः श॰ हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्याः कृतं मित्रेण् वर्रुणेन च। वुरुणो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच् वनस्पतिः। विधृतिरस् विधारयास्मद्घा द्वेषाः सि श्रमि श्रमयास्मद्घा द्वेषाः सि यव यवयास्मद्घा द्वेषाः सि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ सुवंगंच्छ सुवंगंच्छ दिशों गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सिवतः प्वितं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुनातु॥२२॥

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथ्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपरो जहाँत्येवा धातरायूर्षेष कल्पयेषाम्। न हिं ते अग्ने तन्वैं क्रूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बमस्ति तेर्जनं पुनर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोश्चिद्घमग्नें शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चिद्घ मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्वाहंम-वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विहें: सम्पारंणो भव॥२३॥

ड्मे जीवा वि मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भ्द्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसांय द्राघीय आयुंः प्रतरां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम द्राघीय आयुंः प्रतरां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धर्नेन शुद्धाः पूता भवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतं जीवन्तु श्रर्दः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देद्यहे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सूर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवी अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे। यदाञ्जनं त्रैककुदं जातर हिमवंतस्परि। तेनामृतस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामिस। यथा त्वमुंद्धिनथ्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविमम उद्धिन्दन्तु कीत्यां यशंसा ब्रह्मवर्चसेन। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषार्रसे यवोऽसि यवयास्मद्घा द्वेषार्रसे॥२४॥

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भिदेष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्गेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्वः हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशुंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽति नावेवं पारय। अपं नः शोशुंचद्घम्। स नः सिन्धुंमिव नावयाति पर्षा स्वस्तयैं। अपं नः शोशुंचद्घम्। आपंः प्रवृणादिंव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। आनुन्दायं प्रमोदाय पुनुरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशुंचद्घम्। न वै तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिजीवनायकमपं नः शोशुंचदघम्॥२६॥

अपंश्याम युव्तिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्धेन या तमंसा प्रावृताऽसि प्राचीमवांचीमव्यन्नरिष्ठो। मयैतां माङ्स्तां भ्रियमाणा देवी स्ती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नमंसा संव्ययन्त्युभौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियष्ठामुभ्निं मधुंमन्तमूर्मिण्मूर्जः सन्तं त्वा पयसोप सश्संदेम। सश्र्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तयै। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्यौः। तेभ्यो घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूनाङ् स्वसांऽऽदित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनांय मागामनांगामिदितिं विधिष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्। ओमुथ्मुजत॥२७॥

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः

सन्त्वा सिञ्चाम् यज्ञुषा प्रजामायुधन च॥ ॐ शान्तः शान्तः शान्तिः ।

सुमङ्ग्लीरियं वधूरिमाः संमेत् पश्यंत। सौभाँग्यम्स्यै दत्त्वायाथास्तुं वि परेतन। इमां त्वमिन्द्र मीद्वः सुपुत्राः सुभगाँ कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृधि॥ आवहनती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



## ॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विदिष्यामि। ऋतं वंदिष्यामि। सत्यं वंदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः॥१॥

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। साम सन्तानः। हताकः शीक्षारयायः॥२॥

सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधि-

उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधि-ज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्या-चक्षते। अर्थाधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तंररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या सुन्धिः। प्रवचनर्रं सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजननर्रं सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥ अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाख्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजया पृश्विः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥
स्विराचार्यः पूर्वरूपमित्यपुप्रजं लोकेन॥————[3]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतांध्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयां स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पशुभिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग् प्रविशानि स्वाहाँ। स मां भग् प्रविश् स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायंन्तु स्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥ भूर्भुवः सुविरिति वा पुतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुविरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायुः। सुवरित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती रेषि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचेः। भुव इति सामांनि। सुवरिति यजूरेषि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुवरिति व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन् वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा पुताश्चतंस्रश्चतुर्धा। चर्तस्रश्चतस्रो व्याहृतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बृतिमावंहन्ति॥१२॥

स य पृषौऽन्तर्हृंदय आकाषाः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुके। य एष स्तनं इवावलम्बते। सौन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इति वायौ॥१३॥ सुवरित्यांदित्ये। मह इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वारौज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पतिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पतिः। श्रोत्रंपतिर्विज्ञानंपतिः। एतत्ततो भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। सत्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धम्मृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपास्व॥१४॥

पृथिव्यंन्तरिक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरांदित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप् ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्तक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थि मुज्ञा। एतदंधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इद सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः ई

स्पृणो॒तीतिं॥१५॥

\_[ \o ]

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म् वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओ र-शोमितिं शुस्त्राणिं शर्मन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगृरं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवुक्ष्यन्नांह् ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुवचनम्॥१८॥

वदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँनमा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य

प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदित्व्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेयार्रसो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः।

अलूक्षां धर्मकामाः स्यः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥ स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यानेषुं वर्तेरम्भूम चं॥ [११]

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न् इन्द्रो बृहुस्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुकुमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते

इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम्। ऋतमेवादिषम्। सत्यमेवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥ स्त्यमेवादिष् पर्व च॥————[१२]

## ॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद् निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सोंऽश्जृते सर्वान्कामांन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापः। अन्धः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥१॥

अत्राद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी १ श्रिताः। अथो अत्रेनेव जीवन्ति। अथैन्दिपं यन्त्यन्ततः। अत्र १ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मांथ्सर्वीष्धमुच्यते। सर्वं वै तेऽत्रंमाप्नुवन्ति। येऽत्रं ब्रह्मोपासंते। अत्र १ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मांथ्सर्वीष्धमुंच्यते। अत्रांद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तद्च्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरस्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राण्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषिधंध एव। तस्य पुरुषिधताम्। अन्वयं पुरुषिधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पृक्षः। अपान उत्तरः पृक्षः। आकांश

आत्मा। पृथिवी पुर्च्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥२॥

प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मृनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्मांध्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्माध्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांत् प्राण्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यजुरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तंरः पृक्षः। आदेश आत्मा। अथवाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तद्येष श्लोको भवति॥३॥

यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मान्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तंरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तद्य्येष श्लोको भ्वति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वै। ब्रह्म ज्येष्टमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समश्जुत इति। तस्यैष एव शारीर

आत्मा। येः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्येष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोंऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छुती(३)॥ आहों विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चिथ्समंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बहु स्यां प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्त्रा इद॰ सर्वममृजत। यदिदं किं चं। तथ्मृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच् त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयंनं चानिंरुक्यं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च सत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यमिंत्याच्क्षते। तदप्येष श्लोको भवति॥६॥

असुद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै तथ्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं लब्बाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष् एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां

कुरुते। अथ तस्य भंयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदेति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्नि-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमार्श्सा भविति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिष्ठष्ठो बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषां आनन्दाः।

ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानुन्दाः।

स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

स एको देवगन्धर्वाणामानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणामानुन्दाः।

स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दाः।

चाकार्महत्वस्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकार्नामानुन्दाः। स एक आजानजानां देवार्नामानन्दः। श्रोत्रियस्य

चाकामहत्स्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमान्न्दाः।

स एकः कर्मदेवानां देवानांमान्नदः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः।

स एको देवानामान्नदः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवानामानन्दाः।

स एक इन्द्रंस्याऽऽन्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽनुन्दाः।

स एको बृहस्पर्तरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं बृहस्पर्तरानन्दाः।

स एकः प्रजापतेंरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं प्रजापतेंरानन्दाः।

स एको ब्रह्मणं आन्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकंः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राण-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्दमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। तदप्येष श्लोको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुर्तश्चनेति। एतः ह वावं न तपति। किमहः साधं नाक्रवम्। किमहं पापमकरंविमृति। स य एवं विद्वानेते आत्मांनः स्पृणुते। उभे ह्यंवैष् एते आत्मांनः स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥९॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

# ॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रुणं पितंरुमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मिति। तस्मां एतत्प्रोंवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमिति। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेति। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अत्राद्धेव खिल्वमानि भूतानि जायंन्ते। अत्रेन जातानि जीवंन्ति। अत्रं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वर्रुणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। तर् होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वर्रुणं पितंरमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। तश्होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खल्विमानि भूतांनि

जायन्ते। मनसा जातानि जीवन्ति। मनः प्रयन्त्यभि संविंशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वर्रणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। संतपोऽतप्यत। सं तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना्ष्येव खिलव्मानि भूतानि जायंन्ते। विज्ञानेन जातानि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तिद्वज्ञायं। पुनर्वे वर्षणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आनन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्येव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। आनन्देन जातांनि जीवंन्ति। आनन्दं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। सैषा भाँग्वी वांरुणी विद्या। पुर्मे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भेवति। महान्भेवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीत्र्या॥६॥

अत्रुं न निन्द्यात्। तद्भृतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तद्देतदन्नमन्ने प्रति-ष्ठितम्। स य पुतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पृशुभिन्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रुं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अपम्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठित्ं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। मृहान्भविति प्रजयां पृशुभिन्नह्मवर्चसेन। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्वृतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य पृतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंन्नं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वै मुखतों ५ राद्धम्। मुखतो ५ समा अंत्र १ राध्यते। एतद्वे मध्यतों-<u>ऽन्नर्श्राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्नर्श्राध्यते। एतद्वा अन्तर्तोऽन्नर</u>्श राद्धम्। अन्ततोऽस्मा अन्नर राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्रांणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिंति पादयोः। विमुक्तिरिंति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नंक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रति-ष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवा-भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहा-भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्ते उस्मै कामाः। तद्बह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्बह्मणः

परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकंः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ लोकान्कामात्री कामरूप्यंनुसश्चरन्। एतथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादों(२)ऽहमन्नादों(२)ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृदह इश्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं

वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्मि। अहं विश्वं भुवनमभ्यंभवाम्। स्वर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥१०॥ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि

देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३)

नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



# ॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

### ॥अम्भस्य पारे॥

अम्भस्य पारे भुवनस्य मध्ये नाकस्य पृष्ठे महितो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५ षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद॰ सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवंं मृहीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेर्जसा भ्राजंसा च। यमन्तः संमुद्रे कुवयो वर्यन्ति यद्क्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोर्येन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्युशू 🕺 विवेश भूतानिं चराचुराणि॥ अर्तः परं नान्यदणीयस॰ हि परौत्परं यन्महितो महान्तम्। यदेकमव्यक्तमनेन्तरूपं विश्वं पुराणं तमेसः परेस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तद् सृत्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं कंवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा जिज्ञिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मुंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चं सर्वृशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवेः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवेः॥ नैनंमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशः॥२॥

न सन्दर्शे तिष्ठित् रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यित् कश्चनैनम्ं। हृदा मंनीषा मनंसाऽभिक्नृंष्तो य एंनं विदुरमृंतास्ते भविन्त॥ अन्र्यः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुः खाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निदर सं च विचैकर् स ओतः प्रोतंश्च विभः प्रजासं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थवी नाम निहितं गृहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जिनिता स विधाता धामांनि वेद भुवनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्येरंयन्त। पिर् द्यावांपृथिवी यन्ति सद्यः पिरं लोकान् पिर् दिशः पिर् सुवं। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानिं पुरीत्यं सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः

प्रथम् जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पतिमद्भुंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषम्। उद्दीप्यस्व जातवेदोऽपघ्नत्रिर्ऋतिं ममं॥४॥

पृशू श्र्श्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हि सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जर्गत्। अविभ्रदग्न आर्गहि श्रिया मा परिपातय।

### ॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वऋतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चऋतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विदाहें महासेनायं धीमहि। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विदाहें सुवर्णपृक्षायं धीमहि। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विदाहें हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विदाहें वासुदेवायं धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जनुखायं विदाहें तीक्ष्णदुङ्ष्ट्रायं धीमहि॥६॥

तन्नों नारसि १ हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्यहें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्यहें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्यहें कन्यकुमारि धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

## ॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरमा देवी शृतमूला शृताङ्कुरा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुं:स्वप्ननाशनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

प्वानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रंण शतेनं च। या शतेनं प्रत्नोषिं सहस्रंण विरोहंसि। तस्याँस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां वयम्। अश्वंत्रान्ते रंथकान्ते विष्णुकाँन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारंयिष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

### ॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिकें ब्रह्मंदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमत्रिता। मृत्तिकें देहिं मे पुष्टिं त्वियि संवैं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सर्वं तन्मे निंणुंद मृत्तिके। तयां हुतेनं पापेन गच्छामि पंरमां गतिम्।

#### ॥ रात्रुजयमन्त्राः ॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृधि। मघंवन्छुग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुंमा स्वजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचीं वेन आवः।

सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः स्तश्च योनिमसंतश्च विवेः। स्योना पृंथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सप्रथाः। गृन्धद्वारां दुंराधर्षां नित्यपुंष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रींमें भूजत्। अलक्ष्मींमें नृश्यत्। विष्णुंमुखा वै देवाश्छन्दोंभिरिमाँ श्लोकानंनपज्य्यम्भ्यंजयन्। मृहा स् इन्द्रो वर्ज्ञबाहुः षोड्डशी शर्म यच्छत्॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं।
सोमान् इं स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कृक्षीवन्तं य औशिजम्।
शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तिस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं
पिवत्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतािने। तेनं पिवत्रेण शुद्धेनं
पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सगंणो म्रुद्धिः
सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। जिहि शत्रूर् रप् मृधों नुद्स्वाथाभयं
कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप् ओष्धयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै

भूयासुर्योऽस्मान् द्वेष्टि यं चे वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मेयो भुवस्ता नं ऊर्जे देधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः।

### ॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। युन्मयां भुक्तम्सार्थूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनंसा वाचा कर्मणा वा दुंष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पितिः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽफ्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्यें नमोऽज्यः॥१२॥

यद्पां क्रूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंती-पानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहात्। तन्नो वरुणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शंतु। सोऽहमंपापो विरजो निर्मुक्तो मुंक्तिकृत्लिषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चाफ्सु वरुणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्वि स्तोमर्थ सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभींद्वात्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्णवः॥१३॥ विद्युद्धिश्वंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकल्प-यत्। दिवं च पृथिवीं चान्तिरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तिरिक्षे विरोदसी। इमाइस्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वरुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावापृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

सुमुद्रादंर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणि

स नः सुवः सर्शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिरहमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूणहा गुंरुत्त्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमार रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराँः। आक्रान्थ्समुद्रः प्रथमे विधमं जनयन्त्रजा भुवनस्य राजाँ। वृषां प्रवित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुंः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

# ॥दुगासूक्तम्।

जातवेदसे सुनवाम् सोमंमरातीयतो निर्जहाति वेदः। स नेः पर्षदिति दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं केर्मफुलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवी॰ शरंणमहं प्रपंद्ये सुतरंसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो

अस्मान्थ्स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुंरितातिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानौंऽस्मार्क बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजितः सहंमानमग्निम्ग्रः हंवेम परमाथ्सधस्थाँत्। स नः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्देवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सनाच होता नव्यंश्च सिंध्से। स्वाश्चाँग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषिक्तं तवेंन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकंस्य पृष्ठम्भि सुंवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥ ॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्रये पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवरत्रं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरत्रमोम्॥१७॥

भूरग्नयें पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरग्न ओम्॥१८॥

————[४] भूरम्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय

**-**[५]

-[७]

च महते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं महते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं महते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्महरोम्॥१९॥

# ॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतक्रंतो स्वाहा॥२०॥

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवंसो स्वाहाँ॥२१॥

### ॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृषभो विश्वरूपश्छन्दाँभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता शिक्यः पुरोवाचोपनिषदिन्द्रौं ज्येष्ठ इन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥ **-**[८]

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंद्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

**-**[१०]

#### ॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः सृत्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तर्पा दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तर्पा यज्ञं तर्पा भूर्भुवः सुवर्ब्रह्मैतदुर्पांस्यैतत्तर्पः॥२४॥

॥विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिंष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्महतो महीयानात्मा गुहांयां निहिंतोऽस्य जन्तोः।

तमंत्रतुं पश्यित वीतशोको धातुः प्रसादौन्मिह्मानंमीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मौथ्मप्तार्चिषः स्मिधः सप्त जि्ह्वाः। स्प्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशयां निहिताः सप्त स्प्ताः। अतः समुद्रा गि्रयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसौच् येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तग्तमा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिविप्राणां मिह्षो मृगाणाम्। श्येनो गृप्राणाः स्विधितिर्वनानाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्रकृष्णां बह्धां प्रजां जनयन्तीः सरूपाम्। अजो ह्येको जुषमाणाऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभौगामजौंऽन्यः॥२६॥ घृतं मिंमिक्षिरे घृतमंस्य योनिर्घृते श्रितो घृतमुंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ विश्व हृव्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदारदुपा शुना समंमृतत्वमानट्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्तिं जिह्वा देवानां मृत्तंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृते नास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोंभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ् स्यमानं चतुः शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चत्वार् शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तां सो अस्य। त्रिधां बद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्या आविवेश॥२७॥

ह॰सः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।

नृषद्वंरसदंतसद्योमसदजा गोजा ऋंतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्।

त्रिधां हितं पणिर्मिर्गृह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक्ष् सूर्य एकं जजान वेनादेकई स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिर्ण्यगर्भं पंश्यत जायंमान्ध् स नों देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापंरमस्ति किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायोंऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येक्स्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्ं। न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेंनैक अमृतत्वमानशुः।

परेण नाकं निहितं गुहायां विभाजंते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्त्यांसयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परान्तकाले परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वै। दुहुं

**-**[१२]

विपापं प्रमेषमभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तृत्रापि दहं गृगनं विशोक् स्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसित्व्यम्। यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः। तस्यं प्रकृतिंठीन्स्य यः परंः स महेश्वरः॥२८॥

......

#### ॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हरिम्। विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपंजीवति। पितुं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वर्ष् शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायणः परः। यचं किश्चित्रंगथ्मर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्बहिश्चं तथ्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनंन्तमव्यंयं कृषि संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पृद्मको्श प्रंतीकाृश् हृदयं चाप्यथोम्'खम्। अथो निष्ठ्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपिर तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यांऽऽयत्नं महत्। सन्तंतर शिलाभिंस्तुलम्बंत्याकोश्यसित्रंभम्। तस्यान्ते सुष्रिर सूक्ष्मं तस्मिन्थ्युवं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानं-ग्निर्विश्वार्चिवृश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजुरः कृषिः। तिर्युगूर्ध्वमधः शायी र्ष्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमा-पादतलमस्तंकः। तस्य मध्ये विह्निशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठेखेव भास्वंग। नीवार्शूकंवत्तन्वी पीता भौस्वत्यणूपंमा। तस्यौः शिखाया मध्ये प्रमौत्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हिर्ः सेन्द्रः सोऽक्षंरः पर्मः स्व्राट्॥३०॥ नगुगुणः स्थिते व्यवस्थित्युव्वारि च॥————[१३]

### ॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्द्या मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽचिंदींप्यते तानि सामानि स साम्रां मण्डल् स साम्रां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽचिंषि पुरुषस्तानि यजूर्षेष स यजुंषा मण्डल् स यजुंषां लोकः सेषा त्रय्येवं विद्या तपिति य एषोंऽन्तरादित्ये हिंर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

### ॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलुं यश्श्वक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनीं मन्युर्मनुर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वंयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्य॰ सलोकतामाप्रोत्येतासांमेव देवतांना॰ सायुंज्य॰ सार्षिता॰

| Γ: | प्रश्नः | _ | महानारायणोपनिषत् | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |  |
|----|---------|---|------------------|------------|-----------|--|
|----|---------|---|------------------|------------|-----------|--|

दशम

-[१५]

समानलोकतांमाप्नोति य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥३२॥

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्यालिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। हिरण्यलिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। दिव्याय नमः। दिव्यलिङ्गाय नमः। भवाय नमः। भवलिङ्गाय नमः। शर्वाय नमः। शर्वलिङ्गाय नमः। शिवाय नमः। शिवलिङ्गाय नमः। श्रिवाय नमः। ज्वललिङ्गाय नमः। ज्वललिङ्गाय नमः। आत्माय नमः। आत्मलिङ्गाय नमः। परमाय नमः। परमाय नमः। परमिलिङ्गाय नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्त्रं पवित्रम्॥३३॥

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सद्योजातं प्रंपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नातिं भवे भवस्व माम्। भवोद्भंवाय नर्मः॥३४॥

<u>-</u>[१७]

-[१६]

### ॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमौ ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मृनोन्मनाय नमः॥३५॥

| दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् (तैत्तिरीय आरण्यकम्)  | 629                    |  |  |  |  |  |
|---|------------------------|--|--|--|--|--|
| ॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः ॥  |                        |  |  |  |  |  |
| अघोरैभ्योऽथ् घोरैभ्यो घोर्घोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वृशर्वेभ्यो<br>नर्मस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥           |                        |  |  |  |  |  |
| ~ <u>~ _</u>  | [१९]                   |  |  |  |  |  |
| ॥ प्राग्वऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः ॥   |                        |  |  |  |  |  |
| तत्पुरुंषाय विद्महें महादेवायं धीमहि। तन्नों<br>प्रचोदयाँत्॥३७॥   | रुद्रः                 |  |  |  |  |  |
| - `   | [२०]                   |  |  |  |  |  |
| ॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः ॥  |                        |  |  |  |  |  |
| ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-<br>ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥ |                        |  |  |  |  |  |
| [२१]<br>॥ नमस्कारमन्त्राः ॥   |                        |  |  |  |  |  |
|   |                        |  |  |  |  |  |
| नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यप  | ातये-                  |  |  |  |  |  |
| नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यप<br>ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥                    | ातये-                  |  |  |  |  |  |
| ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥<br>———[  | [२२]                   |  |  |  |  |  |
| ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥  | [२२]                   |  |  |  |  |  |
| ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥<br>———[  | [२२]                   |  |  |  |  |  |
| ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥ ———————————————————————————————————                                    | [२२]<br>पाक्षं<br>[२३] |  |  |  |  |  |

| नमो नमः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बंहुधा जातं जायंमानं च यत्।   |  |  |  |  |  |
|---|--|--|--|--|--|
| सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥                  |  |  |  |  |  |
| [88]  |  |  |  |  |  |
| कद्रुद्राय प्रचेतसे मीदुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम १ हृदे।  |  |  |  |  |  |
| सर्वो होष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥                    |  |  |  |  |  |
| [24]  |  |  |  |  |  |
| ॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥           |  |  |  |  |  |
| यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवणी भवति प्रत्येवास्याहुतय-            |  |  |  |  |  |
| स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥                                |  |  |  |  |  |
| [36]  |  |  |  |  |  |
| कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥<br>————[२७]                          |  |  |  |  |  |
| ॥ भूदेवताकमन्त्रः ॥   |  |  |  |  |  |
| अदितिर्देवा गंन्थर्वा मंनुष्यौः पितरोऽसुरास्तेषार् सर्वभूतानाः  |  |  |  |  |  |
| माता मेदिनी महता मही सांवित्री गांयुत्री जगंत्युवी पृथ्वी बहुला |  |  |  |  |  |
| विश्वां भूता कंतुमा का या सा सुत्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥       |  |  |  |  |  |
| [96]  |  |  |  |  |  |
| ॥ सर्वदेवता आपः॥  |  |  |  |  |  |
| आपो वा इद॰ सर्वं विश्वां भूतान्यापः प्राणा वा                   |  |  |  |  |  |
| आपंः पुशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापंः सुम्राडापो विराडापंः             |  |  |  |  |  |

630

दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

**-**[२९]

स्वराडापश्छन्दाइस्यापो ज्योतीइष्यापो यजूइष्यापेः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूभुंवः सुवराप ओम्॥४६॥

#### ॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पितिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्मभौज्यं यद्वां दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहाँ॥४७॥

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृते्भ्यः। पापेभ्यों रक्षुन्ताम्। यदहा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्ञा। अहस्तदेवलुम्पतु। यत्किं चे दुरितं मयि। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षुन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

# ॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं

छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

-[३३]

#### ॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये सरस्वंति॥५१॥

[38]

ओजोंऽस् सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम् नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमसि सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांहयामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निमुंखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय ए रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्ष्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विश्शत्यक्षरा त्रिपदां पद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग् ओं भूः। ओं भुवः। ओश् सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओश् सृत्यम्। ओं तथ्संवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूभुवः सुवरोम्॥५२॥

[३५]

### ॥ गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनुज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चस्ं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

-[३ξ]

#### ॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुवरोम्॥५४॥

### ॥ त्रिसूपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावंध्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्रियः सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरिन्त् सिन्धंवः। माध्वींर्नः स्नत्वोषंधीः।
मधु नक्तंमुतोषिस् मधुंमृत्पार्थिव रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता।
मधुंमान्नो वनस्पित्मधुंमा अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु
नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा
पुते प्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोम्ं प्राप्नुंवन्ति।
आसहस्रात्पिङ्कः पुनंन्ति। ओम्॥५६॥

₹**९**]

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पदवीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्विधितिर्वनानाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। ह॰सः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदतिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योमसदजा गोजा ऋतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा समिथ्स्रंवन्ति सरितो न धेनाः। अन्तर्हृदा मनेसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिरण्ययों वेतसो मध्यं आसाम्। तस्मिन्ध्सुपूर्णो मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः। तस्यांसते हरंयः सप्ततीरें स्वधां दुहांना अमृतंस्य धाराँम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्ह्त्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राँह्मणास्त्रिस्पर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनन्ति। ओम्॥५७॥

### ॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँद्विश्वाची भद्रा सुमनस्यमांना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भवति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टेश्चित्रं विंन्दते वसु सा नो जुषस्व द्रविंणो न मेधे॥५८॥

मेथां मु इन्द्रों ददातु मेथां देवी सर्रस्वती। मेथां में अश्विनांवुभावार्धतां पुष्कंरस्रजा। अपस्रासं च या मेधा गन्धर्वेषुं च यन्मनंः। दैवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता्ड्

स्वाहाँ॥५९॥

**-**[४२]

आ मां मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगुम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा मां मेधा सुप्रतींका जुषन्ताम्॥६०॥

मयिं मेधां मयिं पूजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मयिं मेधां मयिं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं देधातु मयिं मेधां मयिं प्रजां मयि सूर्यो

भ्राजो दधातु॥६१॥

-[88]

#### ॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

| अपैतु मृत्युर्मृतंं न् अ | ार्गन्वैवस्वतो नो | अभेयं कृणोतु। पर्णं |
|--------------------------|-------------------|---------------------|
| वनस्पतेरिवाभिनः शीयता १  |                   |                     |
|                          |                   | [X&]                |

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

वार्तं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स तो मत्योस्रायतां पाल्यः हेसो ज्योगनीवा जगर्मशीमहि॥६४॥

स नो मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसो ज्योग्जीवा जुरामंशीमहि॥६४॥

अमुत्र भूयादध यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरमुंश्चः। प्रत्यौहतामुश्विनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचीभिः॥६५॥

हरि हरेन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सर्रूपमनुंमेदमागादयंनुं मा विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥

शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौंर्लोकयोर्-ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीमां मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

| : | प्रश्नः | _ | महानारायणोपनिषत् | (तैत्तिरीय | आरण्यकम्) |  |
|---|---------|---|------------------|------------|-----------|--|
|---|---------|---|------------------|------------|-----------|--|

दशम

·[५३]

-[५५]

मा नो महान्तंमुत मा नो अर्भुकं मा न उक्षंन्तमुत मा न उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र

रीरिषः॥६९॥

मा नंस्तोके तनंये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नों रुद्र भामितोऽवंधीर्हविष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः ॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्॥७१॥

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

### ॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पृष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमीव बन्धंनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

-[५८]

-[५९]

### ॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। पिृतृकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अन्यकृंत्स्यैनंसोऽव-यजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। यद्विषा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यद्विद्वारस्श्चाविद्वारस्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यद्विद्वारस्श्चाविद्वारस्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमंसि स्वाहा॥७६॥

## ॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वों देवाश्चकुम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नों अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

### ॥कामोऽकारुषीत्-मन्युरकारुषीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षींन्नमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

> ६१] .

मन्युरकार्षींन्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

### ॥विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसार सपिष्टान् गन्धार मम चित्ते रमंन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपानर सर्वेषाइ श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददातु स्वाहा॥८०॥

[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्द्रितं मीय स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुत्तत्पगः। गोस्तेयर सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्तिर

विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां॥८२॥

शमयंन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूंयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्वक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूंयास् स्वाहाँ। त्वक्रमंमा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्रायवोऽस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूंयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्खशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूंयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं

गात<u>र</u>ह -[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। अव्यक्तभावेरहङ्कार्रेज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास् स्वाहां। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा

भूयास् इ स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। क्षोत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामुलुक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मांन इस्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा मे शुद्धन्तां ज्योतिर्हं विरज्ञां विपाप्मा भूयास् इस्वाहाँ॥८३॥
[६६]

# ॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुविक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतिक्षतंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्ट्कृते स्वाहाँ ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अज्ञ्राः स्वाहाँ। ओष्धिवनस्पृतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सर्वेभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जर्गति यच् चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चुन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये

स्वाहां॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यंः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः। मनुष्येभयो हन्तां। प्रजापंतये स्वाहां। परमेष्ठिने स्वाहां। यथा कूंपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु धान्य सहस्रंधारुमक्षितम्। पर्नधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति दिवानक्तं बलिमिच्छन्ती वितुदंस्य प्रेर्प्याः। तेभ्यों बलिं पुंष्टिकामों हरामि मयि पुष्टिं पुष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥

ओं तद्बह्म। ओं तद्वायुः। ओं तदात्मा। ओं तथ्सत्यम्। ओं तथ्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां

विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्वः रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापतिः। त्वं तंदाप आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

-[६८]

#### ॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽ-मृतंं जुहोमि। श्रद्धायांं व्याने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायांमुदाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायार्ं समाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहाँ॥

-[७०]

श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। व्यानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमुदाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायार् समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृत्त्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

# ॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविंश्यामृत है हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायांमपाने निविंश्यामृत है हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निविंश्यामृत है हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मुदाने निविंश्यामृत है हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धाया समाने निविंश्यामृत है हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

### ॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥ —————[७१]

-[७२]

**-**[७५]

-[૭૬]

## ॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः ॥

वाङ्कं आसन्। नुसोः प्राणः। अक्ष्योश्चर्धुः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सह नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः॥९२॥

## ॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः ॥

#### ॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-युस्व॥९३॥ ———————————————[७४]

#### ॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

## ॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परिं। त्वं वनेंभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥

## ॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवेनं में सन्तिष्ठस्व स्योनेनं में सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम उपं ते नम उपं ते नमः॥९६॥

**-**[ッッ]

#### ॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं पर सत्य सत्येन न सुवर्गा लोका च्यंवन्ते कदाचन सता १ हि सत्यं तस्माँ ध्सत्ये रंमन्ते ० तप इति तपो नानशंनात्परं यद्धि परं तपस्तद्वर्धर्षं तद्दराधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते ० दम् इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते ० शम् इत्यरंण्ये मुनयुस्तस्माच्छमे रमन्ते ० दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशर्सन्ति दानान्नाति दुष्करुं तस्माद्दाने रंमन्ते ० धर्म इति धर्मेण सर्विमिदं परिंगृहीतं धर्मान्नातिं दुष्करं तस्मौद्धर्मे रंमन्ते ० प्रजन इति भूया रेसुस्तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजनने रमन्तेऽग्नय ० इत्याह तस्मादग्नय आधातव्या अग्निहोत्रमित्याह तस्मादग्रिहोत्रे रंमन्ते ० यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माँ धुज्ञे रंमन्ते ० मानसमितिं विद्वा १ सस्तस्माँ द्विद्वा १ सं एव मानसे रंमन्ते ० न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परार्शसे न्यांस एवात्यरेचयद्य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥९७॥

#### ॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुंणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ० सत्येनं वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोंचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माध्यत्यं पंरमं वदन्ति ० तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दन् तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारातीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः पर्मं वदन्ति दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमः परमं वर्दन्ति ० शमेन शान्ताः शिवमाचरेन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सुर्वं प्रतिष्ठितुं तस्माच्छमः परमं वर्दन्ति ० दानं यज्ञानां वर्रूथं दक्षिणा लोके दातार रे सर्वभूतान्युंपजीवन्ति दानेनारातीरपानुदन्त दानेन द्विषुन्तो मित्रा भंवन्ति दाने सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं परमं वदंन्ति ० धर्मो विश्वंस्य जर्गतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं परमं वर्दन्ति ० प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तन्तुं तन्वानः पिंतृणामंनृणो भवंति तदेव तस्यानृंणं तस्मांत् प्रजनंनं परमं वर्दन्त्यग्नयो वै त्रयीं विद्या ० देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रंथन्तरमन्वाहार्यपर्चनं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः साम

सुवर्गी लोको बृहत्तस्मादग्नीन्परमं वर्दन्त्यग्निहोत्र ।

प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सुहुतं यज्ञऋतूनां प्रायण सुवर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पंरमं वदन्ति ० यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवं गता यज्ञेनासुंरानपांनुदन्त युज्ञेनं द्विषुन्तो मित्रा भेवन्ति युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितुं तस्मौद्युज्ञं पेरुमं वदेन्ति ० मानुसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनेसा साधु पंश्यति मानसा ऋषयः प्रजा अंसृजन्त मानुसे सुवै प्रतिष्ठितुं तस्मौन्मानुसं पर्म वदंन्ति ० न्यास इत्याहुंर्मनीषिणों ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावांदित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ० याभिरादित्यस्तपंति र्शिमभिस्ताभिः पुर्जन्यों वर्षित पुर्जन्येनौषिधवनस्पृतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपुस्तपंसा श्रुद्धा श्रुद्धयो मेधा मेधया मनीषा मनीषया मनो मनसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इस्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनाऽऽत्मानं वेदयति तस्मांदन्नं ददन्थ्सर्वांण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति ० भूतानौं प्राणिर्मनो मनंसश्च विज्ञानं विज्ञानादानुन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन् सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्म च भूत ई स भूव्यं जिज्ञासक्रुप्त ऋंतुजा रियेष्ठा ० श्रुद्धा स्त्यो महंस्वान्त्पसो विरेष्ठाङ्कात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मांच्यासमेषां तपंसामितिरिक्तमाहुंवंसुरण्वां विभूरंसि प्राणे त्वमिसं सन्धाता ० ब्रह्मंन त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृंहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ० महस् ओमित्यात्मानं युञ्जीतैतद्दै महोप्निषंदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाग्नोति तस्मांद्रह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९८॥

#### ॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि बर्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम आज्यं मृन्युः पृश्चस्तपोऽग्निर्दमः शमियता दक्षिणा वाग्घोता प्राण उद्गता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ० श्रोत्रमग्नीद्यावृद्धियते सा दीक्षा यदश्जाति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमते तदुंपसदो यथ्मश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठते च स प्रवग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याहृंतिराहृतिर्यदंस्य ० विज्ञानं तश्चहोति यथ्मायं प्रातरंत्ति तथ्ममिधं यत्प्रातर्मध्यं दिनः सायं च तानि सर्वनानि ये अहोरात्रे ते दर्शपूर्णमासौ यैऽर्धमासाश्च मासांश्च ते चातुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्मराश्चं परिवथ्मराश्च

| दशमः | प्रश्नः | _ | महानारायणोपनिषत् | (तैतिरीय | आरण्यकम् | ) |  | 64 |
|------|---------|---|------------------|----------|----------|---|--|----|
|      |         |   |                  |          |          |   |  |    |

| जंरामर्यमग्निहोत्र सत्रं य एवं विद्वानुंद्गयंने प्रमीयंते देवानामेव<br>मंहिमानं गत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ ० यो दंक्षिणे |             |               |         | ्र एतब्सत्र |              |        |            |        |
|--|-------------|---------------|---------|-------------|--------------|--------|------------|--------|
|  | ज्ञंरामर्थम | ग्रिहोत्र ॰ ३ | मत्रं य | एवं विद्वान | दगर्यने प्रम | रीयंते | -<br>१ देव | ानामेव |
| महिमान गत्वाऽऽदित्यस्य सायुज्य गच्छत्यथ ० यो दक्षिण  |             |               |         |             |              |        |            |        |
| `  | महिमान      | गुत्वाऽऽदि    | रत्यस्य | सायुज्य     | गच्छ्त्यथ्   | 0      | यो         | दक्षिण |

प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गुत्वा चुन्द्रमंसः सायुंज्य ४ -सलोकर्तामाप्नोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्महिमानौँ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्मांद्वह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्मांद्वह्मणों

महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।

तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

# ॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

## ॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्कप्तं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आय-ध्यम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्ध्यम्भान्। ज्योति-ध्याङ्क्तंजंक्त्वानातपृङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचंमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दंर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायां सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽन्नदो मोदंः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशंनः सःशांन्तः शान्तः। आभवंन्य्र-भवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत्रः सः स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितप्त्तपंस्वत्। स्विता प्रसिवता दीप्ता दीपयन्दीप्यमानः। ज्वलंञ्चिलता तपंन्वितपंन्थ्सन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भूः शुम्भमानो वामः। स्वता सुन्वती प्रस्ता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तुपयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽ-नुंमन्ताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः। आसादयंत्रिषादयँन्थ्सर्सादंनः सर्सन्नः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भवंः। पवित्रं पवियष्यन्यूतो मेर्ध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्सहीयानोजंस्वान्थ्सहंमानः। जयंत्रभिजयंन्थ्सुद्रविंणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥

अरुणोंऽरुणरंजाः पुण्डरीको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वं-मानोऽन्नंवात्रसंवानिरांवान्। सर्वोषधः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिंपिविष्टकाः। सरिस्रगः सुशेरंवः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवंत्रतिद्रवन्। त्वरङ्स्त्वरमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिरात्रश्चंतुरात्रः। अग्निरुऋतुः ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

भूरियं च पृथिवीं च मां चे। त्रीइश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। भुवो वायुं चान्तरिक्षं च मां चे। त्रीङ्श्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद। स्वरादित्यं च दिवं च मां चे। त्री । श्री श्री लोकान्थ्संवथ्सरं चे। प्रजापितिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्रीइश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद॥५॥

त्वमेव त्वां वैत्थ् योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूंनं यदु तेऽतिंरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽतिं च येनाऽऽयुरावृंक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्वावुदेतिं। तपंसो जातमिनभृष्टमोजः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावद्देवाः। यावदसांति सूर्यः। यावद्ततापि ब्रह्मं॥६॥

[]

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदावथ्सरोऽसीद्वथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपरुपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोंऽसि स्वर्गो लोकः। यस्याँ दिशि महीयंसे। ततो नो मह् आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवाहि। सर्वा दिशोऽनुविवाहि। सर्वा दिशोऽनुसंवाहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्थ्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिंक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं में यच्छ। अहा प्रसौरय। रात्र्या समेच। रात्र्या प्रसौरय। अहा समेच। कामुं प्रसारय। कामु समेच॥९॥

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्। ब्रह्मं क्षत्रम्। यशों महत्। सत्यं तपो नामं। रूपम्मृतम्। चक्षुः श्रोत्रम्। मन् आयुंः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यर्जमानाय लोकम्। ऊर्जं पुष्टिं ददंदुभ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृहस्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिंपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ५ंहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहाँ विराज्ञे स्वाहाँ। सुम्राज्ञे स्वाहाँ स्वुराज्ञे स्वाहाँ। शूर्षायु स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चुन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। सुरूसर्पाय स्वाहां कुल्याणांयु स्वाहाँ। अर्जुनायु स्वाहाँ॥१२॥

७।

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्थों अर्षित। अहिंर्ह जीर्णामितिसर्पित् त्वचम्ँ। अत्यो न क्रीडंन्नसर्द्वृषा हिरेः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवेँ त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिर्मृत्यवेँ त्वा। अपंमृत्युमपृक्षुधम्ँ। अपेतः शप्थं जिहा। अधां नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्ँ॥१३॥

ये ते सहस्रंमयुत्ं पाशाः। मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवंयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मध्मतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि। मन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बुधिर आकन्दियतरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुः। असावेहिं। अपादाशो मनः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामांस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्वृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥

प्राणो हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥

मनो हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रे श्रिताः। श्रोत्र हृदंये। हृदंयं मिया अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदंये। हृदंयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर हदये। हृदयं मिया अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। ओषधिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

मे बलैं श्रितः। बल॰ हृदंये। हृदंयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

लोमानि हृदये। हृदयं मिया अहममृतै। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रो

मूर्धा हृदये। हृदयं मियं। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। ईशानो मे मन्यौ श्रितः। मन्युर्ह्रदेये। हृदेयं मियं। अहमुमृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। आत्मा मं आत्मनिं श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदेये। हृदेयं मिये। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनेर्म आत्मा पुनरायुरागाँत्। पुनंः प्राणः पुनराकूंतमागाँत्। वैश्वानरो रश्मिभिर्वावृधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतस्य गोपाः॥२२॥

प्रजापंतिर्देवानं सृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यं-द्यत्। यद्यद्यत्। तस्मौद्विद्यत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सेषा मीमार्साऽग्निहोत्र एव संम्पन्ना। अथी आहः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्विति। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मिति। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मिति। यक्ष्यमांणो वृष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवते पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्याम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित् इतिं। प्रोरंज्सीतिं। कस्तद्यत्परोरंजा इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषौंऽवींग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सृत्य इतिं। किं तथ्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥

कस्मिन्नु तप् इतिं। बल् इतिं। किं तद्वल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इतिं माऽऽचार्योंऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्यांम्पातिः। यद्वे ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयांन्भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्मांथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो ह् वै सांवित्रं विदुषां

सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्यं दधाति। अनुं ह् वा अंस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शो दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंतर सुता सुन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्नों मुहूर्ताः। एष रात्रैंः॥२९॥

अथ् यदाहं। पुवित्रं पवियुष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणी-ऽरुणरंजा इति। एष एव तत्। एष ह्येव तैंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एष एव तत्। एष ह्येव ते यंज्ञकतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ् यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। पुष पुव तत्। पुष ह्यंव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होंचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। नास्यामुष्मिं ह्योकेऽन्नं क्षीयत् इति। विज्ञहंद्ध वै पाप्मानमेति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। नास्यामुष्मिं ह्योकेऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहींना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हुर्सो हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वृगं लोकिमंयाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वृगं लोकमेंति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य पुवं वेदं। देवभागो हं श्रौत्रुषः। सावित्रं विदां चंकार। तर हु वागदृंश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होंवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहर सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गुह्यं महो बिभ्रदितिं। पुतावंति ह गौत्मः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के च सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोंकाः। स यो ह वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पृदङ् श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पृतद्वे सांवित्रस्याष्टाक्षरं पृदक्ष श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतद्वाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरे पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदः। यस्तं न वेद किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इति। न ह वा पृतस्यूर्चा न यज्ञुषा न साम्राऽथौंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवचुक्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति।

विजहृद्धिश्वां भूतानिं सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह् वै पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहृन्विश्वां भूतानिं सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह् वै वाँर्ष्णेयः। आदित्येनं समाजंगाम। त॰ होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियिष्णुरमृताथ्सम्भंत इतिं। एष वाव स

अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारिययणुरमृताथ्सम्भूत इति। एष वाव स सावित्रः। य एष तपित। एहि मां विद्धि। इति हैवैनं तद्वाच॥३७॥

ड्यं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो हु वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषाङ्श्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्यैंष्टापूर्तं धंयन्ति। अथु यो न वेदं॥३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मध्रं कुर्वन्ति। धर्यन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोंरात्रेष्वार्तिमार्च्छति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यांहोरात्राणां नाम-धेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंत सुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपर-पक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेतिं। एतेंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। पवित्रं पविष्ट्यन्थ्सहं-स्वान्थ्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इति। एतेऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञकतूनां चेर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नामधेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एतेंऽनुवाका यंज्ञकतूनां चेर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नामधेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छंति। य पृवं वेदं। यो ह वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। इदानीं तदानीमितिं। पृते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य पृवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमित्तं। पृवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमित्ति। स पृतेषांमेव संलोकता स्यायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयति। य पृवं वेदं॥४२॥

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयम्हम्-

हैव धूमतांन्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजांनाति। अथु यो हैवैतमग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद।

अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजांनाति। एष उं वेवैन् तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इद स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरितिं। तानिहानेवं विदुषः। अमुष्मिं लोके शेंव्धिं धंयन्ति। धीत १ हैव स शेंव्धिमन् परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि १ सांवित्रं वेदं॥४४॥
तस्यं हैवाहोंरात्राणिं। अमुष्मिं लोके शेंवधिं न धंयन्ति।

अधींत १ हैव स शेवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुंर्भिर्ब्रह्म-

चर्यमुवास। तर ह् जीर्णिड् स्थविर्र् शयानम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुर्दद्याम्। किमेनेन कुर्या

इतिं। ब्रह्मचर्यमेवेनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥
त १ ह त्रीन्गिरिर्रूणानविंज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १
हैकैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा पृते। अनुन्ता वै वेदाः। पृतद्वा पृतैस्विभिरायुंर्भिरन्वंवोचथाः। अथं तु इतंरुदनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविविद्येति॥४६॥

तस्मैं हैतमग्नि सांवित्रमुंवाच। त सस् विदित्वा। अमृतों

भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यावंन्तर हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जंयित। तावंन्तं लोकं जंयित। य एवं वेदं। अग्नेवां एतानिं नामधेयांनि। अग्नेरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोवां एतानिं नामधेयांनि। वायोरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानिं नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेवा एतानि नामधेयांनि। बृह्स्पतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेवा एतानि नामधेयांनि। प्रजापंतेवा एतानि नामधेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्। असावादित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्व सीव्यति। तस्मांथ्सावितः॥४९॥

# ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षिंतो-ऽस्यक्ष्य्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमृन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिरुस्बद्धुवा सींद॥२॥

तेजोऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥३॥

स्मुद्रोऽिस् तेजंसि श्रितः। अपां प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४॥ आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्र्यां विश्वंस्य जनियन्त्रः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यपस् श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्न्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिक्षंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्युग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्ध्वा सीद॥८॥

वायुरंस्यन्तरिक्षे श्रितः। दिवः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रीं विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिक्षेताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदये कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानि। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भृतृणि विश्वंस्य जनयितृणि। तानि व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१३॥

संवथ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः।

विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतरि विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे कामृदुघानिश्वंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१५॥

मासाः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतरि विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे कामदुधानिक्षंतान्। प्रजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भुर्त्यों विश्वंस्य जनयित्र्यौं। ते वामुपंदधे कामृदुष्टे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१८॥ पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नदुघों युष्मासुं।

ड्डम्न्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृत्र्यो विश्वंस्य जनयित्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१९॥

रार्डसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुधामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमसि भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२१॥

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वर शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधृतः पासि नु त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पृश्चमाः षृष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नंवमेषुं श्रयध्वम्। नृवमा देशमेषुं श्रयध्वम्। दृशमा एंकादृशेषुं श्रयध्वम्। एकादृशा द्वांदृशेषुं श्रयध्वम्। द्वादृशास्त्रंयोदृशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदृशाश्चंतुर्दृशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दृशाः पंश्चदृशेषुं श्रयध्वम्। पश्चदशाः षोडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविर्शेषुं श्रयध्वम्। विर्शेषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शोषुं श्रयध्वम्। त्रयोविर्शोषुं श्रयध्वम्। त्रयोविर्शोषुं श्रयध्वम्। चतुर्विर्शाः पंञ्चविर्शेषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोः षंञ्चिर्शेषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोः षंञ्चिर्शेषुं श्रयध्वम्। २४॥

षृद्धिर्शाः संप्तिविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तिविर्शा अष्टाविर्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविर्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविर्शा एंकान्नित्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्रिर्शाः स्निर्शेषुं श्रयध्वम्। पृक्तिर्शाः द्वानिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वानिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वानिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वानिर्शेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिरशाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमि। तन्मे समृध्यताम्। वयर् स्यांम पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहा॥२५॥————[२]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंर्धन्तु वां गिरं। सुम्नेवांजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिंः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। व्यक्ष् स्याम प्रतयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहा॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणंः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं

वीरुधां पते। त्वष्टः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वरुण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतों गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। वृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुचे रोचेमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौं प्रजनौ प्रजांयेय।

रोचमानः। अतीत्यादः स्वंराभरेहः। तस्मिन् योनौ प्रजनौ प्रजायेय। वयः स्याम् पत्रयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२८॥

सप्त तें अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्नाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निर स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र स दिशां देवं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यै

दिशों ऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशों ऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावरुंणी से दिशां देवी देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशां देवी देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशों ऽभिदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिंर्देवतां। बृह्स्पति स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिति देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। अदिति स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समध्यतु॥३१॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बृधिर आँकन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥३२॥

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिंरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गंरसिश्चन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृणा अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृह्स्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींदा ता अस्य सूदंदोहसः। सोमईं श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवा १ इहाऽऽवंह। ज्ज्ञानो वृक्तवंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहृतं विश्वतंः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं पिर्भूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हुविषः समानमित्। त्वां महो वृणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्सिमधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोतृभ्य आभर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यद्दंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङं। स उत्तरः पक्षः॥३७॥

अथ् यथ्संवाति। तदंस्य समश्चनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अंस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यजंते। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिर्रण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरींरं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिर्रण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेजंसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिःश्चं भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीयाःश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तः हु वा पुष क्ष्ययं लोकं जंयति। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोंऽनन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमंक्षय्यं लोकं जंयित। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथो यथा रथे तिष्टन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमांप्रुतः। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥४१॥

उ्शन् ह् वै वांजश्रव्सः संविवेदसं दंदौ। तस्यं ह् नचिंकेता नामं पुत्र आस। तर हं कुमारर सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु तृतीयम्। त ह परीत उवाच। मृत्यवे त्वा ददामीतिं। त ह

गौतंम कुमारमितिं। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामितिं। तं वै प्रवसंन्तं गन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर कति

स्मोर्श्यितं वागभिवंदति॥४२॥

रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रुतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति॥४३॥ प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पश्र्इस्त इतिं। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनाश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमार कति

किं प्रथमार रात्रिमाश्रा इति। प्रजां तु इति। किं द्वितीयामिति। पुशू इस्तु इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां तु

रात्रींरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

इति। नर्मस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीप्वेति। पितर्रमेव जीवंत्रयानीतिं। द्वितीयं वृणीष्वेतिं॥४५॥ इष्टापूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मै हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षीयते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयं

वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मै हैतमृग्निं

नांचिकेतम्बाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिंरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नो प्रास्यंत्। तदंस्मे नाच्छंदयत्। तिद्द्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हृंद्य्येंऽग्नौ वैंश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्यज्ञ हि। स व तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताङ् स्वायैव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दिक्षंणां प्रतिगृह्णामीति। सोंऽदक्षत् दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। दक्षंते ह् वै दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। एतर्द्धं स्म वै तिद्वद्वार्थ्सां वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिक्षंणां प्रतिगृह्णांतिगृह्णांतिगृह्णांतिगृह्णांतिगृह्णांति। तेंऽदक्षन्त दिक्षंणां प्रतिगृह्णां। दक्षंते ह् वै दिक्षंणां प्रतिगृह्णां। य एवं वेदं। प्र हान्यं द्वींनाति॥४९॥

त॰ हैतमेके पशुबन्ध पृवोत्तंरवेद्यां चिन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित पृषौंऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। पृतमृग्निं कामेन व्यर्धयेत्। स एनं कामेन व्यृद्धः। कामेन व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतम्प्रिं कामेन् समर्थयति। स एनं कामेन समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयित। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव स्त्रियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जंयित। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स पृतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। पृतामृद्धिंमृभ्रोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽभ्रिं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोबलो वार्ष्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चौत्तर्तः। एकां मध्यौ। ततो वै स सहस्रं पृश्न्य्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्न्नौप्नोति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथं हैनं प्रजापंति उर्येष्ठ्यंकामो यशस्कामः प्रजननकामः। त्रिवृतंमेव चिक्ये॥५३॥

सप्त पुरस्ताँत्। तिस्रो देक्षिणतः। सप्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्ये। ततो वै स प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्दे ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥ त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यमाप्नोति। एतां प्रजातिं प्रजायते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठ्यंकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठ्यंमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठ्यं गच्छति। यों'ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। यों'ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोर्णोत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेति। तेज्स्व्यंव यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति सुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥

वत्वाऽऽज्यस्य स्वाहात स्रुवणाप्हत्याऽऽहवनाय जुहुयात्॥५७॥
भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्धंथते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति।
पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभ्मृश्यं। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं।
चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्।
अग्नांविष्णू इतिं वसोधिरांयाः। अन्नंपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने
समिधंः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ ह्रोके देवताः। तासा १ सायुंज्य १ सलोकतांमा-प्रोति। यां द्वितीयां मुप्दधांति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासा १ सायुंज्य १ सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयां मुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥ ५९॥

अथो या अमुष्मिँ छोके देवताः। तासा स् सायुं ज्यस् सलोकतामाप्नोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादेश। य एवामी उरवेश्च वरीया स्मश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भि जंयित॥ कामचारो ह् वा अस्यो रुषुं च वरीयः सु च लोकेषुं भवति। यौं ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नांचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्ररत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारा। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवृथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरुपृक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयों हु वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

**-**[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीयकाठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कामंमग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। कामों भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरन्ति यो देहाः। पूर्वं देवा अपरेण प्राणापानौ। हुव्यवाहु स्विष्टम्॥१॥

٤٦

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञ-कृतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिन्नांन्वंविन्दत्। तिमष्टिंभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिन्नांन्वंविन्दत्। तिमष्टिंभिरन्वैच्छत्। तिमष्टिंभिरन्वेव्छत्। तिमष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः॥२॥ तमाशांऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्रांम्यसि। अहम्

स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥४॥

अग्नये कामांय स्वाहाऽऽशायै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयेँ स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥ तं कामोंऽब्रवीत्। प्रजापते कामेन वै श्राँम्यसि। अहम् वै कामोंऽस्मि। मां न यंजस्व। अथं ते सत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति। स एतम्ग्नये कामांय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यः कामोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह् वा अंस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयेँ

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्रांम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् युज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्नये कामाय पुरोडाशंमष्टाकंपालं

वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायैं चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। निरंवपत्। ब्रह्मणे च्रुम्। अनुमत्ये च्रुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् युज्ञों ऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् ह् वा अस्य युज्ञो भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य पुतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयेँ स्विष्ट्कृते स्वाहेति॥५॥
तं यज्ञौंऽब्रवीत्। प्रजापते युज्ञेन् वै श्रौम्यसि। अहम् वै

यूज्ञींऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्यो यूज्ञो भेविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। यूज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यो यूज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अंस्य यूज्ञो भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥६॥
तमापौऽब्रुवन्। प्रजापतेऽपस् वै सर्वे कामाः श्रिताः। व्यम्

तमापौऽब्रुवन्। प्रजापतेऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथु त्वियु सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंमुष्टाकंपालुं निरंवपत्। अन्द्यश्चरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे ह् वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽद्धः स्वाहां। अनुमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥७॥

तमृग्निर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बुलिश् हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बिल्मानंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सर्वाणि भूतानि बुलिश् हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमृग्नये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नये बिल्मते चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्मे सर्वाणि भूतानि बुलिमहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि ह् वा अस्मै भूतानि बुलिश् हंरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दिति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽग्नये बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविविध्ससि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सुत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्या ह् वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजति। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येन्योऽन्ं-वित्तयो नामं। आशाँ प्रथमा रक्षिति। कामौ द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्थ्यष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भवति। य एताभिरिष्टिभिर्यज्ञते। य उ चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौहीव्रां दद्यात्कर्सं चं। स्नियै चाऽऽभारर समृंद्धौ॥१०॥

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तपसर्षयः स्वरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्त्रणुंदामारांतीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव र ह्विषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम र सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रंतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं युज्ञमागौत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रुद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वंस्य भुत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ताङ् श्रुद्धा रहिवषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतंं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्मृत्य रहिविरिदं जुंषाणम्। यस्माँद्देवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मैं विधेम हिवषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तरिक्षम्।

यस्माँद्वेवा जंजिरे भुवंनं च सर्वे। तथ्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगाँत। ब्रह्माऽऽहंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्वमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मन्वियाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥ सङ्गल्पजूंतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजांनिमह वर्धयंन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्यांम। चरंणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः।

येन पूतस्तरित दुष्कृतानि। तेन प्वित्रेण शुद्धेन पूताः। अति पाप्मान्मरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्प्वित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहमानम्। चरंणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमतिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह् इ स्विष्टम्॥१४॥
—————[३]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नों लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञ-ऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अनुं

इष्टंय इत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्यं सत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्वष्टकृते स्वाहेति॥१६॥ तक्ष्मु वविद्याति। मां न यंजस्य। अर्थं ते सत्या श्रद्धा भेविद्यति।

तक्ष श्रद्धाऽब्रंबीत्। प्रजापते श्रद्धया व श्राम्यसि। अहमु व श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्या श्रद्धा भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायें चरुम्। अर्नुमत्ये चरुम्। ततो व तस्य सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अंस्य श्रद्धा भवित। अर्नु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रद्धाये स्वाहाँ। अर्नुमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तः सत्यमंब्रवीत्। प्रजापते सत्येन वै श्राम्यसि। अहमु वै सत्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यः सत्यं भंविष्यति। स्त्यायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्यः स्त्यमंभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यः ह् वा अस्य स्त्यं भंवित। अनुं स्वर्गं लोकं विंन्दित। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां स्त्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१८॥

अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकंपालं निरंवपत्।

तं मनौंऽब्रवीत्। प्रजापते मनंसा वै श्राम्यसि। अहमु वै मनौंऽस्मि। मां न यंजस्व। अथं ते सत्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमांग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यः हु वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१९॥

तं चरंणमब्रवीत्। प्रजांपते चरंणेन् वै श्रांम्यसि। अहम् वै चरंणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थं ते सृत्यं चरंणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथस्यसीतिं। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरंणाय चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरंणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यः हु वा अस्य चरंणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं हिवषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टुकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा एताः पश्चे स्वर्गस्ये लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाम्। सत्यं तृतीयाम्। मनेश्चतुर्थीम्। चरेणं पश्चमीम्। अनुं ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामचारों ऽस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवुरां दंद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियै

चाऽऽभार॰ समृद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन ई श्वप्तम्। नाभिचंरितमार्गच्छति। य एवं वेदं। यो ह वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दर्शहोतृणाम्। पृथिवी होता चतुर्होतृणाम्॥२२॥ अग्निर्होता पर्श्वहोतृणाम्। वाग्घोता षड्ढोंतृणाम्। महाहंवि्रहोतां सप्तहोतॄणाम्। पृतद्वे चतुंरहोतृणां चतुरहोतृत्वम्। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविविद्या। एतद्भेषजम्। एषा पङ्काः स्वर्गस्यं लोकस्यां असाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

सर्वमायुरिति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैति। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥
एतैरिधवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंययौ।

एतान् योऽध्यैत्यछंदिर्दर्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनपब्रवः

पुतान्योऽध्येति। अधिवादं जयित। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वरित। एतैरिप्नं चिन्वीत स्वर्गकांमः। एतैरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्न्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुंर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्कोतारम्। उपिरेष्टात्प्राश्चनं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्षेषि पत्न्यंश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रंतिग्रहाँह्योकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवमृग्निं चिनुते। र्थसंम्मितश्चेतृव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेतृव्यः। एतावान् वै रथः। यावंतपृक्षः। रथसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबुन्धेनाभिजंयति। अथों अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्यंन। स्वंरतिरात्रेणं। सर्वां ह्योकानंहीननं। अथों स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर इंस्पृणोति। आत्मा हि वरंः। एकंवि शतिर्दक्षिणा ददाति। एकवि शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाँप्रोति॥२८॥

असावादित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमाप्रोति। शतं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्या-

भिजित्यै। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वया रेसि॥२९॥ सर्वस्याऽऽप्त्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मुन्थानेतावृतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयते।

पष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया ५सि। सर्वस्याऽऽप्त्रै।

सर्वस्यावंरु छै॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतरेषु यज्ञेषुं। यो हु वै चतुरहोतॄननुसब्नं तंपीयत्व्यान्ं वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। एते वै चतुरहोतारोऽनुसव्नं तंपीयतृव्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्चीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमे्वैतित्र्र्णयते। नास्याग्निं वृश्चते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भेवति। यावेदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सम्मितम्। तेजो हिरंण्यम्। यदि हिरंण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। योंऽग्निं चिनुते॥३३॥

यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्य र सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवताना र सायुंज्यम्। सार्षिता र समानलोकतामाप्नोति। य एतमृग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथौं नाचिकेते॥ ३४॥

यचामृतं यच् मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां

देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वान्युर्धाः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावन्तः पार्धसवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययाँ। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पश्नाम्। पृथिव्यां पृष्टिंर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः।

पृथिव्यां पृष्टिंर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यैं। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥

यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषः। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आर्ण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपाद्श्चतुंष्पादः। अपादं उदरसर्पिणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंसुर् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंसुर् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीसुर् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यचं मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वेण् १ हरितम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४०॥

[ξ]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गृन्धर्वाफ्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सलिलान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्संलिलान्। स्थावराः प्रोष्यांश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिर् सर्वान्ध्वर्सान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरींचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थस्तनियुत्न्। हादुनीर्यचं शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्रसुच्रं च यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षंन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचाऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्षसि सर्वाणि॥४४॥

अन्तरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्नि॰ सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४५॥

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिवि। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दथे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। यावंती्स्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूरंषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सुप्देवजुनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये च लोका ये चौलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाङ्श्च केवेलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४८॥

ऋचां प्राचीं महती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्।

अर्थवणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्रामुदींची महती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्विह्न दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहः। सामुवेदेन उस्तम्ये महीयते। वेदैरशूँ न्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता र संविशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिर्याजुषी हैव शश्वंत्॥४९॥ सर्वं तेर्जः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्वर् हेदं ब्रह्मणा

है्व सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्ं। सामुवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः।

श्वतं वर्षसहस्राणि। दीक्षिताः सुत्रमासत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। स्त्यः ह् होतैंषामासींत्। यद्विंश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूतः हं प्रस्तोतेषामासीत्। भृविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदः सर्वः सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्त्वा उपगातारः। स्दस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररसद्वह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजांनमुदंवहत्। ध्रुव्गोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्राव्यणः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नींद्राद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवा-यंजथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूतिरिपनड्डुविः॥५३॥

ड्रध्मः ह् क्षुचैभ्य उग्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वार्गेषाः सुब्रह्मण्याऽऽसीत्। छुन्दोयोगान् विजानती। कुल्पतन्त्राणि तन्वानाऽहंः। स्र्र्स्थाश्चं सर्वेशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यो। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पर्तिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन् यन्तः। ततों ह जज्ञे भुवनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नाम। येन सूर्यस्तपंति तेर्जसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावेदिवन्मन्ते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कर्नीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतंस्त्रिवृतंः संवथ्सराः। पश्चंपश्चाशतंः पश्चद्रशाः। पश्चंपश्चाशतंः पश्चद्रशाः। पश्चंपश्चाशतं एकविर्शाः। विश्वसृजारं सहस्रंसंवथ्सरम्। एतेन वै विश्वसृजं इदं विश्वमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्माद्विश्वसृजंः। विश्वमेनाननु प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यर सलोकतां यन्ति। एतासांमेव देवतांनार् सायुंज्यम्। सार्षितारं समानलोकतां यन्ति। य एतद्रंप्यन्तिं। ये चैन्त्प्राहुंः। येभ्यंश्चैन्त्प्राहुंः॥५६॥ ॐ॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हिर्रः ॐ॥